नवम स्थापना
दिवस पर
विशेष प्रस्तुति

आधुनिक संस्कृत साहित्य में सामाजिक दृष्टि

GLOBAL SANSKRIT FORUM
वैश्विक संस्कृत मञ्च
यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्

प्रधान सम्पादक
प्रो. मुरली मनोहर पाठक

सम्पादक
प्रो. विष्णुपद महापात्र
डॉ. राजेश कुमार मिश्र

सह-सम्पादक
डॉ. बिंदिया त्रिवेदी

आधुनिक संस्कृत साहित्य में सामाजिक दृष्टि

अमृतब्रह्म प्रकाशन

Amritbrahma Prakashan

प्रयागराज

आधुनिक संस्कृत साहित्य में सामाजिक दृष्टि

प्रधान सम्पादक

प्रो. मुरली मनोहर पाठक

सम्पादक

प्रो. विष्णुपद महापात्र

डॉ. राजेश कुमार मिश्र

सह-सम्पादक

डॉ. बिंदिया त्रिवेदी

प्रकाशक

अमृतब्रह्म प्रकाशन

प्रयागराज

ISBN: 978-81-973364-4-7

प्रकाशक

अमृतब्रह्म प्रकाशन

63/59, मोरी, दारागंज, प्रयागराज – 211006

सम्पर्क +91-9450407739, 8840451764

Email: amritbrahmaprakashan@gmail.com

आधुनिक संस्कृत साहित्य में सामाजिक दृष्टि

प्रधान सम्पादक: प्रो. मुरली मनोहर पाठक

सम्पादक : प्रो. विष्णुपद महापात्र, डॉ. राजेश कुमार मिश्र

सह-सम्पादक : डॉ. बिंदिया त्रिवेदी

© ग्लोबल संस्कृत फोरम, नई दिल्ली

प्रथम संस्करण : 2025

मूल्य : 999/-

The responsibility for facts stated, opinion expressed or conclusion reached and plagiarism, if any, in this book is entirely that of Author. The publisher/Editors/Editorial Board bears no responsibility for them whatsoever.

मुद्रक

Infinity Imaging Systems

नई दिल्ली

प्रो.बिष्णुपदमहापात्रः
आचार्यः , न्यायविभागः अद्वैतवेदान्तविभागाध्यक्षश्च
श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः
(केन्द्रीयविश्वविद्यालयः)
नवदेहली-११००१६

शुभाशंसा

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।(ऋग्० १०/१९१/४)
अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिवाम् ॥(अथर्व.३/३०/२)"

भारतीयसंस्कृतेः वैशिष्ट्यं तावत् समाजस्य देशस्य राष्ट्रस्य च सर्वविधसमुन्नत्यै विचारसाम्यं मतैक्यं सामञ्जस्यं च सततमभीष्टं विद्यते। एवञ्च पारिवारिकाभ्युदयाय मातृपितृगुरुशुश्रूषा पितृनिर्देशानुसरणं मातृभक्तिः पतिपरिचरणं च इप्सितं वर्तत इति इयं भारतीयासंस्कृतिः स्पष्टयति श्रुतिः। ऋक-साम-यजुष्-अथर्वेति वेदादिचतुष्टये तच्छाखाग्रन्थेषु च या भाषा प्रयुक्ता सा वैदिकभाषेति नाम्ना व्यवह्रियते। वाल्मीकि-वादरायण-कालिदासादिकाव्येषु या संस्कृतभाषा सा लौकिकसंस्कृतनाम्ना अभिधीयते। भाषा ज्ञानमूला भवति। प्रतिभावशात् तदर्थं कश्चन शब्द उपादीयते। तदुत्पत्तिः प्राक् संकेतमूला भवति। वस्तुप्रयोजनमुपादाय कश्चन शब्दः तदर्थमभिधातुमुपादीयते। प्रतिभावतां तथा शब्दनिर्माणं क्रियते। सामान्यो लोकस्तं शब्दमादत्ते प्रयुङ्क्ते च। एवं भाषोत्पत्तिः प्राक् संकेतमूला भवतीति अभिधातुं शक्यते।

संस्कृतिस्तावत् जीवनस्यान्तरङ्गस्वरूपं प्रकाशयति। मननं चिन्तनं दार्शनिकदृष्टिः मनोवैज्ञानिकमन्वेषणं दार्शनिकविश्लेषणं

कर्तव्याकर्तव्यनिर्णयः जीवनोत्कर्षाधायकतत्त्वानां गवेषणं समष्टेः व्यष्टेश्च स्वरूपं जीवनस्योद्देश्यं लक्ष्यं लोकव्यवस्थितेः साधनानि प्रकृतिपुरुषयोर्भेदाभेदविवेचनञ्च सर्वमेतत् संस्कृतिशब्देन संगृह्यते। संस्कृतिरेवैषा सततं चेतः प्रसादयति, मनोऽमलीकुरुते, दुर्भावान् दमयते, दुर्गुणान् दारयति, पापान्यपाकुरुते, आधिभौतिक-आधिदैविक-आध्यात्मिकदुःखद्वन्द्वानि दहति, ज्ञानज्योतिर्ज्वलयति, अविद्यातमोऽपहति, भूतिं भावयति, सुखं साधयति, धृतिं धारयति, गुणानागमयति, सत्यं स्थापयति, शान्तिं समादधाति, ऐश्वर्यञ्च प्रयच्छति। न केवलमेषोपकर्त्री व्यष्टेरपितु समष्टेरपि जीवनभूता। उपकरोति चैषाऽऽत्मनो मनसो लोकस्य राष्ट्रस्य विश्वस्य संस्कृतेश्च। एतत् सर्वं भारतीयभाषायाः संस्कृतेश्च महत्त्वं नितरां प्रकाशयतीति मनसि निधाय वैश्विकसंस्कृतमञ्चेन **'आधुनिक संस्कृत साहित्य में सामाजिक दृष्टि'** ग्रन्थकुसुमाञ्जलिः प्रकाश्यते इति मोमुद्यते मे मनः। विशेषतः वैदिकभाषायां लौकिकभाषायां भारतीयसंस्कृतौ च विद्यमानानि यानि सामाजिकाभ्युदयतत्त्वानि वैज्ञानिकतत्त्वानि च विद्यन्ते तेषां तत्त्वानां समाजोन्मुखीकरणम् अनेन ग्रन्थरत्नेन भविष्यतीति मे भाति। एतदर्थं ग्रन्थरत्नसम्पादकेभ्यः सहसम्पादकेभ्यः सहयोगिभ्यश्च भूरिशः धन्यवादाः शुभाशीर्वादाश्च प्रदीयन्ते। अनेन संस्कृतजगति निगूढतत्त्वानां समुद्घाटनाय एतेषां सम्पादकानां शरीर-वाग्-बुद्धि-मनांसि सततं सुस्थतामेकरूपतां च प्राप्नुयुरिति भगवन्तं विश्वनाथं सम्प्रार्थ्य विरमामीति शम्।

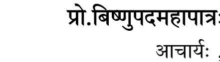

प्रो.बिष्णुपदमहापात्रः
आचार्यः ,
न्यायविभागः अद्वैतवेदान्तविभागाध्यक्षश्च
श्री.ला.ब.शा.रा.सं.विश्वविद्यालयः

संपादकीय

भारतस्य प्रतिष्ठे द्वे संस्कृतं संस्कृतिस्तथा' संस्कृत के क्षेत्र में कार्य करना यज्ञ करने के समकक्ष है। विद्वानों के प्रति आभार ज्ञापित करते हुए पुलकित हृदय से यज्ञ की सम्पन्नता का फल यह पुस्तक संस्कृत समाराधकों को समर्पित कर रहा हूँ।

"आधुनिक संस्कृत साहित्य में सामाजिक दृष्टि" इस विषय पर ग्लोबल संस्कृत फोरम, दिल्ली प्रान्त के एकक तत्त्वावधान में 17, 18 और 19 मई 2024, को आयोजित तीन दिवसीय अन्ताराष्ट्रिय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। संस्कृत प्रेमियों के लिए यह हर्ष का विषय है कि देश-विदेश से प्रतिष्ठित विद्वानों ने इसमें प्रतिभाग लिया। उनके द्वारा प्रस्तुत शोध-पत्रों का यह संकलन पुस्तक रूप में हमारे समक्ष है। इस पुस्तक में संस्कृत साहित्य के विविध पहलुओं पर बहुमूल्य लेख, शोधपत्र और विचार संकलित हैं। शोधपत्र अंग्रेजी, हिंदी और संस्कृत में लिखे गए हैं तथा इनमें प्रख्यात विद्वानों का योगदान है। संगोष्ठी ऑनलाईन तथा ऑफलाईन दोनों माध्यमों से सम्पन्न हुई। संगोष्ठी में उपस्थित देश से आए हुए विद्वानों ने दोनों ही प्रकार से शोध पत्र प्रस्तुत किया अपने अद्भुत अनमोल अद्वितीय विचारों को अभिव्यक्त किया। देश- विदेश के प्रतिष्ठित शैक्षणिक संस्थानों से विद्वानों ने इसमें उत्साह से प्रतिभाग लिया। सभी के वैचारिक तथ्यों का संकलन इस पुस्तक के माध्यम से आज हमारे समक्ष है यह अत्यंत हर्ष की बात है कि यह संगोष्ठी केवल वाचिक

प्रस्तुति न रही अपितु पुस्तकाकार में हमारे समक्ष है। आशा है कि यह कृति युवा विद्वानों को गहन शोध के लिए अभिरुचि विकसित करने के लिए प्रेरित करेगी।

डॉ. राजेश कुमार मिश्र
महासचिव, ग्लोबल संस्कृत फोरम एवं
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग
नव नालन्दा महाविहार
संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार

विषयानुक्रमणिका

क्र	आलेख	लेखक/लेखिका नाम	पृ.सं.
1.	REVISITING THE SANSKRIT LITERATURE IN THE WORKS OF PROF. DIPAK KUMAR SHARMA	Dr. Nurima Yeasmin	13
2.	डॉ. योगिनी हिमांशु व्यास का व्यक्तित्व और आधुनिक संस्कृत लघुनाटकों में उनका प्रदान	Dr. Jaysuryaben B. Sodha	22
3.	आधुनिक साहित्य में संदेश काव्य	प्रा. डॉ. सोलंकी मंजुलाबेन नाथाभाई	32
4.	Dr. Maheswar Hazarika's ŚrīmantaShaṇkaradevacharitam - A review	Dr. Nandita Sarmah	43
5.	PROFESSOR DIPAK KUMAR SHARMA'S BHĀRATI VṚTTI: A REVIEW	Dr. Nilakshi Devi	50
6.	GLIMPSES OF PRAKĀMAKĀMARŪPAM- A WORK OF ĀCĀRYA MANORAŇJAN ŚĀSTRĪ	Dr. Arundhati Goswami	57
7.	आचार्य अमृतलाल भोगायता का व्यक्तित्व एवं कृतित्व	डॉ. अमिषा हर्षलभाई दवे	69
8.	डॉ. निरञ्जन मिश्र की कृतियों में सामाजिक दृष्टि के अन्तर्गत पुरुषार्थ चतुष्ट्य	डॉ. आशीष कुमार	78
9.	गढ़वाल परिक्षेत्र के आधुनिक संस्कृत साहित्यकार	अंशुल	83
10	डॉ. निरंजन मिश्र के काव्य में सामाजिक चित्रण	प्रज्ञा	92

11	पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी: व्यक्तित्व और कृतित्व	Vishal Goswami & Dr. C.V. Baldha	100
12	पंडिता क्षमाराव का जीवन परिचय एवं उनकी रचनाएँ	डॉ० मंजु लता	108
13	प्रो. पुष्पा दीक्षित का व्यक्तित्व एवं कृतित्व	डॉ. चन्द्र भूषण	115
14	डॉ. बालाजी तांबे: व्यक्तित्व और कृतित्व	शुभम राय	129
15	भारत के विशिष्ट योगी	Vishal Goswami& Dr. C.V. Baldha	141
16	लोकनायक बापुजी अणे की कृति में सामाजिक दृष्टि	डॉ. दर्शना सायम	151
17	राममन्दिर निर्माण में जगद्गुरु रामभद्राचार्य का योगदान	शिखा त्यागी	161
18	साहित्य सेवी डॉ.योगिनी व्यास की जीवन मूल्य एवं बोध प्रधान लघुकथाओं का विहंगावलोकन	डॉ. खुशबू प्रतीक मोदी	167
19	“हर्षदेव माधवकृत ‘तथास्तु’ काव्य में सामाजिक विद्रूपता का दर्शन”	जानी वन्दना यज्ञप्रकाश	174
20	हर्षदेवमाधवस्य कतिपयानां कृतीनां समीक्षा	जगदीशनन्दः	187
21	अभिराज राजेन्द्र मिश्र कृत अभिनव पञ्चतन्त्र में सामाजिक दृष्टि	विनिता	192
22	प्रो. भागीरथि नन्द का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्त्व	विनिता पारस	199
23	आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी का जीवन परिचय एवं कर्तृत्व	निशी	206
24	आधुनिक संस्कृत साहित्य का कालखण्ड तथा तत्कालीन	प्रोफेसर शुचिता लालचंद दलाल	217

	सामाजिक परिवर्तन: एक दृष्टिक्षेप		
25	अनन्तलालठाकुरमहोदयस्य व्यक्तित्वं कृतित्वञ्च	सुफलमोदकः	221
26	आधुनिक संस्कृत साहित्य में श्री ईशदत्त शास्त्री कृत प्रताप विजय	कुसुमलता टेलर	230
27	भाषा: एक सांस्कृतिक वातायन	डॉ. एकता वर्मा	235
28	बीसवीं शताब्दी के लघुकथाकारों की कृतियों में वर्णित स्त्री दशा एवं दिशा: एक अवलोकन	डॉ. उपासना सिंह	248
29	आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व	श्री मुकेश कुमार शर्मा श्रीमती रूकमणी शर्मा	257
30	ग्रन्थिबन्धन महाकाव्य में कुप्रथा-दहेज का समाधान	अनीका गोला	276
31	जगद्गुरु रामभद्राचार्य का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व	कु. भारती रानी	285
32	साम्प्रतिक संस्कृत रचनाधर्मिता: एक विवेचना	डॉ. अर्चना सिन्हा	290
33	याज्ञसेनी की पञ्च प्रार्थनाओं में निहित सामाजिक दृष्टि	प्रो. पूनम लखनपाल	303
34	महावीर प्रसाद आचार्य का जीवन वृत्त एवं कृतित्व	वीना रानी	311
35	“मानव जीवन मे गायत्री महामंत्र का अवदान”	डॉ. गौरी चावला	321
36	अर्वाचीन-संस्कृतसाहित्येषु सामाजिक-दृष्टिः	विद्वान मञ्जेश एम्	337
37	प्रो. रवीन्द्रकुमारपण्डामहोदयस्य व्यक्तित्वं कृतित्वं च श्रीसयाजिगौरवमहाकाव्ये समाजिकदृष्टि:	पण्ड्या हार्दिक: विजयकुमार:	344

REVISITING THE SANSKRIT LITERATURE IN THE WORKS OF PROF. DIPAK KUMAR SHARMA

Dr. Nurima Yeasmin
Assistant Professor
Department of Sanskrit (*Sāhitya)*
Kumar BhaskarVarma Sanskrit and
Ancient Studies University, Nalbari

Introduction:

It is difficult to write about a great man without having much knowledge on him, He is a great Sanskrit scholar of the stature of Prof. Dipak Kumar Sharma. He has deep knowledge on Sanskrit Literature and Indian knowledge system. He was born on 1st Feb 1961, in the village named Sandheli, Nalbari District, State Assam. He is a very noble man. He has authored more than 17^{th} books, 45 research papers and 115 articles till now. Prof. Sharma was awarded the Sahitya Academy Award in 2018 for his great work 'Asama Vanmanjari' which contains a collection of 100 Assamese poems translated into Sanskrit. Prof. Sharma has also the experience of working in administrative activities in Gauhati University. He became the founder Vice-Chancellor of Kumar Bhaskar Varma Sanskrit and Ancient Studies University, Nalbari, one and only Sanskrit university in the NE Region in the year, 2011.

Key words - translation, Sanskrit, Assamese, knowledge.

Educational Life :

Prof. Sharma was a brilliant student of Debiram Pathsala Higher Secondary School, Nalbari. In HSLC exam he got 1^{st} division securing distinction marks in three

subjects, stood fourth in order of merit in P.U. exam.He secured highest aggregate of marks in B.A. exam, amongst the honours students of all subjects. He stood 1st class 1st in M.A. (Sanskrit) exam from Gauhati University. A recipient of a number of gold medals and awards, he has to his credit a good number of research paper published in various journals as well as many articles in Assamese, English and Sanskrit in various newspapers, and Periodicals. He has participated and chaired many a sessions of so many National and International seminars and conferences in India and abroad, four researchers have so far been awarded the M.Phil. Degree and fourteen researchers have been awarded Ph.D. Degree of Gauhati University under his Supervision.

Prof. Sharma has made significant contributions to Sanskrit literature through his Scholarly work, research and publications. While specific details about his contributions may be difficult to assess of his works and areas of expertise. Prof. Sharma's writing may be classified in the following way.

1.Sanskrit Bhasya
2.Translation - From Sanskrit to English and also from Assamese to Sanskrit.
3. Academic writing in Sanskrit
4.Creative Writing

Here I am going to discuss about his works briefly. First I discuss about his Sanskrit Bhasya writings. Prof. Sharma wrote two **Sanskrit Bhasyas**. One was on Ksemendra's Suvrittatilakaand another on Bhavadera Bhagavati's Sati Jayamati.

Ksemendra's Suvrittatilaka:

The Suvrittatilaka is an outstanding treatise on classical Sanskrit metres. authored by Ksemendra. He was a profile writer of Sanskrit, who advocated for the theory of

Aucitya which in his considered opinion, constitutes the essence of poetry. The Suvrittatilaka is divided into three chapters called Vinyasas the first chapter is devoted to discussions on the features of various types of metres and the second one aims at pointing out the merits and demerits of various metres. The third chapter deserves special attention for the fact that here in the author introduces an interesting discussion on the application at various types of metres on the consideration of their suitability to various rasas.

Prof. Sharma wrote a Sanskrit Bhasya named Bharativritti on this Suvrittatilaka. The vritti is named after his mother. A few verses are there at the beginning and also at the end .[1] In this edition English renderings of the texts, besides and Index of the karikas and the verses.

Sati Jayamati:

This is a Sanskrit Kavya of Pandit Bhavadeva Bhagavati, edited with Assamese and. English translation. Prof. D.K. Sharma wrote a Sanskrit commentary called Navina Vritti and an Index. The Sati Jayamati is divided into three cantos called pravahas . The first canto comprising 27 verses, serves as an introduction to thestory and it deals with the early history of Assam. The second canto consisting of 31 verses narrates the marriage of Gadapani, an Ahom Youth, with Jayamati. The description of their happy conjugal life leading to the birth of the two sons namely Lai and Lechai, forms the themes of this canto. The 3rd canto (प्रवाह) consisting of 42 verses, is the biggest in size and it describes the episodes of Gadapanisrunning away as he was threatened to be killed by the king. The vritti is named after his father. Nine verses are placed at the beginning.[2]

2.Translated books

1) From Sanskrit to English and Assamese

Prasnottara Ratna Malika:

Prasnottara Ratna Malika by AdiShankaracharya is one of the supreme texts of India framed in the model of question and answer. This book is full of wisdom told in question and answer for personality development and for liberation the work contains of questions and answers. The Assamese translation work was done by Prof. Sharma. Unique thing about philosophical literature of the country is that they are not preachy but Practical and treat all the beings as equal. Bhartrihari Biracita Satakatraya - There are three Satakas written by Bhartrihari named as- Nitisataka, Sringarasataka and Vairagya Sataka. These three stakasatakas of Bhartrihari was translated by Prof. D.K. Sharma into Assamese.

The Vivekacudamani of Sankaracharya:

This is a book of Sankaracharya the text with Assamese translation, Introduction, Notes along with the Brahmajnanavalimala and the Jivanmuktanandalahari by Prof Sharma .This book was published by Publication Board of Assam in the year 2021. The book contains a long introduction speaking the depth of scholarship of Prof. Sharma. Besides, the notes are very useful for the readers.

Sri Durgasaptasati:

The Dungasaplasati is one of the important and famous treatises, which have been occupying a very high position in the mind-set of the devout Hindus in general and the Saktas in particular. This book, more popularly known as the Sricandi also, is not an independent work. Thirteen chapters (81-93) of the Markandeyapurana, constitute what has come to be known as the Durgasaptasat The content of this set of thirteen chapters of the said purana are arranged in seven hundred (Saptasata) mantras and hence it has been entitled as such. The English

translation was done by Prof. Sharma. Till now, three editions of this translated book have come out.

Vrittamala of Kavikarnapura:

The Vrittamala is a work on Sanskrit prosody authored by Kavikarnapura, a poet patronized by king Narananaya of Assam. As in Some other works on metre, herein also, a metre is defined first and then it comes to be followed by an illustrative verse. Though not voluminous in size, as Kaviarnapuradeals with a few select metres only, the Vrittamala maintains its singularity in various ways. The English translation of the book was done by Prof. Dipak Kr. Sharma. The introduction of the book is very informative. Two editions of the book have come out till now.

Kahua (Ikshugandha):

This book Ikshugandha is a book of short stories, which won the Akademiawand. This was written by Abhinaj Rajendra Mishka and translated to Assamese by Prof. Sharma. The Assamese translation is named Kahua, which was published by Sahitya Akademi in 2021.

Academic writing in Sanskrit:

Sanskrit-Nibandha-Nicayah-

The Sanskrit-Nibandha-Nicayah is an academic writing of Prof. D.K. Sharma in Sanskrit. This is a collection of thinly articles in Sanskrit. In this book we found various articles tika on Bhaktiviveka, Abhijna Sakuntalam, Kamrupam, Bhagavata, Ankiyanataka, Prabodhacandrodaya, Dipawali, Holi, Prakamakamrupam, Ratnavati, etc.

Translation into Sanskrit:

Asama Vanmanjari:

It is an anthology of one hundred Assamese poems translated into Sanskrit by Prof. Sharma. The introduction of the book contains an exhaustive discussion on Assamese poetry. He was awarded with the Sahitya Academy Award for this book. I may mention the famous Assamese poem of

Debakanta Barua i.e. "Sagara Dekhisa ne" in Sanskrit version and so many others.[3]

सागरो दृश्यते किम्

(सागर देखिछ-देवकान्त बरुवा)

सागरो दृश्यते किम्? न दृष्टः कदापि ? मयापि न दृष्टः, श्रूयते तथापि नीलिमः सलिलराशिः, बाधाहीनोर्मिमाला शोभेते सुदूरं दिगन्तावधिः। ममेदं हृदयं सागरवत् नीलम्, वेदनया न दृश्यते त्वया? उत्तिष्ठन्ति चावरोहन्ति वासनायाः लक्षतरङ्गाः, तवैव स्पृष्ट्वा स्मृतिसीमाम्। न श्रूयते? ममैव सागरे न श्रूयते त्वया झञ्झायाः उत्तप्तं सङ्गीतम् ? नावगम्यते? नानुभूयते वा उद्याने वसन्तस्य कोमलमिङ्गितम् ? अवलोक्यते किमिन्द्रधनुः? वर्षाणां जलधरे आलोकस्य मोहनगौरवम्, प्रेमालोकोद्दीप्ते मदीये हृदयाकाशे दृश्यते किं वर्णानां महोत्सवः? मध्यरात्रौ जागरित्वा श्रूयते किं केतेक्याः हृद्भेदी करुणनिःस्वनः? चिन्त्यते किं न्वेकवारं विहगकण्ठे क्रन्दनं कथं इत्यादयः।

Narakasuram:

The drama Narakasuram was written by Atul Chandra Hazarika in Assamese. Prof. Sharma translated it into Sanskrit with lucidity. It was published in 2020 by Publication Board, Assam.

Bhaskaracaritam:

The Bhaskaracaritam is a Sanskrit Kavya composed by Prof. Dipak Kumar Sharma on the life of the king Kumar Bhaskar Varma, who ruled the ancient Kamarupa i.e. present the Assam during the 7th century A.D. The book is composed in Anustupmetre and consist of 222 verses. The book contains poetic description of the Brahmaputra, the natural beauty of Assam, the forefathers of Bhaskar Varma and Bhaskara's friendship with

Hiuentsang. This kavya is historical in nature. The poet has collected necessary historical inputs from so many ancient as well as modern texts. At the same time the poetic elements of the kavya is certainly praiseworthy. Various alamkarassabda and artha and use of kavisamayas add to the literary importance of the book. The book is with a self introduction of the poet at the end of the book like a traditional Sanskrit writer.

Bhaskariyam:

It is a Sanskrit translation of the Assamese drama named Bhaskar Barma written by Daiba Chandra Talukdar. It has been published in 2023 by Publication Board, Assam.

Conclusion:

Prof. Dipak Kumar Sharma's contribution to Sanskrit Literature likely span a wide range of areas, encompassing research,teaching, publication, promotion and preservation.His dedication to the field has likely advanced scholarly discourse and fostered a deeper appreciation for the richness and diversity of Sanskrit Literary tradition.

References:

1. a)
अत्रसमाप्यतेवृत्तिर्भारतीतिमयाकृता।सुवृत्ततिलकस्ययत्क्षेमेन्द्ररचितंपुरा।।
काश्मीरकविमूर्धण्यंबहुशास्त्रप्रणेतारम्।कामरूपवासीस्तौमिकुमारशर्मदीपकः।।

b) देवभूमिनिवासिनंनवीनचद्रशमर्माणम्।
भारद्वाजंप्रणम्येहपितरंहृदिसंस्थितम्।।१।।

2. जननींकामिनीदेवींनत्वास्नेहमयींशुभाम्।
गुरुभ्योनिश्चलाभक्तिसन्निवेद्यैवनिर्मलाम्।।२।।
श्वशुरञ्चदिवङ्गतंसुरेन्द्रनाथशर्माणम्।
श्वश्रूश्चविजयादेवींप्रणम्यधर्ममातरम्।।३।।

सतीजयमतीत्यस्यसरलार्थःसुकाव्यस्य।नवीनावृत्तिसंज्ञक :
विरच्यतेऽधुनामया।।४॥
यद्यपिविद्यतेनैवकाचिदवृत्तिःपुरातनी।
पितुःस्मृत्वाशुभंनामनदीनेतिकृताभिधा।।५।।
पण्डितंभवदेवाख्यंभागवतीकुलोद्भवम्।
नमामिशिरसाकविंभारद्वाजस्तुदीपकः।।६।।
रसास्वादायतत्कृतेःसुखार्थबोधनायच।
विद्यार्थिनांविशेषत : काव्यरसपिपासूनाम्।।७॥
वृत्तिविरचनंकर्मदुष्करंज्ञानसापेक्षम्।
करोमिप्रकटीकृत्यमदीयंबुद्धिदारिद्र्यम्।।८।।
गुणतुष्टा : स्वयंप्राज्ञानास्त्यत्रकोऽपिसंशय: ।
वदन्तुममकेवलंदोषान्तदेवकाम्यते।।९॥

3. Asama Vanmanjari, page, 51-52

Bibliography:-

1 .Sati Jayamati of BhavadevaBhagavati, BaniPrakash Publication, Guwahati,2005
2. Suvrttatilaka of Ksemendra, New Bharatiya Book Corporation, Delhi, 2007
3 .Durgasaptasati,of Prof. D.K.Sharma, New Bharatiya Book Corporation, Delhi, 2022
4. Varttamala of Kavikarnapura, New Bharatiya Book Corporation, Delhi 2018
5.Vivekacudamani of Sankarachary, PramodKalita, Secretary, Publication Board Assam, 2021
6.BhartrhariBirachitaSatakatraya, SahityaAkademi, New Delhi 2019
7. .PrasnottaraRatnaMalika,by Sri SankaraBhagavatpada,SahityaAkademi, New Delhi ,2019
8 .Kohuwa, AbhirajRajendraMisra,SahityaAkademi,2021
9 .Sanskrit NibondhaNichay,by Prof. DipakKr.Sharma, AijeePrakashan, Guwahati,2015

10.Narakasuram,edited by Prof. DipakKr.Sharma, Assam PrakashanParishad, Guwahati2020

11.Asama Vanmanjari,by prof. Dipak Kr. Sharma,NewBharatiya Book Corporation,New Delhi,2015

डॉ. योगिनी हिमांशु व्यास का व्यक्तित्व और आधुनिक संस्कृत लघुनाटको में उनका प्रदान

Dr. Jaysuryaben B. Sodha
Assistant Professor, Sanskrit Department
N.S.Patel Arts (Autonomous) College
Ananad, Gujarat-India

डॉ. योगिनी व्यास का जन्म अहमदाबाद में २०/१२/१९५७ को विद्यादात्री माता सरस्वती देवी के उपासक, भारतीय संस्कृति की ज्योत को सदा प्रज्ज्वलित रखने वाले गुजरात के संस्कृत जीवन के उद्गाता, ऋषितुल्य व्यक्तित्व को धारण करने वाले प्रो. डॉ. भगवतीप्रसाद पंडया के यहाँ हुआ था। बाल्यकाल से ही वैदिकसूक्त के मंत्र महर्षि पाणिनी के सूत्र, श्रीमद्भागवदगीता तथा श्रीमद्भागवतपुराण के श्लोकादि एवं विविध स्तोत्रो का एकाग्रतापूर्वक श्रवण करके कंठस्थ करने लगी थी।

शिक्षण:

प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षण अहमदाबाद स्थित मणिनगर विस्तार की प्रतिष्ठित शाला में और उच्चशिक्षण एच.के. आर्ट्स कॉलेज से प्राप्त किया। उसके बाद भाषा-साहित्य-भवन गुजरात युनिवसिर्टी से 'अलंकारशास्त्र' के साथ एम.ए (M.A) का अभ्यास सुवर्णचन्द्र के साथ प्राप्त किया।

'भामह कृत काव्यालंकार- विवेचनात्मक अध्ययन' विषय पर विधावाचस्पति की उपाधि प्राप्त की। सन्- १९९१ से गांधीनगर की सुप्रतिष्ठित 'उमा आर्ट्स एवं नाथीबा कोमर्स महिला कॉलेज' में संस्कृत विषय के अध्यक्षा तथा अनुस्नातक विभाग के प्रो. इन्चार्ज के रुप में सुदीर्घ एवं प्रशंसनीय शैक्षणिक सेवाओ का प्रदान करके सन-२०२० मे निवृत हुई।

सर्जन:-

ब्रह्मनिष्ठ, ज्ञानमूर्ति, मनिषी गुरुजनों के सानिध्य में अहर्निश सरस्वती की आराधना तथा अथाह परिश्रम से २० से अधिक पुस्तको का प्रकाशन किया। उसमें, भारतीय मूल्यो को उजागर करके संस्कृत वार्ता संग्रहो, बोधप्रदान, संस्कृत नाटय संग्रहो, वैदिक साहित्य संशोधन संग्रह, विवेचन ग्रन्थो, अनुवाद ग्रन्थो, स्तोत्र काव्य, आस्वाद ग्रन्थ, लेखसं ग्रह- ग्रन्थ का एवं संपादन कार्य- ऐसे ही संस्कृत वाङ्ग्मय की वैविध्यपूर्ण विधाओ में सर्जनकार्य किया। साथ ही पञ्च पुस्तक संस्कृत भाषा में भी प्रकाशित किये है-

१) संस्कृत-नैवेधम्

२) चर्पटपज्जरिका स्तोत्रम्

३) काव्यादर्श

४) एवं ' આખ્યાનો ની ગંગોત્રી: વેદો'

यह चर्तुथ ग्रन्थो को 'गुजरात राज्य साहित्य अकादमी' के द्वारा ' श्रेष्ठ पुस्तक' अर्वाड से पुरस्कृत भी किया गया है।

संशोधन लेख:-

प्रा. डॉ. योगिनी व्यास के अभ्यास- यात्रा के दौरान ही २०० से ज्यादा संशोधन लेख, अभ्यास लेख राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय कक्षा से प्रतिष्ठित जर्नल्स में प्रकाशित हुए है। जिसमें, 14 लेख यु.एस.ए, जर्मनी, इटली, तथा जोर्डन से प्रकाशित किये गए है। 30 लेख वाराणसी, पूना, केरल, उज्जैन दिल्ली से प्रकाशित किये गए है। 25 लेख राज्य के सामायिको में, 25 लेख पुस्तको में अध्याय के स्वरुप में तथा 12 लेख अभिनंदन ग्रन्थो में(Selection Volumes) में प्रकाशित हुए है। इसमें से ही कुछ लेखो को साहित्यक रचनाएँ, दिल्ली संस्कृत अकादमी, उतराखंड- संस्कृत अकादमी, विक्रम

विश्वविधालय उज्जैन तथा वेद विज्ञान अकादमी द्वारा पुरस्कृत हुए है।

पुरस्कार और सम्मान:-

जीवन पर्यन्त स्वाध्याय यज्ञ के अनुष्ठान एवं संस्कृत वाङ्मय की अद्वितीय सेवा के फ़ल स्वरुप डॉ. योगिनि व्यास को कुल 35 पुरस्कारों की उपलब्धि हुई है। जिसमें गुजरात राज्य के प्रतिष्ठित "संस्कृत गौरवपुरस्कार:" गुजरात राज्य के राज्यपाल डॉ. ओम प्रकाश कोहली के द्वारा सन्. २०१९ में प्राप्त हुआ। अचला एज्युकेशन फाउन्डेशन ट्रस्ट से सारस्वत सम्मान- 'श्रेष्ठ संशोधन सम्मान', गुजरात राज्य के पूर्व माननीय मुखमंत्री श्रीमती आनंदीबहन पटेल से उद्गम चेरीटेबल ट्रस्ट से 'Woman's Achiever Award', कांची कामकोटि पीठ के श्री जयेन्द्र सरस्वती स्वामीजी से 'Teaching and propagating Sanskrit सम्मान तथा अन्य पुरस्कार प्राप्त हुए है।

शिक्षण के विविध क्षेत्र में प्रदान:-

U.S.A, Moreshes Bangkok जैसे देशो में 'देवभाषा संस्कृत' में अस्खलित धाराप्रवाह से विदेशी विद्वानो को मंत्रमुग्न्ध करने वाले प्रो, डॉ. योगिनी व्यास ने भारत में समायोजित अनेक अधिवेशन, परिसंवाद, संगोष्ठी, कवि संमेलनो में Key Note Speaker, सारस्वत विशेष तथा मुख्य अतिथि रुप में व्याख्यान दिए है। ग्रामीण महिला कोलेज की असंख्य विधार्थीयों को 'मूल्यनिष्ठ शिक्षण' तथा संस्कृत संभाषाण का प्रचार, १२ छात्राओं को Ph.D का मार्गदर्शन 'बायसंग' संस्था से संस्कृत के विविध कार्यक्रमों मे जीवंत प्रसारण दिया है।

Bangkok की Silpakorn university **में** (Universal Prosperity In Vedic Literature) पर सुंदर व्याख्यान एवं सामायोजित कवि संमेलन में समग्र भारत देश का प्रतिनिधत्व, मॉरीशस के रामायण- सेन्टर में 'Harmony and Pease in Valmiki Ramayana' के विषय पर गुजरात राज्य का प्रतिनिधित्व,

विद्यामृतवर्षिणी पाठशाला- वलसाड में दर्शनशास्त्र विषयक व्याख्यानों का, स्वाध्याय किल्ला मंडल- पारडी में वैदिक शोध-पत्रो का, उज्जैन- सांचोर- जयपुर- कुरुक्षेत्र- कोलकाता, विदिशा, जबलपुर, हरिद्वार, वाराणसी, दिल्ली, तिरुपति, पूना, आदि शहेरों में आयोजित संगोष्ठिओं में एवं कविसं मेलनो में प्रस्तुति, रेडियो- आकशवाणी से प्रसारित संस्कृत- शिक्षण के पाठों में 'भगवती प्रसाद पंडया के शिष्या के रुप में कामगीरी, शुक्ल यजुर्वेद का गुजराती अनुवाद, विद्वत्परिषद् के सभ्य के रुप में कामगीरी, हिन्दू रिसर्च फाउंडेशन हिम्मतनगर द्वारा आयोजित 'विश्वभाषा साहित्य और रामकथा' अन्तरराष्ट्रीय परिसंवाद में Keynote Speaker, स्वामि समपर्णानन्द वैदिक शोधसंसाधन- उत्तर प्रदेश से आयोजित 'गोपथब्राह्मणे विविध ज्ञानविज्ञानम्' अन्तरराष्ट्रीय परिसंवाद में विशिष्ट व्याख्यान, दिल्ली- संस्कृत- अकादमी से आयोजित अखिल भारतीय संस्कृत मौलिक लघुकला- लघुनाटक- समस्या पूर्ति आदि कार्यक्रमो में एवोर्ड से पुरस्कृत एवं गुजरात राज्य की लगभग सभी युनि. में Board of Studies के निष्णात स्वरुप रहकर अच्छा प्रदान किया है। बृहद् गुजरात संस्कृत परिषद् से प्रस्तृत करने वाले नाटक में श्रेष्ठ अभिनय का योगदान दिया है। शैक्षणिक संस्थाओं में ही नहीं अपितु सामाजिक संस्थाओं और सांस्कृतिक संगठनों में भी हृदयस्पर्शी व्याख्यानों का सौभाग्य प्रदान किया है। निवृत जीवनकाल में संस्कृत एवं संस्कृति की साधना निरन्तर गतिशील रह पाये, ऐसी ही विद्यादात्री सरस्वती माँ को प्राथना करती हूँ।

'यो जयगार तमृच: कामयन्ते'।

(ऋगवेद - ५/४४/१४)

आधुनिक संस्कृत लघुनाटकों में प्रदान:-

<u>प्रस्तावना</u>

भारतीय संस्कृत- साहित्य का परिदृश्य अतीत विशाल है। प्राचीन काल से अब तक संस्कृत- साहित्य की यह परम्परा अविच्छिन्न रुप में प्रवाहशील है। वेदों से प्रारम्भ हुए संस्कृत-साहित्य की प्राचीनता की साम्यता अन्य कोई साहित्य नहीं कर सकता है। वेदों से पश्चात् ब्राह्म्ण, आरण्यक तथा उपनिषदो से परिचय होता है। इनसे आगे बढ़ने पर विविध पुराण तथा रामयण-महाभारत आदि प्राप्त होते हैं। इनके बाद संस्कृत- साहित्य का लौकिक युग प्रारम्भ होता है, जो वर्तमान में भी निर्बाध रुप से अग्रसर है। इस युग में प्राचिनकाल से वर्तमान तक विभिन्न विधा उपविधा में साहित्य रचना होती रही है। जहाँ संस्कृत का प्राचीन साहित्य अत्यन्त समृद्ध है, वहीं आधुनिक साहित्य का स्थान और महत्व भी अप्रतीम है।

समयानुसार सामाजिक परिस्थितियों में परिवर्तन होता रहता हैं और साहित्य समाज द्वारा प्रेरित होता है, इसलिए इन सामाजिक परिवर्तनों का सीधा प्रभाव साहित्य में परिलक्षित होता है। अतएव संस्कृत- साहित्य भी परिर्वतनों से अछूता नहीं है। कालानुसार संस्कृत- साहित्य तथा इसकी विधाओं में पर्याप्त परिवर्तन होते जा रहे हैं। आधुनिक संस्कृत– साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि एक ओर जहा प्राचीन संस्कृत साहित्य की विधाओं को कुछ परिर्वतन के साथ ग्रहण किया गया, वहीं दूसरी ओर कुछ सर्वथा नवीन विधायें भी प्रकाश में आयी हैं। किन्तु लौकिक संस्कृत- साहित्य के युग में प्राचीन काल से अब तक विभिन्न परिवर्तनों के बाद भी इसे मुख्यत: ४-भागो में विभक्त किया जाता है-

१ पद्य साहित्य
२ गद्य साहित्य
३ चम्पू साहित्य
४ नाटय साहित्य

इन चारो विधाओं में प्राचीन काल से वर्तमान तक साहित्यकारों ने संस्कृत- साहित्य को समृद्ध किया है। वस्तुत: इन सभी विधाओं में रचा गया साहित्य अतुलनीय है, किन्तु नाटय-विधा को संस्कृत- साहित्य का गौरवपूर्ण अङ्ग माना जाता है; क्योंकि अन्य विधाओं की अपेक्षा नाटयविधा द्वारा सुगमतापूर्वक अपने भावों और विचारों को दूसरों तक पहुँचाया जा सकता है। नाटयविधा, अधिक हृदयग्राहक, मनोरञ्जक तथा आकर्षण होती है। अतएव कहा भी जा रहा है- "काव्येषु नाटकं रम्यम्।"

भरतमुनि ने भी अपने नाटयशास्त्र में नाटयविधा के महत्व को बताते हुए कहा है कि नाटकों जैसा ज्ञान, शिक्षा योजना, क्रिया-कुशलता आदि अन्य कहीं दिखायी नही देती है-

न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं सा विधा न सा कला।
नासौ योगो नं तत्कर्म नाटयेऽस्मिन् यन्न दृश्यते॥

नाटयशास्त्र १/११६

वामन ने भी नाटक की समानता चित्र से करते हुये इसे विशेष महत्व प्रदान किया है-

'संदर्भेषु दशरुपकं तद्धि चित्रं चित्रपटवद् विशेषसा कल्पात्'

काव्यलङ्कारसूत्रवृत्ति

संस्कृत- साहित्य में नाटको की उत्पति वैदिककाल सें ही मानी जाती है। आचार्य भरत ने नाटयशास्त्र में नाटय के लिए आवश्यक तत्त्वों के रूप में सवांद, अभिनय, संगीत तथा रस को माना जाता है, जिनकी प्राप्ति चारों वेदों में बतायी जाती है। ऋग्वेद के सवांद- सूक्तों में विद्यमान नाटकीय अंश स्पष्ट रुप से परिलक्षित होता है। सामवेद से संगीत प्राप्त होता है तथा कौषितकी ब्राह्मण मे नृत्य - गीत-संगीत मुख्य विधाओं में परिगणित है। वाजनेयी संहिता (३०/४) तथा तैतरीय ब्राह्मण (३/४/२) में 'शैलूष' शब्द आया है, जिसका अर्थ डॉ. कीथ ने गायक या नर्तक किया है। इनके अतिरिक्त

महाभारत तथा रामायण मे भी नट, नर्तक, गायक आदि का निर्देश किया गया है-

‘ नाराजके जनपदे प्रकृष्टनटनर्तका:।’

वाल्मीकि रामायण २/६७/१४

‘ आनर्ताश्च तथा सर्वे नटनर्तकगायिका:। ’

महाभारत वनपर्व १५/१३

इस प्रकार नाटयविधा के लिए संस्कृत में ‘रुपक’ शब्द प्रयुक्त होता है। इस रुपक को दशरुपकार धनञ्जय तथा साहित्यदर्पणकार विश्वनाथ ने दस भेदों(नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, ईहामृग, अङ्क, वीथी, प्रहसन) में विभाजीत किया है। इनके अतिरिक्त १८ उप रुपकों का भी वर्णन मिलता है।

प्राचीन काल में नाटय रचना इन्ही रुपकों तथा उप रुपकों पर आधारित होती थी। इनके उदाहरण- स्वरुप भास, कालिदास, अश्वघोष, भवभूति आदि की उत्कृष्ट रचनायें है, जिनसे संस्कृत-साहित्य को प्रसिद्धि प्राप्त हुई।

आधुनिक काल में भी उन रुपकों तथा उपरुपकों पर आधारित रचनायें प्राप्त होती है। किन्तु देश– काल- परिस्थिति अनुसार इनमें कुछ परिवर्तन होते रहे हैं। इनके अतिरिक्त कुछ नवीन विधाओं जैसे- रेडियो- रुपक गीतिनाटय, लघुनाटय, एकाकी आदि में भी रचनायें हुयी हैं। इस प्रकार नाटयकारों की परंपरा को आधुनिक नाटयकार जैसे- राजेन्द्र मिश्र, हरिदत्त शर्मा, मेघाव्रत शास्त्री, इच्छाराम द्विवेदी आदि आगे बढ़ाते हुये संस्कृत- साहित्य को प्रचारित तथा प्रसारित कर रहे हैं। नाटय साहित्य की रचना में महिला साहित्यकारो का भी उल्लेनीय योगदान रहा हैं। संस्कृत नाटयविधा में ‘कौमुदी- महोत्सव’ नाटक की रचनाकार विजयाभट्टारिका सर्वाधिक प्राचीन ज्ञात महिला-नाटयकार है, जिनका समय ७१० ई.से ८६० ई. के मध्य माना जा सकता है। इसके

अतिरिक्त पद्य- प्रधान ''आनन्दलतिका' नामक रूपक का उल्लेख मिलता है, जिसकी रचना वैजयन्ती नामक लेखिका ने अपने पति श्री कृष्णनाथ के साथ मिलकर की। शारदा देवी के 'रामाभ्युदय' नाटक का उल्लेख डॉ. कृष्णमाचार्य ने अपनी पुस्तक "History of classical Sanskrit Literature" में किया है। त्रिवेणी नामक रचनाकार मे 'रंगाभ्युदयम्' 'सम्पत् कुमार विजयम्' ' ङ्र्गराट समुदयम्' आदि प्रतीक नाटको की रचना की। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्राचीन काल से ही महिला- साहित्यकार संस्कृत- नाट्यविधा में योगदान देती रही हैं। यह परम्परा आज भी अक्षुण्णरुप से विधमान है। आधुनिक संस्कृत- नाटयसाहित्य मे महिला- साहित्यकारों की भी एक सुदीर्घ परम्परा बनती जा रही है, जो निरन्तर आधुनिक संस्कृत नाट्यविधाओं- उपविधाओं के अन्तगर्त रचनायें करते हुए इसे समृद्ध बना रही है।

डॉ. योगिनी हिमांशु व्यास आधुनिक संस्कृत साहित्य की विदुशी है। जिन्होने आधुनिक लघुनाटको में भी अद्भुत योगदान प्रदान किया है। उनके लघुनाटको में-

१. दशहृदयसम: पुत्र: दशपुत्रसमो द्रुम:
२. आत्मानन्दरसज्ञानामलं शास्त्रावलोकनम्
३. माताभूमि: पुत्रो अहं पृथिव्या:
४. अल्पं तुल्यशीलानि ध्वन्ध्वानि सृज्यन्ते
५. जलस्य संरक्षणं हि जीवनस्य संरक्षणम्
६. सर्वज्ञानमयो हिस:
७. तस्मात् साङ्गामधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते
८. गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यै: शास्त्रविस्तरै:
९. प्रतिभासंपन्नां संस्कृतिविधुषां प्रदानम्
१०. आज्ञा गुरूणां हि अविचारणीया
११. माता किल मनुष्याणां देवतानां च दैवतम्

१२. कर्मण्येवादिकारस्ते मा फ़लेषु कदाचन

१३. यशोधनानां हि यशो गरीय:

आदि का समावेश होता है। सभी लघुनाटको में कही नैतिक मूल्य, कही पर्यावरण की महत्ता, आध्यात्मिक मूल्य, सद्गुण-संस्कार और संस्कृति की झलक दिखाई देती है। सहज संवाद भाव से वार्तालाप श्रेणी से वाचक को भी जिज्ञासा उतपन्न हो ही जाये एसी अद्भुत शैली से निरूपण किया है। जैसे कि- 'दशहृदयसम : पुत्र: दशपुत्रसमो द्रुम: '

लघुनाटको में गुजरात के नवसारी जनपद स्थित आश्रम शाला के, दशमी कक्षा के छात्रो के लिए 'सापुतारा' पर्यटन स्थल का प्रवास आयोजित किया गया है, और जिसमें वनकी रमणीयता को देखने के लिए छात्र दूसरे दिन जंगल में जाते है वहाँ संवाद- रुप में वन के विविध वृक्षो का परिचय फल-फुलो का परिचय दिया गया हैं। हर एक वनस्पित, औषोधि, फलो का अपना एक गुण और महत्त्व होता है, वही इस लघुनाटक के माध्यम से हमारे समक्ष रखा गया है। साथ ही पर्यावरण में और मानवीय जीवन में वृक्षो का महत्त्व कम नहीं है, उनके अगणित लाभ, परोपकार की भावना भी संवाद में दिखाई गई है।

अंत: लघुनाटक के सम्वाद के माध्यम से यहाँ परोपकार की भावना, वृक्ष का महत्त्व, पर्यावरण संरक्षण, मानवीय जीवन में इन सभी की आवश्यकता को दिखाने का प्रयत्न किया गया है। आज के आधुनिक जीवन में नैतिक मूल्यो का पतन हो रहा है। तभी एसे लघुनाटको के माध्यम से पुन: मानवीय जीवन में उनका सिंचन किया जा सकता है। लघुनाटक की शैली संक्षिप्त सहज कथा के जैसी होने से सभी को आकर्षित करती है और बोध भी देती है।

'जलस्य संरक्षणं हि जीवनस्य संरक्षणम्' लघुनाटक में उद्यान की मुलाकात में प्रकृति का अद्भुत निरुपण किया है।

“पृथिव्यां त्रीणिरत्नानि जलम् अन्नम् सुभाषितम्।
मूढे: पाषाणखण्डेषु रत्नसंज्ञा प्रदीयते॥”

एवं वसुन्धरा के महत्त्व, प्रकृति सुख प्रदान करनेवाली, ज्ञान प्रदान करने वाली, शांति देने वाली, मुक्तिदाता स्वरुपा दिखाई गई हैं और साथ ही महात्मा गाँधी जी ने जीवनपर्यंत स्वचछता का व्रत धारण किया था उसको भी निरुपित किया है। ‘स्वच्छता’ से ही जीवन मधुर, स्वस्थ, सुखी, शुभ, शांतिपूर्ण और दीर्घ हो सकता है।

उपसंहार:-

आज के आधुनिक समय में चारित्र्य निर्माण, नैतिकता और ज्ञानवर्धन हो एसे ही साहित्य की आवश्यकता अधिक दिखाई पड़ती है। डॉ. योगिनी व्यास के लघुनाटको में सभी नैतिक मूल्यों हमारी भारतीय ज्ञान परंपरा, संस्कृति एवं संस्कार सामाजिक दृष्टिकोण, मानवीय अधिगम आदि दृष्टिगोचर होते हैं।

“शुभम् अस्तु”

आधुनिक साहित्य में संदेश काव्य

प्रा. डॉ. सोलंकी मंजुलाबेन नाथाभाई
आर्ट्स कॉलेज, मोडासा

भूमिका:-

आधुनिक युग में संदेश वाहक जहां कालिदास की परंपरा में मेघ भी है, वहां प्रकृति के अन्य तत्त्वों यथा पवन और चंद्रमा को भी संदेश वाहक बनाया गया है। महाकवि कालिदास ने तो दृश्य वस्तु को संदेश ले जाने के लिए चुना था, किंतु आधुनिक युग के कवियों ने मन, बुद्धि तथा प्राण जैसी अदृश्य वस्तुओं को भी यह कार्य सौंपा है। संदेश वाहकों में सर्वाधिक संख्या पक्षियों की है, जिन में हंस, कपोत, काक, श्येन, शुक, कोकिल, बक, गरुड, नीलकंठ तथा चातक आते हैं। इस कार्य के लिए कवियों ने जहां एक ओर मधुकर को चुना है, वहां दूसरी ओर उनकी सेवा में पादांक तथा मूद्गर भी हैं। कालिदास के संदेश वाहक के संबंध में प्राचीन आचार्य भामह का आक्षेप था कि अचेतन कार्य कैसे कर सकता है, और संभवतः इसी दृष्टि से आधुनिक युग के कतिपय कवियों ने पान्थ, विप्र, वल्लभ तथा हनुमान को संदेश ले जाने का कार्य सौंपा है।

आधुनिक युग के संदेश काव्य की परंपरा में व्रजनाथ तैलंग (१७२०-१७८१) का मनोदूतम् सर्वप्रथम आता हैं। संपूर्ण काव्य में २०२ शिखरिणी छंद है, जो कि संदेश काव्यों की परंपरा में नया आयाम प्रस्तुत करते हैं। महाभारत की द्रौपदी चीर हरण कथा इसका आधार हैं। एक पल सभा भवन में दु:शासन द्वारा वस्त्र खींचे जाने पर द्रौपदी मन को दूत बनाकर श्री कृष्ण के पास भेजती है। वह कृष्ण से निवेदन करती है और कृष्ण आकर उसकी रक्षा करते हैं।

विज्ञमूरि वीर राघवाचार्य(१८५५-१९२०) तथा लक्ष्मणसूरि (१८५९-१९१९) ने मानससंदेश नामक दो पृथक-पृथक

दूतकाव्यो की रचना की हैं। किंतु इन दोनों ही काव्यों में काव्य गुण मनोदूतम् काव्य की अपेक्षा अत्यल्प मिलते है।

१७८५-१७९२ ई. के मध्य किसी अज्ञात नाम केरलीय कवि द्वारा लिखा गया चातक संदेश मिलता है, जिसका संदेश काव्यों में महत्त्व पूर्ण स्थान निरूपित किया जा सकता हैं। संदेश काव्य के प्रारंभिक श्लोक से काव्य की स्थिति का भी आभास हो जाता है-

कश्चित्काले बलवति कलौ केरलार्थे तुरुष्कै-
राक्रान्ते तत्करहृतधनो भूसुरः कातरात्मा।
नश्यन्नानाविभवविधुरं नावलम्बं कुटुम्बं
पश्यन्दीनो दिनमनुदशां शोचनीयाममासीत्।।

मैसूर के टीपू सुल्तान ने जब केरल पर आक्रमण किया था, उस समय कवि के कुटुंब की संपत्ति विनष्ट हो गई और आर्त होकर वह तिरुवनंतपुर के महाराजा कार्तिक तिरूनाल से मिले। महाराजा ने नंबूदरी का सम्मान किया। काल के कुचक्र से नंबूदरी रोगग्रस्त हुए तथा एक दिन महाराजा की अनुमति के बिना ही अपने गांव चले गए। एक दिन ग्राम मंदिर में जब भगवती का भजन कर रहे थे, उस समय उन्होंने एक चातक को देखा तथा महाराजा के पास अपना संदेश भेजा। यही है संदेश काव्य की कथा, जो इतर संदेश काव्यों से भिन्न हैं। साधारणतया संदेश काव्य विप्रलंभ श्रृंगार को लेकर चले हैं, अत एव उनमें रसपुष्टि भी स्वाभाविक है, किंतु परिपाटी को तोड़ने वाले इस कवि का काव्य कम प्रशंसनीय नहीं हैं। संदेश काव्य के पूर्वार्ध में महाराज का माहात्म्य है तथा उत्तरार्ध में उनका अनुग्रह वर्णित है। कवि अत्यंत आर्त है२।

दत्वा पूर्वैः कथमपि चिरेणार्जितं तावदर्थं
शान्तिं नेतुं जठरदहनं चिन्त्यते कोऽपि पन्था:।
तावद् दूता इव पितृपतेर्वित्तसत्ताविशङ्कय
क्रुद्धाः केचित्कटुतरगिरा हन्त संत्रासयन्ति।।

चातक के निर्दिष्ट मार्गों का चित्रण कवि ने अत्यंत कुशलता से किया है। अंत में वह संदेश प्राप्त कर्ता राजा का विवरण देते हैं३।

पुन्नश्शेरि श्रीधर नम्बि (१७७४-१८३१) का नीलकंठ संदेश विषय की दृष्टि से बिल्कुल नवीन हैं। काव्य में कुल १२६ श्लोक है,

किंतु उसका विभाजन पूर्व तथा उत्तर भाग में नहीं हैं। नायक खुद कवि है जो भारतपुल्ला के उत्तर में इंगयूर स्थल में काम विधुर होकर निवास करते है-

कश्चित्कान्तः विरहविधुरः साश्रमे निस्सहाय-
स्तद्वक्त्राम्भोरुहमपि सदा भावयन्नन्तरङ्गे।
ईहाक्षेत्रे किमपि चनिलामुत्तरेणैव कामी
चक्रे वासं भुवनजननीनित्यसानिध्यपूर्णे।। (श्लोक – १)

तथा एक दिन नीलकंठ को आते हुए देखते है४ तथा उसे दूत बनाकर अपनी प्रियतमा के पास भेजते हैं। दूत के संदेश को पाकर नायिका जल्दी उसकी कामविधुरता दूर करती हैं। नीलकंठ जो सहायक था ५

महेशचंद्र तर्क चूड़ामणि के प्रपितामह कृष्ण चंद्र तर्कालंकार के चंद्रदूतम् में राम सीता के पास चंद्रमा को दूत बनाकर भेजते हैं, जबकि मूरियल नारायण नम्बीश (१८५२-१९२२) अपने इन्दुसंदेशम् में इन्दु को अपनी पत्नी के पास संदेश लेकर भेजते हैं। इन्दु से अपनी पत्नी का परिचय देते हुए कवि कहते हैं-

मुक्ताहारास्तनगिरितटाद् दूरमुक्तास्फुलिंङ्ग-
श्रेणीबुद्ध्या हिमजलमिलत्कुंकुमैः पिङकिताङ्गाः।
आली केली क्कणभणतयः प्रायशः कर्णशूलाः
सन्तापानामयि खलु सखे साक्षिणी पुष्पशैया।।

हंस को संदेश वाहन का कार्य सात काव्यों में मिलता हैं। वसुप्रहराज (१७९०-१८६०) का हंसदूतम्, कृष्ण ब्रह्म तंत्र परकाल स्वामी (१८३९-१९१६) का हंससंदेश (१८९९) मूरियल नारायण नम्बीश (१८५२-१९२२) का हंस संदेश, रंगाचार्य का हंससंदेश तथा वेंकटनाथ वेदांताचार्य का हंस संदेश। अन्य दो काव्यों के कवि के नाम नहीं मिलते। इन पांच काव्यों में मूरियल नारायण नम्बीश के काव्य की कथावस्तु नूतन कल्पित हैं। इसमें स्वर्ग निवासी कवि कालिदास केरल के चित्तूर (चित्पुरी) की संस्कृत वेद पाठशाला की गिर्वाणी को हंस मुखेन संदेश भेजते हैं। स्वर्ग से हंस को महामेरू जंबूद्वीप, कैलाश

तथा हिमालय आदि क्षेत्रों को पार कर केरल के चित्पूरी पहुंचना है , जहां वह विद्याशाला है६।

वेंकटनाथ वेदांताचार्य का हंस संदेश कालिदास के मेघदूत के अनुकरण पर लिखा गया हैं। जिस प्रकार मेघदूत में यक्ष नायक है, उसी प्रकार इसमें समग्र नायक गुणोपेत राम नायक हैं। जिस प्रकार मेघदूत में यक्षांगना नायिका है, उसी प्रकार इसमें रावण द्वारा अपहृत तथा प्रियवियोग में कातर पतिव्रता सीता नायिका हैं। जिस प्रकार उसमें दूत का कार्य मेघ करता है, उसी प्रकार इसमें हंस हैं। इस काव्य में कवि ने मंदाक्रांता छंद का प्रयोग किया है। काव्य दो आश्वासों में विभक्त है। हंस की दूत योजना का प्रतिपादन राम ने भली भांति किया है-

मध्ये केचिद्वयमिह सखे केवलं मानुषाणां
व्यक्तोत्कर्षो महति भुवने व्योमगानां पतिस्त्वम्।
स्थाने दूत्यं तदपि भवतः संश्रितत्राणहेतो-
र्विश्वसृष्टा विधिरपि यतस्सारथित्वेन तस्थौ।।

(प्रथमाश्वास, ७)

द्वितीय आश्वास का आरंभ इस श्लोक से होता है-

लीलाखेलं ललितगमनाश्चारुरादं सर्शिजा
भल्लाक्षं त्वां स्मरशरदृशो गौरमापाण्डुराङ्गः।
मुग्धालापं मधुरवचसो मानसार्हं मनोज्ञा
यत्रानीताःसुरयुवतयो रंजयेयुः समक्षम्।।

राम हंस से कहते हैं कि अपनी मधुर ध्वनि में तुम मेरा संदेश कह देना७।

मूरियल नारायण नम्बीश के समकालिक अज्ञात नामक एक केरलीय कवि का हंस संदेश भी मिलता है, इसके पूर्व भाग में ८३ तथा उत्तर भाग में ८८ श्लोक है। नायक को एक राक्षसी अपहरण करके ले जाती है, यही विरह का कारण है। यह संदेश भेजने वाली प्रियतमा है८। वह हंस के मार्ग का निर्देश कर रही है-

यातव्यं ते युवतिनयनच्छायनीराजितं तद्
गौणीवीचीचयमुखरितं कुंभमालूर देशे।
ईक्षुश्रेणीकलितरसनं हंसयस्मिन्महीयो

माकरन्दारण्यं नयनसुभगं मन्मथक्षेत्रमास्ते।

इसमें केरल का चित्रण मनभावन है-

पश्चादस्य क्षितिधरपतेः पुष्कले केरलाख्यो
निर्वृत्तग्रीष्मेऽप्युदकमनिशमुच्यते वारिवाहैः।
यत्रोत्तुङ्गाः परिणतफलस्तोमनम्रोत्तमाङ्गाः
वर्तन्ते ये मरिचवलिता नालिकेराश्च पूगाः।।

एक दूसरा अज्ञातकर्तृक हंस संदेश भी प्राप्त होता है। इसमें काव्य का हंस कोई साधारण पक्षी नहीं है, अपितु शिव है। ज्ञान भक्ति से वियुक्त होकर उसके पास संदेश भेजते है९।

मार्ग भी सामान्य नहीं है अपितु-

मार्गाबुद्धक्षपणककणादाक्षपादैः प्रयाता
युक्तागन्तं न खलु भवता कर्कशास्तर्कशैलैः।
अन्यान्कांश्चिच्छिवपदचरानादराद्वच्मि साधो
तेषामेकं प्रविश सहसा यत सखे रोचते ते।।

और सरल मार्ग है सुषुम्ना का-

सुखपादप्रचाराश्च शिवलोकप्रवेशकाः
बहवः सन्ति मार्गाश्च सौषुम्नोध्वातवोचितः।।

कुटमत्तु कुंज्जुनिन कुरुप्प (१८१३-१८८५) ने अपना कपोतसंदेश कालिदास के मेघदूत के अनुकरण पर लिखा है। जिस प्रकार कालिदास ने अपने काव्य में दिङ्नाग पर आक्षेप किया है, उसी प्रकार उन्होंने अपने विरोधी वासुदेव नम्बीशन तथा उनकी कविताओं पर विस्तार से आक्षेप किया है। त्रिशूर तैक्काट नारायण मूष (१८७१-१९०८) के कपोतसंदेश: में दुर्भाग्यवश किसी नए प्रेमी की सिंहलद्वीप प्राप्ति तथा प्रियतमा के पास कपोतमुखेन संदेश भेजने की चर्चा है-

रम्ये हर्म्ये रहसि विहरन् कोऽपि मर्त्यो युवत्या
रत्या साकं स्मर इव नवप्रेमपाशेन बद्धः।
विशिष्टस्सन् विधिगतिवशादन्यकार्यप्रसक्ता-
सिक्तो बाष्पैर्विरहविधुरस्सिंहलद्वीपमाप।।

कृष्णनाथ शर्मा न्याय पंचानन भट्टाचार्य (१८३०-१९००) ने १८४५ में १०० मंदाक्रांता छंद में वातदूतम् की रचना की थी।

इस काव्य की कथा रामायण से संबध्ध है। रावण के द्वारा अपहृत तथा अशोक वाटिका में निवास करने वाली सीता राक्षसों से भयाक्रांत है, तथा पति वियोग से आकुल है। ऐसी स्थिति में वसंत पवन को दूत बनाकर सीता अपना विरह- संदेश राम तथा लक्ष्मण के पास भेजती है । इस काव्य में एक नवीनता यह है, कि इसमें प्रेयसी ही प्रियतम के पास संदेश भेजती हैं। वायु की यात्रा के लिए प्रोत्साहित करते हुए सीता कहती है-

त्वत्सम्पर्काज्ज्वलति रुचिरे वारिजानां कदम्बे
गुंजन्मत्तभ्रमरमुखरे दीर्घिकां वीक्ष्यमाणः।
मोदिष्यन्ते रसिकपुरुषा नृत्यगीताभिरामै-
र्मत्वा नूने नटशिशुकुलैः संकुलां रंगभूमिम्।। (श्लोक- १०)

सीता कपोत से कहती है कि तुम राम से मेरी यथा तथ्य स्थिति को बता देना१०।

चिरलयत्त रामवर्म कुंज्जुन्नि राजा (१८६१-१९४३) के पवनसंदेश में पूर्व तथा उत्तर दो खंड हैं। संदेश काव्य के नायक राम विरहिणी सीता के पास अपना संदेश भेजते हैं। सीता का परिचय देते हुए राम पवन से कहते हैं-

अध्यास्ते तां निलयनगरीं जानकी सा निषण्णा
तान्तात्यन्तं मलयत इवोन्मूलिता गन्धवल्ली।
क्रव्यादीनां विकृतवपुषां बाष्पपूर्णाकुलाक्षी
शार्दूलानां जडमृगभुजां गोमतल्लीवमध्ये।।

कुज्जुन्नि राजा के पवनसंदेश के समान जी.वी. पद्मनाभाचार्य (१८७०-१९१९) का पवनदूतम् भी राम कथा पर आधारित है। विजय- राघवाचार्य वीरवल्ली का सुरभिसंदेश अपेक्षाकृत नई तकनीक को लेकर लिखा गया है। उसमें भारत के आधुनिक नगरों का मनोहारी चित्रण मिलता है११।

भोलानाथ ने दो दूतकाव्यो की रचना की है। एक है पादाङ्कदूतम् तथा दूसरा है पान्थदूतम्। इनमें पान्थदूतम् एक सफल प्रयोग है। इसमें कुल १०५ शार्दुलविक्रिडित छंद है। कथावस्तु श्रीमद् भागवत से संबध्ध है। कृष्ण के वियोग में दुखी गोपियां एक पथिक के

हाथ कृष्ण के पास संदेश भेजती हैं। प्रत्येक गोपी विरह से संतप्त है, अतः सभी के स्वर उलाहना भरे हुए हैं। तभी तो एक गोपी कहती है-

रासे रुद्धविनिर्गमा निरुपमास्तास्तापशेषाः मृताः
प्रेमायं मरणाय नो यदि पुरा ज्ञातः कथं स्वीकृतः।
यच्चिंन्न कुलशीलश्रृंखलमलं यद्यद्त्वदर्थं कृतं
तस्मिन्कर्मणि ममकर्तिनि पुनः कात्यायनी साक्षिणी।। (श्लोक- १८)

बेचारी करती भी क्या? विरहताप के उपचार की सारी सामग्री भी तो समाप्त हो गई थी। कृष्ण शायद संदेश पाकर सामग्री ही भेज दें-

शेवालं नलिनीदलं मलयजं जम्बालकं शीतलं
नूतनं पल्लवमत्र नो जनपदे दौर्लभ्यमेतानि यत्।
अध्याप्तानि पुरातनप्रणयतः संप्रार्थयामो वयं
शीघ्रं प्रेषयिता मदर्थमिति तं साधो बुधं बोधय ।। (श्लोक- १५)

इस काव्य में अन्य दूत काव्यों की भांति न तो मार्ग वर्णन है और न ही संदेश भेजने के लिए किसी मानवेतर की सहायता ली गई हैं। अतः एव इसे अधिक स्वाभाविक कहा जा सकता है।

गौर गोपाल शिरोमणि तथा चिंतामणि सहस्त्र बुद्धे ने काकदूतम् नामक अलग-अलग काव्य लिखकर दूतकाव्य की परंपरा में व्यंग्य को उपस्थापित करने का नया प्रयास किया है।

वयस्कर आर्यन नारायण मूष (१८४२-१९०२) ने श्येनसंदेश नामक काव्य आरंभ किया था, किंतु वह ३८ श्लोकों तक ही प्राप्त होता हैं। वयस्कर क्षेत्र के एक वृक्ष में निवास करने वाले शापग्रस्त गंधर्व श्येन के द्वारा तिरुमंधा में रहने वाली प्रियतमा के पास संदेश ले जाने की कथा इसमें वर्णित है।

श्रीमती त्रिवेणी (१८१७-१८८८) ने शुकसंदेशम् तथा भृंगसंदेशम् दो उत्कृष्ट दूत काव्यों की रचना की हैं। सुब्रह्मण्य सूरि (१८५०-१९१३) के बुद्धिसंदेश, रंगनाथाचार्य के शुकसंदेश, पंचानन तर्क रत्न (१८६६-१९४१) के प्राणदूतम्, महामहोपाध्याय अजितनाथ न्याय रत्न के बकदूतम् तथा राजगोपाल चक्रवर्ती

(१८८२-१९३४) के मधुकरदूतम् में उच्च कोटि की कल्पना मिलती हैं१२।

मन्दिकल सी. एन. राम शास्त्री ने मेघप्रतिसंदेशम् ई. १८६६ में लिखा था। इसमें दो सर्ग है। प्रथम सर्ग में ६८ तथा द्वितीय सर्ग में ९६ श्लोक है। इसमें कवि ने मेघदूत की कथा को पल्लवित किया है। इसमें विरहिणी यक्षिणी अपना संदेश मेघ के पास भेजती है तथा कालिदास के मेघ के द्वारा भेजे गए संदेश का उत्तर भी देती है१३। त्रैलोक्यमोहन गुह का मेघदूतम् भी ऐसा ही एक काव्य है।

जिस प्रकार राम शास्त्री ने कालिदास के मेघ के पास उसकी प्रियतमा का संदेश भेज कर चिर विरही यक्ष को सांत्वना दी है, उसी प्रकार परमेश्वर झा (१८५६ – १९२४) ने यक्षसमागम: काव्य लिखकर दोनों प्रेमियों को मिलाने का कार्य किया है। श्राप के चार महीने बीतने पर यक्ष अपनी प्रेयसी के पास जाता और फिर अलग न होने का वचन देता है १४ ।

लक्ष्मण सूरि के विप्रसंदेशम् में रुक्मिणी एक वृद्ध को अपना दूत बनाकर कृष्ण के पास भेजती है, तथा कवि सार्वभौम कुडंगल्लूर कुच्चुन्नि तम्बुरान के विप्रसंदेशम् (१९१९) में तीस वर्षीय एक दक्षिण देशीय ब्राह्मण वाराणसी से एक विप्र के माध्यम से त्रिवेंद्रम् में निवास करने वाली अपनी प्रियतमा के पास संदेश भेजता है १५ ।

तीन कवियों ने अपने संदेशवाहन का कार्य कोकिल को सौंपा हैं। काव्य यह है- प्रमथनाथ तर्कभूषण का कोकिलदूतम्, रंगाचारी का पिकसन्देशम्, तथा म. क. कोचनरसिंहाचार्य का पिकसंदेश। इनमें रंगाचारी के दूत को केरल प्रदेश के करिपतिपुर नामक स्थान पर जाना हैं –

यातव्यं ते प्रथितविभवं प्रेयश्चाब्धिपुत्र्याः
क्रीडागारं करिपतिपुरं विश्रुतं दिङ्मुखेषु।
यस्मिन् स्वायं नगरवनितारम्यवेषास्त्वरन्ते
साक्षात्पादम्पतिमनुदिनं सेवितं बन्धधार्शाः।।
नृत्यन्त्युल्का घररवसुखोन्तवाहामयूराः

प्रोत्कम्पन्ते पवनतरलास्तालसालाः सदब्धाः।
उल्लांगूलास्सकुतुकमितः संचरन्ते चमर्यः
मत्स्याः कामं सरसिजवतीशूलप्लुवाः संवलन्ते।।

गरुड़संदेश नाम से दो काव्य मिलते हैं । एक के लेखक है वेल्लमकोण्डराम राय (१८७५-१९१३) तथा दूसरे काव्य की रचना नरसिंहाचार्य ने की हैं।

रामावतार शर्मा (१८७५-१९२८) का मुद्गरदूतम् (१९१४) एक सामाजिक व्यंग्य हैं उसका आरंभिक श्लोक इस प्रकार है-

किं मे पुत्रैर्गुणनिधिरयं तात एवैष पुत्रः
शून्यध्यानैस्तदहमधुना वर्तये ब्रह्मचर्यम्।
कश्चिन्मूर्खश्चयलविधवास्नानपूतोदकेषु
स्वान्ते कुर्वन्निति समवसत्कामगिर्याश्रमेषु।।

बटुकनाथ शर्मा (१८९५-१९४४) का वल्लभदूतम् भी इसी प्रकार का एक व्यंग्य काव्य है।

नित्यानंद शास्त्री के हनुमतदूतम् (१९२८) का संदेश काव्यों में विशिष्ट स्थान हैं। मेघदूत के प्रत्येक पद की चतुर्थ पंक्ति को लेकर इसमें समस्या पूर्ति की गई हैं। पूर्व भाग में ६८ तथा उत्तर भाग में ५८ मंदाक्रांता छंद हैं। पूर्व भाग में मार्ग वर्णन, तथा उत्तर भाग में लंका वर्णन, सीता की विरह वेदना और अंत में हनुमान द्वारा संदेश कथन हैं। सीता की स्थिति की कल्पना करते हुए स्थान-स्थान पर राम द्रवित हो उठते हैं-

सा तन्वंगी कुसुममृदुलं स्वर्णगौरं शरीरं
भूषाहीनं धरणिशयनाद्दूषितं धारयन्ति।
त्वामस्त्रं स्त्राक् सदयहृदय, स्त्रावयिष्यत्यवश्यं
प्रायः सर्वो भवति करुणावृत्तिरार्द्रान्तरात्मा।। २/ ३२

संदेश काव्य तथा समस्या पूर्ति इन दोनों ही दृष्टियों से यह काव्य सफल हैं ।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची:-

(१) उदासीना दीना मृदुहसितहीना नतमुखी
निलीना स्वेष्वङ्गेष्वहह सुखहीना यदुपते।
निहीना कीनाशाधिकभयकरैरन्धतनयैः
सभायामासीना द्रुपदतनया पीडयत् इह।। (१७०)
आधुनिक संस्कृत साहित्य, डॉ. हीरालाल शुक्ल
रचना प्रकाशन, न्यू-ए, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण १९७१

(२) चन्द्रं हित्वा क इह शरणे स्याच्चकोरावलीनां
कारुण्याब्धे जलधरमृते का गतिश्चातकानाम्।
मासं पुष्पाकरमपि विना कोऽवलम्बः पिकानां
मन्ये तद्वन्महितमहिमन् नान्यदालम्बनं नः।। वहीं, पृ.- ३९

(३) नानारत्नाभरणकिरणैर्दुर्निरीक्ष्यं क्षितीन्द्रम्
दीनत्राणं नियतहृदयं नीतिमार्गे चरन्तम्।
भास्वद्रत्नप्रकरखचिते भित्तिमार्गे स्फुरद्भिः
बिम्बोधैः स्वैरपि मतिमतां भ्रान्तिमुत्पादयन्तम् ।। वहीं- पृ. -३९

(४) अभ्यायान्तं तडिदिव विपत्भासयन्तं स्वभाषा
सोऽयं कामी कमपि सुभगं नीलकण्ठं ददर्श।
यज्ञेशः प्राञ्जलमुचमिव प्राहृतं हृष्टचेताः
सम्बद्धोक्त्या पिकवरसखे भ्रातरित्यादरेण।। वहीं, पृ.- ३९ , ४०

(५) येषां तावत् भवति शरणं नीलकण्ठस्तु साक्षात्
तेषां पुण्यप्रथितजनुषामत्र किं दुर्लभः स्यात्।। वहीं, पृ. -४०

(६) तत्रत्यानां द्विजकुलभवां मौलिमाणिक्यभूयं
विभ्राणस्ते रुचिरहंसः कृष्णपादा जयन्ति।
येभिः क्लिप्ता सुरवरपुरीवोल्लसन्ती विशाला
विद्या शाला लसति सुमनस्सङ्गसम्पूर्ण्यमाणा।। वहीं, पृ. – ४०

(७) प्रत्युर्देवि प्रणयसचिवं विद्धि दीर्घायुषो माम्
जीवातुं ते दधतमनधं तस्य सन्देशमन्तम्।
शूराणां शरदुपगमे वीरपत्नीवराणां
सम्मानार्हं समयमुचितं सूचयेत्कूजितैः स्वैः।। वहीं, पृ.- ४१

(८) वहीं, पृ.-४१

(९) कश्चिन्मायामृगवशगतः कर्मणा मुह्यमानः
भक्त्या शम्भोशरणभवया विप्रयुक्तो विषण्णः।
रामो यद्वज्जनकसुतया दण्डकारण्यभूमौ
क्षेत्रे प्राप्ते क्वचन पुरुषः कल्पयामास वासम्।। वहीं, पृ. -४२

(१०) सा सिंचन्ती नयनसलिलैर्बाहुमूलं कदाचित्
त्वां पश्यन्ति नखरलिखितं कर्हिचिद्भूमिपृष्ठे।
जातु वत्सं खलसद इवादृष्टिदोषं लपन्ती
दुःस्था कालं नयति रजसि व्यालुठन्ती क्वचित्त्व।। (श्लोक- ७५)
वहीं, पृ.- ४३

(११) वहीं, पृ.- ४३

(१२) वहीं, पृ.- ४४

(१३) मामाकाशप्रणिहितभुजा श्लिष्यति स्वप्नलब्धाम्
देवी निद्रा त्वयि सकरुणा भाग्यमेतत्तवास्ते।
उन्निद्राहं दिशि दिशि समालोक्य ते रुपधेयम्
गाढाश्लेषोद्धतभुजलता त्वामनासाध्य लज्जे।। १/ ४६ वहीं, पृ.- ४४

(१४) ये ये क्लेशाः सुमुखि विरहे ते मया सोढपूर्वा-
स्तानानन्दानुभवसमयेऽलं पुनः स्मारयित्वा।
सम्प्रत्येकीभव सह मया प्राणवद्गोपनीये
भूयान्नैवं पलमपि कदाप्यावयोर्विप्रयोगः।। (श्लोक-३) वहीं, पृ.-४५

(१५) वहीं, पृ.-४५

Dr. Maheswar Hazarika's "*ŚrīmantaShaṇkaradevacharitam*: A Review

Dr. Nandita Sarmah
K. K. H. Govt. Sanskrit College
Jalukbari, Guwahati, Assam

1. Dr. Maheswar Hazarika's works and achievements:-

Dr. Maheswar Hazarika is one of the greatest Sanskrit scholars. He is the son of late Kehoram Keot (Hazarika) and late Chanika Keot (Hazarika) and was born in Melemora gaon, dist. Golaghat, Assam in 1953. His academic career started from Punjab University, Patiala Punjab, as a project Assistant, Dept. of Religious Studies from 1979-81. During that time, he worked on editing the *Bhaktiratnākar* of Śrīmanta Śhaṅkaradeva written in Sanskrit. He also got the fellowship for the research project "*To translate the Vyākaraṇa Mahābhāṣya of Patañjali into Assamese with notes and Explanations*". In 1981, he joined DHSK College, Dibrugarh and retired as the Vice-principal from this college. After retirement, he joined the dept. of Sankaradeva Studies, Mahapurusha Srimanta Sankaradeva Viswavidyalaya, Nagaon as Professor and Head from 2015 to 2017. Moreover, Dr. Hazairka worked as a researcher at the Indian Institute of Authentic Study in Himachal Pradesh. He got the Ph.D. degree from Dept. of Sanskrit, Gauhati University on the topic "The place of Assam in Sanskrit Literature: A Study".

Dr. Maheswar Hazarika's contribution to Sanskrit literature is remarkable for the way in which he could establish himself as a Sanskrit lover. Besides the Śrīmanta Śaūkaradevacaritam, he has many publications, such as-

1. His translation of dramatist Bhāsa's dramas *Dūtavākya, Madhyamavyāyoga*, *Dūtaghatotkaca, Pañcarātra* and *Pratijñāyougandharāyaṇa* into Assamese.

It is note worthy that these translated dramas were broadcasted by Akash bani, Dibrugarh.

2. He also translated other Sanskrit books into Assamese i.e. *Mudrārākṣasa* of Viśākhadatta, *Ratnāvalī* of Śhīharṣa, *Mālavikāgnimittam* of Kālidāsa.

3. *Śrīguṇacaritam*- The only biography of Śhaṇkaradeva in Sanskrit śloka along with an English translation.

4. *Vivekānandaracanāsamagra*- This book is based on the complete works of Swāmī Vivekānanda.

5. *Patañjali's Mahābhāṣya*- This is a translated book from Sanskrit to Assamese and English.

6. *Hindu Cetanā*- It is the Assamese translation of Swāmī Vivekānanda's books.

7. *Bhārat Jāgaraṇ*- It is the Assamese translation of Swāmī Vivekānanda's book "*Awakening India*".

8. *Japaji Sahib*- It is an Assamese translated book based on the Sikh religious book entitled the same.

Beside these, Dr. Hazarika wrote various articles, research papers related to Sanskrit philosophy, literature, grammar etc. At present, he has engaged himself to translate the book entitled "*The complete works of Swāmī Vivekānanda*" into Assamese.

Due to his contribution to Sanskrit literature, Dr. Hazarika received many awards such as – he was awarded the Durgādhar Borkoṭoky Botā by the Asom Sahitya Sabha, Jorhat/ Guwahati, Assam, for his book "*Rāsatrayī*" in 1999. He received the Śrīmanta Śaṇkaradeva gaveshanā Botā by Āunīātī sattra, Mājuli, Assam in 2016 for his book *Kīrtanam* and the Agnigarh Botā for service rendered in Sankaradeva Studies, by Araṇyam, Chinātoly, Golaghat, Assam, in 2016.

From the above mentions, it is found that Dr. Maheswar Hazarika composed many books and also received many awards for his extraordinary works. But it is not possible to discuss all the books written by him;

therefore I have discussed his book *Śrīmanta Shaṇkaradevacaritam* only.

2. Introduction of the book:-

***Śrīmanta Shaṇkaradevacharitam*:**

The *Śrīmanta Śhaṅkaradevacharitam* was composed by Dr. Maheswar Hazarika, who is an eminent Sanskrit scholar of Assam pranta. This book was published by Sri Suryakanta Hazarika, M. Com, S.H. Educational Trust, Tarun nagar, Guwahati-781005 in 2007, 1st edition. The cost of this book is 100/-. In the preface, the writer dedicated this book to the holy feet of Pandit Aunandoram Borooah, Krishnakanta Handique and Dr. Yogiraj Basu.

There are 11 chapters and 292 verses in this book and every chapter has a different name or title. This book is a biography of the great Assamese polymath, a saintly scholar, artist, social and religious reformer and a figure of utmost importance in the cultural and religious history of Assam, whose literary and artistic contribution are living traditions in Assam today. Śrīmanta Śhaṅkaradeva was the founder of the *Navavaiṣṇavadharma* or *Ekaśaraṇanāmadharma*. Therefore Dr. Mukunda Madhav Sharma considers that " *Srimanta Śhaṅkaradeva is Assam's greatest personality of all time*".[1] In this context, it should be mentioned that Dr. Mukunda Madhav Sharma comments on Śhaṅkaradeva in his poetry book *Stutipraśastimanjarī* as-[2]

"*te sarbe harināmakīttanaparaṁ dharmaṁ mahāntaṁ sritāsteṣāṁ lokakṛpārthabigrahavataṁ dhyāyanti rupaṁ subham*".

"*na kevalaṁ dharmapravarttako ....svayameṣa devatā*". [3]

The main significance of this book is that its written in very simple Sanskrit language with the help of different chandas. The writer also explains the ślokas in Assamese and English. Although this book is a biography, it is accepted by the Sanskrit scholar Dr. Mukunda Madhav

Sharma as *jīvanīmulaka kāvya*[4] i.e. *caritakāvya*. It is mentioned by Dr. Mukunda Madhav Sharma in his commentary "*Swarṇamayī*" that the followers of Śhaṅkaradeva accepted him as the incarnation of god. Cf.

"sāhityāsaṅgīta.... śrīśhaṇkaradevaḥ bhaktajanoirvatārarūpeṇaiva svīkriyate".[5]

"na kevalaṁ dharmagururupeṇa tasya mahattam. Kintu asamiya-sāhitya-saṁskṛti-...tatha namasyatvaṁ sarvoirevanubhūyate".[6]

The brief description of the 11chapters are found as follows-

The 1st chapter known as *Bālacaritam* i.e. Boyhood, describes the birth of Śhaṅkaradeva who was the son of Kusumbara Bhuyna and Satyasandhyā, his time as a student in Mahendra Kandali's Tol etc.

The 2nd chapter is known as *tīrthāṭanam* i.e. visit to the places of pilgrimage. Here the writer mentions that when his wife Suryavatī died after two years of marriage, Śhankaradeva felt a sense of despair and went to visit various pilgrimage sites such as- kāśhi, gayā, Ayodhyā, Bṛndāvan, Kedār, Badari etc.

The 3rd chapter, named *Bhaktidharmabastu-sthāpanam* describes the foundation of *bhakti* faith. After returning from the pilgrimage Śhankaradeva remarried Kālindī Māi and he kept himself busy chanting the attributes and glory of lord Bishṇu. For the purpose of devotional discourse, he also built a *Manikūṭ*, the main seat of Hari.[7]

The 4th chapter is known as *dharmabastupracāraḥ* i.e. publicity of the dharma. In this chapter, it is mentioned that Śhaṅkaradeva composed the book *Bhakti pradīp*, descriptional art of *Baikuṇṭha* on the *tulāpāt*,[8] making of the instrument *kholavādya*, stage performance of drama, composing the drama *cihnayātrā* etc.

The 5th chapter is very interesting because it describes the meeting of Śhaṅkaradeva with his *śiṣya* or his

most prominent disciple Mādhavadeva. Therefore, this chapter is known as *manikāñcanamilanam*.

The 6th chapter is known as *Bhaktidarśanam* i.e. the philosophy of devotion. In this chapter, the writer mentions about the religious faith of *Vaiṣṇavadharma* or *ekaśaraṇanāmadharma*, establishment of the satras[9] where the followers of Śhaṅkara could reside, performance of exercises on staging of dramas, songs, dances, performed chanting of the names of Hari day and night.[10]

The 7th chapter is named *Bipramādaḥ* i.e. the calamity. This chapter mentions that the brahmins had complained to the king Chuhuñgmuñg about Śhaṅkaradeva being an anti-vedic in practice.[11] When, the king imprisoned Śhaṅkara's two followers Mādhavadeva and Haricaraṇa, Śhaṅkaradeva decided to leave for the king Naranārāyaṇa's kingdom with his wife and followers.[12]

The 8th chapter is known as *lokasaṁgaha*, where descriptions are found of Naraka, the lord of *Prāgajyotiṣapur*, the places *Vatadravā, Pāṭbāusī, Ganakakuchi, Pāleñgi* etc. where Guru Śhaṅkaradeva had expounded his religious wisdom.

The 9th chapter is known as *sārasvata sādhanam*, i.e. literary pursuits. Here description is found of the saint Śhankara composed his dramas[13] viz. *Rukmiṇīharaṇa, Kālīyadaman, Pārijātaharaṇa, Keligopāl* and his attractive drama *Śrīrāmavijaya nāṭaka*, which was his last composition. The chapter also describes arrangement for the dramas to be performed just at the middle of the *nāmaghar* so that the actors remained surrounded by the audience from all sides etc.

The 10th chapter *lekhanavirāmaḥ* i.e. the end of the writing phase, mentions that when the king of Coch Bihar ordered to have Śhaṅkaradeva captured and killed, then Śhukladhaja, the younger brother of the koch king brought Śhaṅkara to his own residence and protected him.[14]

The 11th chapter known as *Vaikuṇṭhaprayāṇam* i.e. departure to the *Vaikuṇṭha*, mentions that when king Naranārāyaṇa saw the unique canvas made on *tulāpāṭ* of *Vṛndāvana, Mathurā, Yamunā* river and sportive dalliances of Hari etc. , the king felt that Śhaṅkara was not a common man. Then he wanted to accept Śhaṅkara as a guru, but Śhaṅkaradeva did not want to be a guru to kings and women because of their fickle mind. Although they requested him again and again, he did not reply to them and came back home. Then he took his posture of *padmāsana* with a view of giving up his physical body.

Thus these chapters discuss the entire life history of Śhaṅkaradeva.

3. Conclusion:

The greatest achievement of this book is that it tells the life history and remarkable journey of Śhaṅkaradeva in very simple Sanskrit which can be read easily. The writer also describes the social and political conditions, geographical conditions like floods, rivers, the human mind, human characters etc. of Assam at that time. This book is highly praised by the eminent scholar Dr. Mukunda Madhav Sarma. This book gives a unique glimpse of Dr. Hazarika's historical knowledge and depth. Therefore this book was included in the CBCS syllabi by Dept. of Sanskrit, G.U. in 2019. I highly support and thank the Dept. of Sanskrit for including this book as a text book in the syllabi.

References:

1"Śrīmanta Śhaṅkaradeva asamar sarbakālar śreṣṭha byakti" Śrīmanta Śhaṅkaradevacaritam, preface

2 Stutipraśastimanjarī , v. 3

3 Ibid,v.4

4 "prakṛtate jīvanīmulakakāvya racanā karātu bara kaṭhin kām". Śrīmanta Śhaṅkaradevacaritam, preface

5 Stutipraśastimanjarī, p. 77

6 ibid, p.77

7 Śrīmanta Śhaṅkaradevacaritam, ch.III, v.3-4

8 Ibid, v.9.
9 Ibid, v.1-2
10 Ibid, v .5
11 Ibid, v.6
12 Ibid, v.11
13 Ibid, v.9-10
14 Ibid, v. 3-6

Bibliography:-

1. *Śrīmanta Śhaṅkaradevacharitam*, Sanskrit verse by Dr. Maheswar Hazarika, along with English and Assamese verse …published by Sri Suryakanta Hazarika, M. Com, S H Educational Trust, Tarun nagar

2. *Stutipraśastimanjarī*, with Swarnamayī commentary by Dr. Mukunda Madhav Sarma, published by Lokabhasapracar samiti

3. *Śrīmanta Śhaṅkaradeva bākyamit* - Surya Hazarika, Bani mandir

PROFESSOR DIPAK KUMAR SHARMA'S BHĀRATI VṚTTI: A REVIEW

Dr. Nilakshi Devi
Assistant Professor
Krishna Kanta Handique Government Sanskrit College
Jalukbari

The eminent Sanskrit Scholar Prof. Dipak Kumar Sharma, Ex. Vice-Chancellor of Kumar Bhaskar Varma Sanskrit And Ancient Studies University is the author of "Bharati Vritti" on 'Suvrittatilaka'. 'Suvrittatilaka' is an outstanding treatise on Classical Sanskrit metres authored by Kshemandra, a profile writer of Sanskrit. Dr. Sharma comprised this book with an introduction, Sanskrit gloss entitled the 'Bharati Vritti', English rendering of the texts besides an index of the Kārikās and the verses. This paper will project an idea on the 'Bharati Vritti' which is named on author's mother.

Key words: 'Suvrittatilaka', Metre, Bharati Vritti, Kshemendra,

Full Paper:

Introduction: The author Professor Dipak Kumar Sharma is an eminent scholar of Sanskrit. He is Ex. Vice Chencellor of Kumar Bhaskar Varma Sanskrit and Ancient Studies University and the Professor of Sanskrit Sahitya at Gauhati University. He is a brilliant student, teacher and guide. He is a recipient of a number of gold medals and awards, Dr. Sharma has to his credit a good number of research paper published in various journal as well as many articles in Assamese, English and Sanskrit in various newspapers and periodicals. His other books are- 1)Śeṣakṛṣṇa's Pārijātaharaṇacampū: A Study 2)Vṛttamālā of Kavikakarṇapūra 3)Durgāsaptaśati 4)Haribhaktitaranginī 5)Apāre Kāvyasamsāre 6)Satī

Jaymatī of Bhavadeva Bhagawati 7) Saṁskṛta- Nibandha – Nicayah 8)Narakasura (Drama) 9)Bhāskara (Drama) 10)Some translation Work and some Philosophical works etc. also credited to him.

Bhārati vṛtti: 'Bhārati vṛtti' is a beautiful gloss written in Sanskrit language by Prof. Dipak Kumar Sharma. It is not only a commentary but also a notes and description about the metres. This gloss is about the 'Kṣemendra's 'Suvṛttatilaka'. The great commentator Prof. Sharma mentioned himself in the introduction of this book that he is also one of those persons who are all praise for Kṣemendra.

The ' Bhārati vṛtti' starts with nine beautiful verses with Anuṣṭup metres. Biginning of this vṛtti the vṛttikāra prays to Lord Ganeśa and Saraswati (i. e. Bhārati).

Surairapi supūjitang lambodarang gajānanam.
vāgdevīng bhāratīncaiva jadyadoṣalayankarim..1

In the second verse, Prof. Sharma invokes Goddess Durgā as Trinayanī, Sureswarī and Candikā. Before starting the main commentary, the author offers his thanks to his parents Nabin Ch. Sarmah and Kamini Devi. He mentioned that his grandfather named his mother as ''Bhārati ''. So, he writes this commentary on his mother's name. cf-

Smārang smārang tadeva hi viracyate'adhunā mayā.
Bhāratīti samākhyātā vṛttih sukhārthabodhikā..2.

The Chandasāstra ' Suvṛttatilaka' is regarded as one of the outstanding works on Sanskrit prosody. 'Bhārati vṛtti' is a simple meaning of this Chandashastra. Kshemendra states that this book was also composed during the rule of King Ananta.

After these beautiful nine verses, Professor Sharma expresses a description of the first verse of 'Suvṛttatilaka'. Kṣemendra prays to Lord Śiva in the first verse of this book. Prof. Sharma mentioned some context from the writings of Vaijayanti, Bhattoji Dikṣitah and Bharata.

The second verse of first vinyāsa named as 'Vṛttāvacayo' follows the prayer of Lord Viṣṇu. In this vṛtti, Professor Sharma references, some lines from 'Agnipurāṇa', 'Śvetāśvetaropaniṣad', Vedāntaparibhāṣā and Saundaryālaharī.

Kṣemendra define the 'guru' and 'laghu' from the verse no 5. Sharma Sir describes these 'laghu' and 'guru varna' taking the reference from 'Chandamanjari' of Gaṅgādāsa. Regarding the description of 'laghu' and 'guru, Sahitya Academi award winner Sharma sir mentions some important ślokas from 'Pingaliya Chanda Shastra' and 'Srutabodha' also.

The metre containing seven syllables, consisting the ganas namely 'ja' and 'sa' and then 'ga' and having no yati is called 'Kumaralalita vṛttam'. This is the first vṛtta with seven letters. The prosodies mentioned about 'Vidyunmala', 'Pramāṇi', Anuṣṭup/Śloka metre consisting of eight syllables. The Śloka metre is a most commonly used metre. Professor Sharma mentioned about this metre that- 'yadi sarveṣu caturṣu caraṇeṣu pancamang akṣarang laghu bhavet tathā dvicaturthayoh dvitīyapādasya caturthapādasya ca saptamang akṣarang laghu bhavati punahśca ṣaṣṭham akṣaram sarvatreiva guru bhavati tarhi tat ślokasya tannāmakasya chandasah lakṣanamiti kathyate'.3 The metre called 'Anuṣṭubh' has many Gaṇas owing to his varieties.

The metre having nine syllables is 'Bhujagaśiśusṛtah', who have 'na' ' na' and 'ma'. The prosodies defines the Rukmavatī metre having ten syllables. Kṣemendra describes some metres with eleven letters. These are- Indravajrā, Upendravajrā, Upajāti, duṭaka, śālinī, rathotdhatā and svāgatā. The metre, containing twelve syllables and comprising the gaṇas namely 'ja', 'ta' 'ja' and 'ra' is called 'Vamśastha' by the Prosodists. Other metres which have twelve syllables is 'Drutavilambita'.

Praharṣiṇī have thirteen syllables. The author of 'Bhārati Vṛtti'efinition and explains it in this way- manajaraiḥ magaṇa- nagaṇa- jagaṇa- ragaṇaih samanvitaṁ yuktaṁ, tribhiḥ trisankhakaiḥ pūrvākṣaraiḥ ādyavarnaiḥ chinnaṁ viśrāntaṁ yati sampannang trayodaśākṣaraṁ trayodaśavārṇikang vṛttaṁ nāmnā sajῆāyā praharśiṇim iti kirtayanti varṇayanti vṛtta vidaḥ iti bhāvaḥ' 4 The metre comprising thirteen syllables and having the Gaṇas namely- ma na ja ra and ga, wherein the yati exists after the first three syllables is known as Praharṣiṇī. He mentions some other Chandaśāstram like- Vṛttaratnākaram, Chandamaῆjarī etc. In 'Suvṛttatilakam' Kṣemendra quotes a verse from his own writing as the example of this metre. Vasantatilaka have fourteen syllables. The metre, where have ta- bha ja – ja – ga and ga gaṇas is named as 'Vasantatilaka'. Prof. Sharma says that –'Vasantatilaka siṅhodhata siṅhomatā udgharṣiṇī ityevamapi vṛttamidaṁ kathyate. 5 The metre containing fifteen syllables and comprising the gaṇas na-na-ma – ya and ya having yati after the eight syllables is called Mālinī. The talented honorable Vice-Chancellor mentions many contexts from other books like 'Āgneyachandasāra, Chandamaῆjarī'. The definition of 'Mālinī' from 'Suvṛttatilaka' is very identical. The 'yati' gaṇas and total syllables are clearly mentioned in the definition itself. Narkuṭa, pṛthvī, hariṇī, śikhariṇī and mandākrāntā have seventeen syllables. In 'Narkuṭa' metre, the 'yati' is not mentioned in 'Suvṛttatilaka' but Prof. Sharma mentions about the 'yati' after seventh and tenth syllable. He gives it from 'Vṛttaratnākara'. Kṣemendra quote some verses as the example of these metres from his own writings. Śārdūlavikrīdita have 19 syllables. The metre, bearing the gaṇas viz. ma- sa- ja- ta –ta ga is called Śārdūlavikrīdita, wherein the yati exists after twelfth and then seventh syllable. 'Bhāratī Vṛtti' consists of not only one definition but other definition from 'Agnipurāṇa', Chandamaῆjarī, Vṛttaratnākara also. Again sragdharā have

twenty one syllables. The metre comprising ma- bha- na-ya-ya and ya gaṇas is called Sragdharā, wherein the yati exists after each of seventh syllable. After these difinitions of various metres the Prosodists narrate about the simplicity and charming of these metres. There are many scopes in literary works opted by the best of the poets.

The second chapter is 'Guṇadoṣa Pradarśanam' of 'Suvṛttatilakam'. The merits and demerits are discussed in this chapter. There is no use of 'yati' in metres containing only six or seven syllables. Here, the author Kṣemendra mentions this with a simple and sweet comparision. As a female black bee cannot sit on the narrow edge of the bud of a jasmine, blossomed a fresh, similarly speech does not have a break in metres containing six or seven syllables. In respect of the varities of Anuṣṭubh, the general feature that fifth syllable should be laghu and the sixth should be guru, is being ascertained by some prosodists. Still, its exception is noticed in the writing of the great poets even; hence, in such cases emphasis should be laid upon its charming quality in a general way.

In case of 'Upajāti' metre, the admixture of various metre is accepted in various varieties, yet the first letter of the first quarter should be a laghu. In 'Dodhaka ' metre there are pauses after three syllables. Cf-tryakṣaraivirāmatvāt vṛttasaundaryang pariṣphuṭam' 6 B.V. P-31). According to Kṣemendra the Śālinī metre shining with syllables loosely knit; it should be intensified carefully as the flame of a lamp with faded light. The author uses the suffix 'Śatṛ' and 'Visarga' in this metre. It indicates the slight harshness. 'Śālinī vṛtte ślathabandhatvang pariharanīya' means that- As the hunger of a person having stomach disorder, comes to decrease with the consumption of milk, similarly the charm of the metre Śālnī also decreases with its loosely knit nature. Honorable vice-chancellor sir draws the attention by mentioning about the Swagata metre. In this metre, all the quarters starts with ā

syllable and ends with 'visarga'. cf- 'ślokeatra pratyekapāde ādau sākāravarṇaprayogena, ante ca visargaprayogena svāgatāvṛttang camatkāritvang bhajate'.7 Prof. Sharma sir explains the ślokas of Kṣemendra on this commentary about the specialties of all the metres.

The third chapter of 'Suvṛttatilaka' is named as 'Vṛttaniyoga'. The whole literary creation has four fold divisions. Viz.- Śāstra, Kāvya, Śāstra Kāvya and Kāvyaśāstra. Some scholars consider a Śāstra par excellence also as a Kāvya, as a medicine of bitter taste coated with little particles of molasses at the top. An expert in the division should employ all the metres in consideration of the contextual rasas and also the objects of descriptions. Cf- 'sarvavṛttānāng sarveṣāng chandasāng, viniyogang vyavahārang, vibhāgavit kāvyādibhibhāgacatuṣṭya vijnātā kurvīta kuryāt.' 8 There are many reasons for the employment of various metres in this Chandaśastra. The metre 'Śikhariṇi' applied by Bhavabhūti with spontaneous flow.

Conclusion: Honorable Ex- Vice chancellor Professor Sharma is an excellent teacher, Guide, Administrator, Planner, Poet, Sanskrit Scholar, Philosopher, Grammarian, extra ordinary Translator and a very good speaker in English, Assamese and Sanskrit. 'Bhārati Vṛtti' is a exceptional treatise of Professor Dipak Kumar Sharma. His knowledge on Sanskrit prosody is always praiseworthy. He himself used Anuṣṭubh metre in his composition of 'Bhārati Vṛtti ' also. In his 'Bhārati Vṛtti' he gives the importance in the separate definition of various metre in various Chandaśāstra. Respected sir draws the qualities in the second chapter of 'Suvṛttatilaka'.

References:-

1. Verse no-1, chapter -1 Bhārati Vṛtti 'Suvṛttatilaka' of Kṣemendra

2. Verse no-5 , chapter -1 Bhārati Vṛtti 'Suvṛttatilaka' of Kṣemendra
3. Page. No-9 chapter -1 Bhārati Vṛtti 'Suvṛttatilaka' of Kṣemendra
4. Page. No-17, chapter -1 Bhārati Vṛtti 'Suvṛttatilaka' of Kṣemendra
5. Page. No-18, chapter -1 Bhārati Vṛtti 'Suvṛttatilaka' of Kṣemendra
6. Page. No-31, chapter -1 Bhārati Vṛtti 'Suvṛttatilaka' of Kṣemendra
7. Page. No-35, chapter -1 Bhārati Vṛtti 'Suvṛttatilaka' of Kṣemendra
8. Page. No-64, chapter -1 Bhārati Vṛtti 'Suvṛttatilaka' of Kṣemendra

BIBLIOGRAPHY:-

Sharma Dipak Kumar, 'Suvṛttatilaka of Ksemendra' ,2007, New Bharatiya Book Corporation, Delhi.
"Chandamanjari" of Gangadasa,1976, Chowkhamba Sanskrit Series Office, Varanasi,1976.

GLIMPSES OF PRAKĀMAKĀMARŪPAM: A WORK OF ĀCĀRYA MANORAŇJAN ŚĀSTRĪ

Dr. Arundhati Goswami
Assistant Professor, Department of Dharmasastra
K.K.H. Govt. Sanskrit College
Guwahati, Assam

INTRODUCTION:

The work *Prakāmakāmarūpam* was composed by the eminent Sanskrit scholar Ācārya Manoraňjan Śāstrī. Ācārya Manoraňjan Śāstrī was a versatile scholar of the 20th century of Assam and also the recipient of the Presidential Certificate Award. The poet composed this work on the basis of glorious history of Assam from ancient times to the present. Scholars consider this work as Sanskrit *mahākāvya*. The work is a valuable document of different traditions and cultures of ancient Assam, presently known as north eastern region of India.

AUTHOR:

Ācārya Manoraňjan Śāstrī was born at Bheruwa village of Darrang District of Assam in 1911 and died in 1988 in Nalbari District of Assam. His father’s name was Late Shyamadeva Sarma and Late Bhogeswari Devi was his mother. He lost his mother in his early childhood and he was brought up by his grandmother.

The great reputed scholar of Assam, Ācārya Manoraňjan Śāstrī was the first recipient of the Presidential Certificate Award from Assam for his excellent contribution towards Sanskrit studies in Assam. Besides this, Ācārya Śāstrī also received various *upādhis* from

different institutions viz., *Smṛti-ratnākara-upādhi, Smṛti-tīrtha, Dharma-ācārya, Vedānta-sāstrī, Vedānta-tīrtha* etc.

Ācārya Manorañjan Śāstrī was the founder principal of Nalbari Sanskrit College in 1938. He was also the visiting professor of Sanskrit Department of Gauhati University for many years. He also joint as visiting professor of Assam Sanskrit College in 1971 for many years which is now known as Krishna Kanta Handique Goverment Sanskrit College.

WORKS of Ācārya Manorañjan Śāstrī:

Ācārya Manorañjan Śāstrī composed various notable works in Sanskrit, Assamese and English languages. Ācārya Śāstrī was an expert in innumerable disciplines like *kāvya*, *smṛti*, *darśana*, *vyākaraṇa* etc. His genius works endowed with variety of poetic talent. His Sanskrit works include the *Prakāmakāmarūpam*, the *Patākāmnāyah*, the *Utaṅkabhaikṣyam* and the *Ketekīkāvyam*. Among these, the *Prakāmakāmarūpam* is based on the history of Assam which is the motherland of the poet.

The poet composed the *Patākāmnāyah* in 171 verses in *anuṣṭup* metre on our national flag and national anthem. This work was first published in 1965. In this work, our national flag and national emblem have been interpreted from different perspectives and given spiritual status. The work clearly established the scholarly knowledge of the poet in different branches of philosophy like *Nyāya*, S*āṁkhya, Mīmāṁsā,Vedānta, Jaina and Buddha.* This work is divided into two parts – *Pūrvārdha* in 100 verses and *Uttarārdha* in 71 verses, devoted to the

national emblem and national flag respectively. The author describes the inner meaning and significance of the tri-colour of the flag along with the significance of the four lions found in the *Aśoka stambha.* The poet also wrote a commentary on the poem named as *Patākā Prakāśa*. The Assamese version of this work was published in 1956.

The *Utaṅkabhaikṣyam* is one act play on the story of Utaṅka who was a student. The story of this play is relates to offering of a pair of ear-rings (*kuṇḍala*) to the wife of his guru as *dakṣiṇā*. This story is adopted from the *Bhāgavatpurāṇam*. This work was first published in the journal of Assam Sanskrit College.

The *Ketekīkāvyam* is a translation work of Ācārya Manorañjan Śāstrī of 187 poem in five cantos known as *taraṅgas.* This book is the translation of the famous Assamese poem *Ketekī* of Raghunath Choudhary who was known as *vihagī kavi* (poet of birds). *Ketekī* is a bird and it sings in the spring season. The poet imagine the voice of the bird as the messenger of spring. Through the bird the poet describes the mental condition of different persons in various situations. This poem is not only a follow up to the original work, but also an innovative creation of the poet in excellent Sanskrit poetry. This work is the first attempt to translate Assamese poetry into Sanskrit.

Ācārya Manorañjan Śāstrī also composed some minor poetic works in different occasions on varied subjects. Some of these compositions have been published as *praśasti*, introduction etc. in journals and some felicitations volumes. Besides these Sanskrit works, Ācārya Śāstrī composed many books on *smṛti*, *darśan*, *kāvya*, *jyotiṣa* and other topics. Ācārya Śāstrī composed more than

four hundred *praśasti* verses in Sanskrit. His notable edited books in Sanskrit are *Smṛti-jyotiṣa-sāra-saṁgraha* (published in 1964 on *Dharmaśāstra*), *Smṛti-sāgara-sāra* (based on *Jyotiṣaśāstra)*, *Jyotirmālā* (based on *Jyotiṣaśāstra*), *Smṛti-jyotiṣa-saṁgraha* (based on *Dharmaśāstra*), *Grahaṇakaumudī* (based on *Dharmaśāstra*) etc.

Besides these Sanskrit works, Ācārya Manorañjan Śāstrī composed many articles and books in Assamese and English languages. His notable works in Assamese literature are *Asamar Vaiṣṇav Darśanar Rūprekhā, Puraṇi Asamar Dharma āru Darśan*, *Sāhitya Darśan, Vākyārthabodh*, *Buddhacarit, Kumārila Bhaṭṭapād āru ācārya Dharmakīrti*, *Vaidik Darśanar Rūprekhā* etc. Through the first two books, Ācārya Śāstrī clearly explained the history of *dharma* and *vaisnavism* in historical perspective. Then the third and fourth books are the scholarly explanation of *alṁkāra* and verbal knowledge by using both Assamese and Sanskrit examples. A comparative study of Kumārila and Dharmakīrti was found in *Kumārila Bhaṭṭapād āru ācārya Dharmakīrti*. The life of Gautama Buddha was described in a befitting way in the work *Buddhacarit.*

The *Prakāmakāmarūpam*- A Brief Study :

The work *Prakāmakāmarūpam* is the best composition of Ācārya Manorañjan Śāstrī. The author describes famous events, communities and personal portraits of *Kāmarūpa* in this book in a very lucid manner. This work is first published in the journal *Prācyabhāratī* of

Assam Sanskrit Board as a serial. Then the board published this work as a book in 1990.

Kāmarūpa is the former name of undivided Assam which is also the motherland of the author. It has own rich heritage of religion, culture and civilization. In this work *Prakāmakāmarūpam*, author Śāstri depicts the glory of this land with historical evidence. The work consists of nine cantos named as *ucchvāsa* in various metres in one hundred and seventy five (175) stanzas. Each canto describes an era or an event of the place *Kāmarūpa.* The first chapter of this book is named as *Kāmarūpavarṇanam.* After composing *maṅgalācaraṇam* on *Vāgdevī Sarasvatī*, the author discussed the name of the place, i.e., *Kāmarūpa.* It is named as the god of love – *kāma*, having his body burnt from ashes, regained the body by the grace of gods in this land.[1] Then the another name of this land i.e., *Prāgjyotiṣapura* is explained.[2] This land is famous as *Prāgjyotiṣapura* only because the creator created the stars at the time of creation in this land. *Asama*, the another name of this land is also described by the author.[3] The area of this land is endowed with so many high hills and mountains. This land is also not compared with other part of the country because of its habitant, people of various tribes with their different religion, culture and livelihood. Again, the land has varied natural beauty with various flora and fauna. Hence this land is called *na sama asama* which means it is not equal. Then the poet beautifully depicts the scenario of the village of Assam. The thatched houses of villages are adorned with various types of fruits and betel nut-bamboo gardens.[4] This land is the abode of different types of animals and birds, like elephant, lion, rhino,

various deer, pigeon, cuckoo, parrot, crane, peacock etc.[5] Apart from these, this land has rich heritage of plants and paddy fields. The work nicely depicts the scenario of tea gardens and other gardens like orange, lemon etc.[6] The land also produces petrol (*mṛttaila*), kerosin, coal (*kowala*) and other minerals (*khanidāhyapadārtha*).[7] The *bihu* dance with its importance is also explained very lucidly by the poet. The mighty river Brahmaputra is described as heart of people. But sometimes this river is very furious in rainy season. Both destruction and holiness of river Brahmaputra is mentioned very poetically. In this context, the poet characterized the habitant of this land. Both men and women are adept in *dharma, artha* and *kāma* – '*dharmārthakāmanipuṇāh satataṁ prayatnā'*.[8] According to the poet, all men are handsome, laborious, pious and famous. Women of this land are expert in weaving and singing.[9]

The second chapter, named as *Kāmarūpa-māhātmyavarṇanam,* describes the greatness of *Kāmarūpa.* This land is a famous place of *Śakticult.* Many sacred places of mother goddesses scattered in this land *Kāmarūpa.* The work also deals with the various *pīṭhas* of Assam. The eastern part of this land is known as *Saumārapīṭha.* Here sage *Bhārgava* got initiation from lord *Śiva* in the *kaula* cult and became the chief preceptor of *kauladharma.* The poet also mentioned about the salvation of sage *Vaśiṣṭha* in the *Vaśiṣṭhāśrama* according to *kauladharma.* In the western part of *Saumārapīṭha*, *Ratnapīṭha* existed. Here mother goddess *Kāmākhyā* has her abode with *yoginis* in *Nīla* hill. Besides these, many temples and *pīṭhas* are described with its importance in this

chapter. *Aśvakrānta,* situated in the northern bank of river Brahmaputra, is famous for performing *śrāddha* of forefather for salvation - *aśvakrāntābhidhānastadiha pitṛgaṇastaryyate śrāddhadanaih.*[10] The temple of *Hayagrīva Mādhava,* the horse mouth god, is situated in *Maṇiparvata* at the centre of *Kāmarūpa.* In this place, the great sage Nāgārjuna practiced penance. Here the poet describes the *kauladharma, viṣṇudharma, tantravidyā, śrautadharma* very clearly. Apart from this, many sages, writers, philosophers and scholars are narrated. Some of them are *Matsyendranātha, Dharmakīrti, Kumārilabhaṭṭa, Abhinavagupta, Sarvajňanārāyaṇa, Nīlāmbarācārya* etc.

The third chapter named as *Bhārgavakṣetravarṇanam*, describes the holy places of North-east part of *Kāmarūpa* from *Paraśurāmkuṇḍa* to Manipur which is mentioned by the poet as *Bhārgavakṣetra.* At first, the poet describes the geographical description of mighty Brahmaputra where from the river flows in an excellent poetic manner. In this context, the poet refers different tribes of this region like *Ābara, Micimi, Nagā, Dafalā, Akā, Gālaṅg, Āpāṭani, Nakṭe, Manpā, Khāmṭi, Khāsi, Gāro, Kuki, Mizo, Mikir* etc.[11] Though these tribes have different culture, customs, habits, rituals, languages, dress etc., they live together by sharing their customs. These descriptions are depicted in very lively way. The birth legend of *Pālakāpya*, the composer of *Hastividyārṇava*, the book on science of elephant, is also included in this Chapter. Again the poet mentions about the marriage of *Arjuna*, third *Pāṇḍava* with *Citrāňgadā*, queen of Manipur.

In the fourth chapter, the South east part of *Kāmarūpa* is described. This land is called as *Saumārapīṭha*. Here various rivers and temples of this area are nicely depicted with the legends behind it. In course of these description, the poet refers many Royal dynasties of ancient Assam with the historical facts. Apart from these, the eminent *Vaiṣṇva* saints like *Śaṅkaradeva, Mādhavadeva, Dāmodaradeva,* the biggest river island Majuli, Kaziranga – the habited of one horn rhino are described in this chapter.

The South west part of *Kāmarūpa* is described in the fifth chapter. Here, modern Cachar district is called as *Hirimbāpura* (city of *Hirimbā*). In this royal court of *Hirimbāpura*, the great Assamese poet *Mādhava Kandalī* composed the Assamese *Rāmāyaṇa* which is recognized as the first translation of *Rāmāyaṇa* in regional language. The legend of *Ghaṭotkasa*, son of *Hirimbā* and *Bhīma*, is also described. The places named by *Khāsī* hill, *Caṭṭala* and *Tripurā* also traced as the abode of different communities with their characteristics. Notably in the temple of *Jayantī,* goddess is still worshipped with flesh and blood according to the *Kaula* cult.

The sixth chapter is full of description of the religious places of the north bank of the river *Lauhitya*, i.e. Brahmaputra. This part of this state is called *Kāmapīṭha* which include the region of Bhālukpung to Kamatāpur. This chapter is a store house of geographical data of ancient Assam. It describes the rivers, mountains, different *pīṭhas*, *satras*, temples etc. which are located in this region. Many valuable works are composed by the scholars under the patronage of various kings. The poet also mentions the

glorious ruling of ancient kings of Assam. Atlast the poet describes the traditional divisions of *Kāmarūpa* into so many *pīṭhas* with their boundaries.

In the seventh chapter, the poet describes the holy places of middle part of *Kāmarūpa*, specially the temples around Guwahati. The centre of *Kāmapīṭha* is also called *Kubjikāpīṭha.* Here the famous temple of *Śakti* cult, *Kāmākhyā* is situated with her *daśamahāvidyā* as chief deity. Besides this, many other temples of Guwahati and its nearby areas are also described with the history behind it. Some of these are *Navagraha* temple in *Kajjaparvata,* many temples in *Maṇiparvata*, *Sūryapāhār, tukreśwrīparvata* etc. In course of these discussion, the poet mentions many kings of different dynasties of ancient Assam.

The eight chapter of the work denotes to the life span of the great philosopher *Kumārilabhaṭṭa.* The poet established *Kumārilabhaṭṭa* as a scholar from *Kāmarūpa*. Here poet mentioned that *Kumārilabhaṭṭa* and king *Bhāskaravarmaṇa* were contemporaries.

The ninth chapter of this book contains the description of the Western most part of *Kāmarūpa* which is known as *Ratnapīṭha.* This chapter is full of information of ancient kings who ruled over this land. This land was ruled by the famous kings like *Amrūtarāja, Sankalādiva, Kedāra Brāhmaṇa, Biśvasiṅgha* etc. King *Naranārāyaṇa,* son of *Biśvasiṅgha* and his brother *Cilārāi* from *Koch* dynasty were very famous for their heroism and patronage to learning.

The work *Prakāmakāmarūpam* is considered as the best composition of Ācārya Manorañjan Śāstrī. This work

is composed in classical style. He express his poetic excellency by the use of different metres like *upajāti, mandākrāntā, vasantatilakā, vaṁsasthavilva, mālini, śārḍūlavikṛīḍita, śikhariṇī* etc. The following verse is an example of *upajāti* metre –

guṇe bhavānī vacane ca vāṇī
dāve'nnapūrṇā niyame tvaparṇā /
śīle ca lakṣmīh sahane dharitrī
devyah samastā iha yoṣidekā //[12]

The poet also uses many figures of speech to enhance the poetic beauty of poem like *upamā, utprekṣā, anuprāsa, rūpaka, kāvyliṅga* etc. The following verse indicates the poet's mastery of using *anuprāsa alaṁkāra* in right purpose-

Nivasatāmiha sajjanasaṅgatah
laluṣateva hutāśanamadhyatah /
Vilayameti ca dānavatā satāṁ
mānavatā navatāṁ tatah //[13]

From the work *Prakāmakāmarūpam*, it is observed that Ācārya Manorañjan Śāstrī had immense knowledge of various branches of Sanskrit. He described the life of a common people who cultivated and produced crops etc. in very lucid way. Again description of the scenario of mountains, hills, rivers, temples, different ethnic communities and their customs are highly appreciable. Besides these, the poet describes geographical descriptions with historical events. The following verse is an excellent example –

Kaścitkumāramanu bhāskaravarmanāmā

dharmārthakāmanipuṇo'jani martyaloke /
yo bhūmimaṇḍalamalaṁkṛtavāṁśca rājā
tadvaṁśabhūṣaṇamaṇih sa janairamāni //[14]

The poet brought to light in course of study and research of the ancient scriptures of Assam to describe many historical facts. So this work is considered as a valuable document of traditions and cultures of ancient Assam.

The poet was a versatile scholar of post-independence period of Assam. But many of his works have not been published. Among them, his Sanskrit composition *Ṭīkā* on *Śāvarabhāṣya* of *Jaiminīsūtram* is notable. The fame of this great scholar of Assam is not been revealed to the scholars' society. Through this paper, it is a very simple attempt to introduce Ācārya Manorañjan Śāstrī to the scholarly world.

References:-

1. *maheśanetrānaladagdhadehī*
   jagāma kāmah punarātmarūpam /
   purā surāṇāṁ varato yato'smiṅ
   statkāmarūpadeśamāpa // Prakāmakāmarūpam, I.4
2. *sargādikāle prathamaṁ vidhātā*
   jyotirgaṇaṁ nirmitavān yato'tra /
   prāgjyotiṣaṁ nāmata eṣa deśo
   bhūmaṇḍale khyātimavāpa tasmāt // Ibid., I.5
3. *asāmyatah parvatabhūvibhāgād*
   vaividhyato mānavajātibhedā /
   vairūpyatah prākṛtacitrarūpāt
   atulyato'nyairasameti nāma // Ibid., I.6

4. *tāmbulavallīpariṇaddhapūgaih*
   sanālikeraih panasairrasālaih I
   pūṇāni Yasmin gṛhakānanāni
   vīthīkṛtairveṇubhirāvṛtāni II *Ibid.,* I.13
5. *Ibid.,* I.7 & 8
6. *Ibid.,* I.15
7. *mṛttaila-kerosina-kovalānāṁ*
   snehānvitānāmapi cetaṣām I
   ayaṁ khanirdāhyapadārthajātaṁ
   sambhāvayaṁstiṣṭhati ratnagarbhah II *Ibid.,* I.18
8. *Ibid.*, I.43
9. *Ibid.*, I.42&43
10. *Ibid.,* 2.11
11. *Ibid.*, 3.15&16
12. *Ibid.,* I.21
13. *Ibid.,* II.27
14. *Ibid.,* VII.27

BIBLIOGRAPY:-

1. Śāstrī Ācārya Manoraňjan, *Prakāmakāmarūpam*, 1st Edition, Assam Sanskrit Board, Guwahati- 29, 1990
2. Śāstrī Ācārya Manoraňjan, *Patākāmnāyah,* 1st Edition, Assam Govt.,1965
3. Śāstrī Ācārya Manoraňjan, *Puraṇi Asomor Dharma Āru Darśan,* 1st Edition, Guwahati, 1990
4. Śāstrī Ācārya Manoraňjan, *Sāhitya Darśan*, 8th Edition, Chandra Prakash, Guwahati, 2017
5. Śāstrī Biśvanārāyaṇ, Sanskrit in Assam through the ages, translated by Kiran Sarma, 1st Edition, Asom Sanskrit Mahasabha, Guwahati- 3, 2004.

आचार्य अमृतलाल भोगायताका व्यक्तित्व एवं कृतित्व

डॉ.अमिषा हर्षलभाई दवे
असि. प्रोफेसर, श्री सोमनाथ संस्कृत विश्वविद्यालय

संस्कृतसाहित्ये विविधसाहित्यकारैः स्तोत्रसम्बन्धिशतकस्य, प्रशंसापरकशतकस्य, नीतिसम्बन्धिशतकस्य, वैराग्यसम्बन्धिशतकस्य तथा च शृङ्गारसम्बन्धिशतकस्य च रचना कृता वर्तते। भोगायता महोदयस्य शतकानि नाम्ना एव ज्ञायते यत्- आधुनिकशतकानि सन्ति।

नाम- अमृतलालः गौरीशङ्करः भोगायता

जन्म- चूरम्, जनपदम् - देवभूमिद्वारका/जामनगरम्) गुजरातराज्यम्

पितरौ- गौरीशङ्करभाई, धीरजबेन च

शिक्षा- शास्त्री, शिक्षाशास्त्री, पुराणाचार्यः, साहित्याचार्यः, एम.ए. (व्याकरणाचार्यः), एम.फिल, पीएच.डी.(विद्यावरीधि)।

कविश्रीअमृतलालः भोगायता एकः सुकृतिः तथा रससिद्धकविः अस्ति, विद्यादेव्या स अलङ्कृतः। आधुनिकसंस्कृतसाहित्ये तस्य प्रतिभा वहु प्रकाशते। कवेः कीर्तिः आसेतु हिमालयादारभ्य विदेशे च (आफ्रिकादेशे थाईलेण्डदेशेश्च) धर्मप्रचारः अपि प्रसिद्धा वर्तते। आधुनिकसंस्कृतमाहित्ये सर्वे जानन्ति यद् एपः कविः प्रतिपन्नाबुद्धिः अस्ति, कविगोष्ठीमध्ये एषः नायकरूपेण शोभते। असामान्यया प्रतिभया संस्कृतसाहित्ये आधुनिकसंस्कृतकविपरम्परायां भोगायता महोदयः सर्वश्रेष्ठं पदमलङ्करोति। तदिदम् अस्य कवेः संपूर्ण विलक्षणम् अस्ति तस्य नम्रता, सहजबन्धुता, निरहङ्कारिता एवं मित्रवत्सलता।

कवेः जन्म गुजरातप्रदेशस्य ऐतिहासिकजामनगरजनपदे (वर्तमानकाले-देवभूम्मिद्वारकाजनपदे) सानीनद्याः पार्श्वस्थितत्चूरग्रामे भारद्वाजगोत्रे अभवत्। अस्य पिता पण्डितगौरीशंकरः तथा माता महीयसी धीरजबेन वर्तेते। कवेः कुलदेवी शङ्खासुरविघातिनी पराम्बा हरसिद्धिदेवी वर्तते। शुक्लयजुर्वेदस्य माध्यन्दिनीशाखायाः सः विप्रः विप्रवरवान् अस्ति। तस्य दीक्षागुरु पण्डितः श्रीकौण्डीन्यमहाभागः वर्तते, तेषां शिष्यपदं यथार्थशिष्यरूपेण भोगावतामहोदयः अलङ्कृतवान्। बाल्यकालादेव पितृस्नेहेनसंस्कृताध्ययने अधिका रुचिः प्रस्फुरिता तेनैव कारणेन कविना देववाणी जीवनाय अपि चितः। वरतन्तुसंस्कृतविद्यालयतः संस्कृतविषयं स्वीकृत्य समग्रबृहद् गुजरातमंस्कृतपरिषदि प्रथमश्रेण्यां प्रथमस्थानमप्राप्तम्। तथा स्वगुरोः डॉ.वसन्तकुमारभट्टमहोदयस्य मार्गदर्शने "शिशुपालवधस्य सन्देहविषौषधि-सर्वाङ्कषाटीकयोर्विवेचनात्मकम् अध्ययनम्" विषयं स्वीकृत्य विद्यावारिधि (पी. एच.डी.) उपाधिः प्राप्ता। ततः संस्कृतप्रवक्तारूपेण नारायणसंस्कृतमहाविद्यालये, भाविनसंस्कृतमहाविद्यालये, निर्माण हायरसेकण्डरीविद्यालये च नियुक्तः। श्रीसोमनाथसंस्कृतविश्वविद्यालये प्रवक्तृरुपेण (आसी. प्रोफेसरः), पुराणसङ्कायाध्यक्षरूपेण (वेरावलनगरम्) अध्यापनकार्यं कृतम्। साम्प्रतं श्रीब्रह्मर्षिसंस्कृतमहाविद्यानये प्रधानाचार्यः (नडीयादनगरम्) अध्यापनरतः वर्तते।

कृतित्वम्-

डॉ. भोगायता महोदयस्य सारस्वतगाथा अनेकया दृष्ट्या विलक्षणा वर्तते। तेषां साहित्योपासनायाः प्रारम्भः शिशुकालादेव जातः। साहित्योपासनायाम् इदानीं पर्यन्तं कवेः प्रायश: नैकानि संस्कृतशतककाव्यानि, गीतावली, स्मरणांजलि:, स्तोत्रकाव्यानि, वक्तव्यानि च संस्कृतपत्रिकासु लेखाः प्रसिद्धिं प्राप्ता:।

ग्रन्थप्रकाशनम्-

भूधातुरूपाणां वैविध्यम्, अभिनवं शृङ्गारशतकम्, अभिनवं वैराग्यशतकम्, अभिनवं नीतिशतकम्, भूधातुविवेचनग्रन्थः स्तोत्रकाव्यानि, प्रशस्तिकाव्यानि, अमृतकाव्यामृतम्, लेखसङ्ग्रहः, शिशुपालवधस्य सन्देहविषौषधिसर्वांकषाटीकयोर्विवेचनात्मकम् अध्ययनम्।

अभिनवं वैराग्यशतकम् अभिनवं शृङ्गारशतकं च

अभिनवं वैराग्यशतकं भोगावता महोदयानां "तेन त्यक्तेन भुंजीथाः" सूक्तिमनुसृत्यरचितं प्रथमं शतकं वर्तते, यद्यपि युवावस्थायां शृंगारं प्रत्याकर्षण सहजतया जायते किन्तु तत्र यदि वैराग्यरुपेन्द्रधनुषः रंगानामुपस्थितिर्भवेत् तर्हि जीवनस्य सार्थक्यं जायते। शृङ्गारसवर्णनार्थं "शृंगारीचेत् कविः काव्ये जातं रसमयं जगत्" इति वचनाद् शृङ्गारवर्णने काव्यरचनायां च डॉ. भोगायता महोदयः यथा संस्कृतभाषायां प्रावीण्यमाधत्ते तथा काव्यरचनायामपि नैपुण्यमाधत्ते। भारतवर्षस्य वसुन्धरा निरन्तरमलौकिकं कार्यं कुरुते। विश्वस्मिन् यत्किमणि आश्चर्यकर्म वर्तते संस्कृतकाव्यक्षेत्रे मानदण्ड इव विराजते। गुर्जरराज्यसंस्कृतजगति भोगायतामहोदयः आधुनिककालिदास-पदवीमलङ्करोति, कारणं यत् आधुनिकयुगे अगणिताः वन्दनीयाः कवयः सन्ति, केचन श्लेषप्रयोगकुशलाः, केचन अर्थगौरवससन्निवेशदक्षाः, केचन ग्रन्यग्रन्थिरचनचतुराः, परन्तु कालिदासस्य स्थानं नैते लभन्ते, केवलम् अमृतभोगावतामहोदयं विहाय, अतएव भोगावता महोदयः अभिनवकालिदासरूपेण संस्कृतक्षेत्रे प्रसिद्धिं लभते।

भूधातुरूपाणां वैविध्यम्-

महामतिः पाणिनिः शब्दागमनिधिं जगद्गुरु साम्बशिवं प्रसाद्य व्याकरणज्ञानं लेभे इत्यनुश्रूयते अनुभूयते च तेषाम् अष्टाध्यायी रचनया। तेष्वपि साधुशब्दविषये अभियुक्तोक्तिः वर्तते यत्- "एकः

शब्दः सम्यग्ज्ञातः सुष्ठु प्रयुक्तः स्वर्गे लोके च कामधुग् भवति” इति। शब्दस्य का प्रकृतिः का च प्रत्ययः इत्यस्य ज्ञानम् अपेक्षितं भवति, अर्थात् प्रकृतिप्रत्ययज्ञानाय एव व्याकरणाध्ययनम् एव उपायः। इत्थं व्याकरणशब्दस्य व्युत्पत्तिरसति -व्याक्रियन्ते व्युत्पाद्यन्ते शब्दाः अनेन इति व्याकरणम् (वि+आङ्+कृ+ल्युट्)। वैयाकरणाः सर्वानपि शब्दान् धातुजाननुमन्यतेस्म तत्र पाणिनिः शब्दानां व्युत्पन्नत्वमपि स्वीचकार ‘अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकमिति कथने कृत्तद्धितसमासाश्च' इति योगेन। शब्दानां प्रकृतिप्रत्यवविभागः काल्पनिको यथार्थो वा स्यात् व्याकरणं तु शब्दानां प्रकृतिप्रत्ययविभागद्वारा साधनेन सह सम्बद्धम् । तत्र प्रकृतिर्मूलम्। यस्मात्प्रत्ययविधिः कल्प्यते सा प्रकृतिः। तेन हि समस्तशब्दानां कृदन्नतद्धितान्तशब्दा एवं प्रकृतिः। तद्धितान्तशदानां कृदन्तशब्दा एवं प्रकृतिः। कृदन्तशब्दानाञ्च धातवो हि प्रकृतिः। तेनैव सर्वेऽपि शब्दाः धातुजाः। धातवो हि भूवादयः, विविधानां शब्दरूपाणां धारको धातुः। धातोः उल्लेखः प्रकटनं वा कथं कर्तव्यम्- इक्-श्तिपौ धातुनिर्देशे इति बार्तिकम् अस्ति, धातुः प्रकटनीयः चेत् तेन इक् इति प्रत्ययः योजनीयः अथवा श्तिप् प्रत्ययः योजनीयो भवति। यथा- इक् योगं कृत्वा गम् धातुः गम्+इ=गमि। गमिशब्दः पुल्लिङ्गः भवति, गमिः इति प्रथमान्तं रूपं भवति। मिदेर्गुणः इत्यादिस्थाने मिद्+इ=मिदिः, तस्य षष्ठ्यां मिदेः इति रूपं भवति । श्तिप् प्रत्ययः कर्तरि भवति। भू धातुतः श्तिप् प्रत्यययोगेन ‘भवति' इति शब्दः (प्रातिपदिकम्) निष्पद्यते। तस्य विभक्तिरूपाणि भवन्ति, अत एव “भवतेरः" इति सूत्रे भवतेः इति षष्ठयेकवचनं संभवति। तेनैव भवति शब्दस्वरूपं यः स धातुरिति। गणाश्च भ्वादि-अदादि-जुहोत्यादि-दिवादि-स्वादि-रुधादि-तुदादि-तनादि- अदादि चुरादयो येषां विकरणा, क्रमेण शप्लुक्-श्लु-श्यन्-श्नु नं-श-उ-श्ना-णिचः। शब्विकरणः सार्वत्रिकः कर्तरि प्रयोज्यः। अदादिगणे तस्य लुक् भवति जुहोत्यादौ श्लुः, दिवादौ शपं बाधित्वा श्यन् भवति एवमेवान्यत्रापि। चुरादौ

णिचोऽनन्तरं शबपि भवति। तेन भवति, अत्ति, जुहोति, दीव्यति, सुनोति, रुणद्धि, तुदति, तनोति, क्रीणाति-चोरयति इति लटि तिपि रूपाणि भवन्ति। तत्रापि धातवः स्वप्रकृत्यनुसारेण परस्मैपदिन आत्मनेपदिन उभयपदिनश्च सन्ति। एक एवापि धातुरर्थवशात्पदान्तरं भजते। यथा भूधातुः। सतार्थे परस्मैपदी यथा भवति, प्राप्त्यर्थे आत्मनेपदी यथा बभूव। उभयपदिषु कर्तृगामिनि क्रियाफले आत्मनेपदिनः परगामिनि तु परस्मैपदिनः। यथा करोति, कुरुते। इत्वं क्रियापदस्य मूलरूपं धातुः इति उच्यते। भवति इत्येतस्य क्रियापदस्य मूलरूपम्/धातुः अस्ति भू इति। संस्कृते २२०० धातवः सन्ति। एतैः धातुभिः सह ये आख्यातप्रत्ययाः योज्यन्ते ते द्विविधम्- 'परस्मैपद' 'आत्मनेपद' च। यैः धातुभिः सह आत्मनेपद आख्यातप्रत्ययाः मात्रं योज्यन्ते ते आत्मनेपदिनः इति उच्यन्ते। यैः धातुभिः मह परस्मैपद-आख्यातप्रत्ययाः मात्रं योज्यन्ते ते परस्मैपदिनः इति उच्यन्ते। यैः धातुभिः सह द्विविध-आख्यातप्रत्ययाः अपि योज्यन्ते ते उभयपदिनः इति उच्यन्ते। क्रियमाणं कार्य सूचयितुं वर्तमानकालस्य क्रियापदानि उपयुज्यन्ते। कृतं कार्यं सूचयितुं भूतकालस्य क्रियापदानि उपयुज्यन्ते।

करिष्यमाणं कार्यं सूचयितुं भविष्यत्कालस्य क्रियापदानि उपयुज्यन्ते किन्तु संस्कृते दशलकाराः सन्ति एते नर्वे लकारतः आरब्धाः इत्यतः एते दश लकाराः इति उच्यन्ते। तान् सुलभतया स्मर्तुं संस्कृते कश्चन श्लोक: विद्यते -

लट् वर्तमाने लेट् वेदे भूते लङ् लुङ् लिटस्तथा।
विध्याशिषोश्च लिङ्लोटौ लुट् लृट् लृङ् च भविष्यति।

महाकवि अमृतलालभोगावतामहोदयेन उपर्युक्तधातुप्रयोगान् दृष्ट्वैव अस्मिन् भूधातोः तिङन्तरूपाणां तथा च तेषाम् अर्थच्छटानां परिशीलनं कृत्वा पाठकानां विशेषरुपेण व्याकरणजिज्ञासुनां कृते महोपकारः कृतो वर्तते इत्यहं मन्ये।

कर्णकर्णामृतम्-

ग्रन्थारम्भे कविवरेण भगवतः शिवस्य प्रार्थनां कृत्वा मकलाचरणं विहितम्। महाकविना महाभारताद् श्रोत्रपेयं

पीयूषरसायनं कर्णविषयकं वृत्तं प्राप्तं तस्य निष्पत्तिः ग्रन्थेऽस्मिन् दृश्यते। ग्रन्थस्य प्रारम्भो गङ्गातटस्थितकर्णस्य कुन्त्या: सह संवाद माध्यमेन जात:। गङ्गातटस्थित: कर्ण: प्रात:काले याचकस्य प्रतीक्षारतो दृश्यते। यस्मिन्स्थले मम सविधे इन्द्रादयः अपि प्रतीक्षां कुर्वाणाः प्रायः भवन्ति तत्रैवाद्य कश्चित् सामान्यो भिक्षुरपि दृष्टिं नागच्छति इति विचार्य-आकुलतामनुभूय कर्ण: कुतश्चित् स्यन्दनस्य चक्रस्य ध्वनिम् आकर्णितवान्। रथारूढ्कुन्तीं दृष्ट्वा कर्ण: विचारयति यत् निश्चप्रचमेव मम भाग्यं समनुकूलं कर्तुम् बागता इति मन्ये।

किन्तु तस्याः अत्रागमनस्य प्रयोजनं किम्? पुनश्च मम राजमाताया: कृते दातव्यं किमपि नास्ति। तां कुन्तीं तत्रागतां वीक्ष्य कर्ण: इन्द्रं कुटिलनीतिविशारदं कृष्णं च स्मृतवान्, यतो हि द्वाभ्यां कर्ण: पूर्वमेव दुःखाकृत: तौ द्वौ च ऐश्वर्यवन्तौ आस्ताम् इयमपि ऐश्वर्यं भुंजाना वर्तते, अतः यदा ईदृशा: ऐश्वर्यवन्तः याचकाः आयान्ति तदा प्रायः ते दुःखावहा एष भवन्ति इति। अथ च अहं पूर्वदग्ध:: पुनः अनया किं दग्ध: भवितास्मि इति विचारं कुर्वन् कर्ण: वच: इदं व्याजहार- हे मातः। तुभ्यं बद्धांजलिना वाण्या नतमस्तकेन च नमः, अथाहं चकितः जातः यद्यथा विना बारिदैः वृष्टि: विस्मयं जनयति तच्चैव भवत्या आगमनं विस्मयावहमस्ति। तस्मिन्काले कर्णोक्तवान् यत् यथा वत्समाता गौः विश्वस्य माता कथिता (गावो विश्वस्य मातरः) तथैव त्वमपि राजमाता अतः ममापि मातेव। अथ हि विधिना भवत्याः सेवां विधातुं हि उत्तमः पर्यायः सत्कृते सृष्टे: अथायं विसृष्टे: न भवेत् तथा विधीयताम्। अतः रे कुन्ति मातः। यद यथाविधं वस्तु तत् तथा निःशङ्कं निवेदय। तव यदपि अभिलषितमस्ति तत् निःसङ्कोचमुच्यतां सर्वं वाञ्छितं तुभ्यं मदायत्तमपि न स्यात् तदापि दातुं कृतप्रतिज्ञोऽस्मि।

तच्छ्रुत्वा कुन्ती शनै: शनैः उक्तवती यत् हे पुत्र कर्ण! अत्र वक्तुमवसरे मम जिह्वा अग्निज्वालाशतैः दग्धा इव जाता। अतः वक्तुं शक्तापि नास्मि, यतो हि मम सर्वं विसंवृतमस्ति त्वमेव वद किं

वदेवम्? अनन्तरं कुन्ती (कर्णस्य जन्मतः अद्यावधिपर्यन्तं) सर्वं पूर्ववृत्तान्तं श्रावयित्वा कर्णमुक्तवती यत् त्वमेव मम ज्येष्ठ पुत्रोऽसि। अतः हे पुत्र! इदमहं प्रार्थये यत् त्वं युध्धं जहि पतो हि एतेन युध्धेन न कस्यापि अस्मिन् काले भद्रं भवितास्ति तथा च पाण्डुपुत्रा: सन्तु न वा सन्तु परं यदि त्वं जीवितः स्याः, अहमपि सपुत्रा स्याम्। हे कर्ण! त्वया दुर्योधनस्य ऋणान्मुक्तिरवाप्ता वर्तते कारणं यत् त्वया अङ्गस्य (अङ्गप्रदेशस्य स्थाने त्वयापि अङ्गदानं विहितम्) अतः त्वं स्वकल्याणाय इदं युध्धं दुर्योधनस्य मैत्रीं च त्यक्त्वा पाण्डवानामपि हितचिन्ताकरो भव।

इत्थं कर्णस्य कुन्त्याश्च संवादात्मकं "कर्णकर्णामृतम्" काव्यं पाठकानां विदुषां च कृते अमृतास्वादसमानं यथा गङ्गायाः प्रवाहे कर्ण: ततार तथैव वाचां प्रवाहे तथैवेदमपि तरिष्यति इति भावयुक्तं प्रतिभाति।

अन्योक्तिकाव्यामृतम्-

ग्रन्थारम्भे एवं कविवरेण भगवतः शिवस्य नमस्कारात्मक मङ्गलाचरणमाध्यमेन शिवस्य कृते वक्राणां शरणम् इत्युक्त्वा मयाऽपि काव्यगता वक्रोक्तिः (अन्योक्तिः) समर्प्यते इति कथितमस्ति। अनन्तरं धनिकान् निर्धनान् च प्रत्युक्तिः, चन्द्रं तमः प्रति च उक्तिः, कमलपाटलयो:, गजविषये, कण्टकस्य कृते, पञ्चजन्यनामाभिधस्य राक्षसस्य कृते, वृक्षस्य कृते, विषस्यौषधं विषमिति क्वचित् वामानामपि साहाय्यमपेक्षितं भवति इत्युक्तिः, सामान्य जनाः पदचिह्नं ज्ञात्वा गच्छन्ति किन्तु दुर्जनाः दण्डभयात् पदचिह्नानि न स्थापयन्ति तथापि स्वभावत एव तेषां सहज ज्ञानं सम्पद्यते इत्युक्तिः मराला: मलिने जलेऽपि निवसन्ति किन्तु हंसाः अर्थात् विद्वांसः स्वच्छ (संस्था:) सरोवरे एव सेवां दद्युः अतः संस्थाभिः अपि इदं नितान्तमनिवार्यरूपेण ज्ञातव्यं भवति येन तत्र यथार्थ विद्वांसः यास्यन्ति।

अनन्तरं हंसमानवयोः वार्तालापः, मानवस्य पशोः च वार्तालापः वर्तते। अग्रिमे श्लोके हुतात्मनः सदैव चिन्त्याः इत्युक्त्वा कविवरेण कथितं यत्-समुद्रादीनां जलमाध्यमेन वक्रोक्तिरुच्चारिता यत्- समाजे अनुपयोगिनः\वैभवान्विताः पूज्यन्ते, उपकारिणः परन्तु कष्टाध्याः सन्ति तेषामपि समादरः समाजे भवति, परन्तु ये स्वार्थं विहाय प्रतिगृहं गत्वा परोपकारं कुर्वन्ति तेषां गणनैव न भवति। तात्पर्यार्थः यत्- केचन महान्तः जनाः भवन्ति ये समाजसेवारताः स्थापयन्ति यत्र सर्वमपि सुलभं भवति, परन्तु तत्र केचनसिध्धान्ताः दृढाः नियमाश्च भवन्ति येषां पालनमवश्यमेवकर्तव्यं भवति, अन्यथा दण्ड्याः भवेम । (दण्डं धर्म विदुर्बुधाः) अग्रे सज्जन-दुर्जनमाध्यमेन कथितं यत्- कुजनैः सह वक्रतैव नीतिः।

तत्पश्चात् कथितमस्ति यत्- कानिचित् दुःखानि दैवदत्तानि सोढव्यानि भवन्ति, तदर्थ शान्त्युपायाः अपि निरर्थकाः भवन्ति। दुष्टानां प्रभावः सर्वत्र न भवति इति विषयाधारितपद्येऽस्मिन् वर्णनमस्ति यत् दुष्टाः सर्वान् पीडयन्ति किन्तु क्वचित् ते तादृशं स्थानं प्राप्नुवन्ति यत्र सर्वे जन्मन एव योद्धारः भवन्ति अतः दुष्टानां दुष्टतायाः प्रभावः न भवति। कर्मणा एवं समाजे प्रतिष्ठा भवति कर्मणा एव सर्वे जानन्ति अतः प्रतिष्ठाप्राप्तये प्रारम्भः कीदृशः इत्यस्य बहु महत्त्वम् इति कथनमस्ति। अनन्तरं मानसरोवरे हंसमानवयोः संवादमाध्यमेन सज्जनानां मूकत्वं दूर्जनानां अधिकारत्वं वर्णितमस्ति। इत्यं सर्वमानवसंवादः, सहजाः वंशजाः गुणाः, रुपगुणयोः महत्त्वम्, कर्मणः कृते यथार्थमात्मशक्तिनिरुपणम्, समाजे अपवादरूपाः प्रसङ्गाः सम्भवन्ति किन्तु तान् सामान्यान् इव स्वीकृत्य यदि आशाबध्धैः अस्माभिः कार्यं विधीयते तर्हि तु निष्फलता एक प्राप्यते इत्यादयः प्रसङ्गाः कविवरेण वर्णिताः सन्ति।

इत्थं संस्कृतवाङ्मयेभोगायतामहोदयानां योगदानं, विपुलता, विविधता, नवोन्मेषसौन्दर्यदृष्टियुतं, भावदृष्टियुक्तम् अतीव महनीयश्चास्ति। तस्य महोदयस्य काव्यसर्जने यावत् भावप्रावीण्यं परिष्कृतशुद्धिः चास्ति तावद् वैपुल्यम् अपि दरीदृश्यते।

अमृतभोगायतासदृशानां विदुषां महाकवीनां सेवया संस्कृतं बर्द्धमानं वर्तते। अनेन सारस्वतकर्मणा एव भवान् साहित्याकादमीपुरस्कारैस्सम्मानैश्च पुरस्कृतः सम्मानितः च। भोगायतामहोदयैः संस्कृतसाहित्यजगत्पक्षतः बहुधा भारतीयप्रतिनिधित्वं कृतमस्ति विदेशेष्वपि। देशे भवतां गमनेन संस्कृतसम्प्रचारो जातः संस्कृतिसंरक्षणं च जातमिति को न वेत्ति।

सन्दर्भग्रन्था:-

1. अभिनवं शृङ्गारशतकम्।
2. अभिनवं वैराग्यशतकम्।
3. अभिनवं नीतिशतकम्।
4. प्रशस्ति काव्यानि।
5. स्तोत्र काव्यानि।
6. अमृतकाव्यामृतम्।
7. अन्योक्तिकाव्यामृतं भाग-1
8. अन्योक्तिकाव्यामृतं भाग-2
9. कर्णकर्णामृत
10. मुक्तककाव्यानि

डॉ. निरञ्जन मिश्र की कृतियों में सामाजिक दृष्टि के अन्तर्गत पुरुषार्थ चतुष्ट्य

डॉ. आशीष कुमार
राजकीय महाविद्यालय नारनौल

सारांश-

सामाजिक अध्ययन दो शब्दों से मिलकर बना है, समाज एवं अध्ययन। समाज का अर्थ है- मनुष्यों का समूह तथा अध्ययन का अर्थ है- ज्ञान। अर्थात् मनुष्यों के समूह को अज्ञानता से ज्ञान की ओर अग्रसर करना ही सामाजिक अध्ययन कहलता है। वर्तमान समय में मनुष्य की मनुष्यता तथा मानवीयता लगभग मृतप्रायः होती जा रही है। आज का मानव स्वार्गवश अपने परम्परागत संस्कारों एवं लोग व्यवहारों को भूलता जा रहा है। आज के समय प्रतिस्पर्द्धा के इस युग में मनुष्य- मनुष्य के बीच भी सद्व्यहार नहीं रहा है। और उसकी गणना पशुतुल्य व्यवहार के रूप में होती जा रही है। गंगापुत्रावदानम् में निरञ्जन मिश्र जी ने एक सन्यासी द्वारा राष्ट्र भक्ति तथा गंगा नदी पर हो रहे अतिक्रमण का वर्णन किया गया जिसमें एक सन्यासी गंगा नदी के लिये अपने प्राणों को आहुत कर देता है लेकिन राजनैतिक लोग अपने नीजी स्वार्थवश उनके प्राणों का हरण कर लेते है।[1] जो सन्यासी गंगा नदी की पवित्र तथा प्रकृति के दोहन को बचाने के लिये अनसन पर बैठा है वह व्यक्ति तात्कालिक सरकार के वोटबैंक को कम कर रहा है ऐसे विचार ने एक राष्ट्रभक्त के प्राणों का हरण कर लिया है। यही सामाजिक अध्ययन है।

डॉ. निरञ्जन मिश्र की दृष्टि में सामाजिक अध्ययन-

वर्तमान में सर्वकार में बैठे अधिकारियों की प्रवृत्ति चाटुकारिता की होती जा रही है। लोगों में स्पष्टवादिता समाप्त होती

---

[1] गंगापुत्रावदानम् अध्याय-18

जा रही है, इसके लिये डा. निरञ्जन मिश्र जी ने एव व्यंग्यात्मक कृति की रचना की जिसका नाम है चमसा शतकम्। इस चमसा शतकम् में अधिकारी अपने से बडे अधिकारी की कैसे- कैसे चापलूसी करते है सब दिखाया गया है। वर्तमान समय की सबसे बड़ी विडम्बना देहज प्रथा बनती जा रही है। इस देहज प्रथा की समाप्ति के लिये ग्रन्थि बन्धन नाम काव्य बहुत ही सुन्दर है जिसमे सुकन्या तथा शुभंकर के विवाह को दर्शाया गया है। सामाजिक प्रतिष्ठित लोग कैसे युवक की शादी में दहेज के लिये तैयार करते है उसका एक परिदृश्य इस प्रकार दिखाया गया है कि

लोकेऽधुना यौतुकमेव सर्वं न तत्र विज्ञैः स्वमनो निधेयम्।[1]
विक्रीयते यत्र सुतः स्वपित्रा धिक् तादृशं द्रव्यबलं समाजे।।

आज इस संसार में दहेज ही सब कुछ है, लेकिन विद्वानों को इस विधि में अपना मन नहीं लगाना चाहिये। जहाँ समाज में पुत्र पिता के द्वारा (धन के लिये बेजा जा रहा हो) ऐसे धन के बल को धिक्कार है।

पुत्रस्य पाणिग्रहणोत्सवे चेन्न यौतुकप्राप्तधनं करे स्यात्।[2]
कदा समेषां मनसः प्रमोदावलिः क्व हासस्फुरिताधरा स्यात्।।

पुत्र के विवाहोत्स्व में यदि दहेज से प्राप्त धन हाथ में न हो तो सभी लोगों के मन का प्रमोदवाली (खुशी) हास्य से स्फुरित अधरों वाली कब होगी? अर्थात् घर के लोगों की मुराद कब पुरी होगी।

कुटुम्बिना मानसमोदनं वा गहस्थितानामभिलाषपूर्तिः।[3]
सुसज्जता वास्तु महोत्सवस्य क्वार्थ विना शब्दबलेन सिद्धिः।।

परिवार के लोगों का मान सम्मान हो या घर में रहने वालों की अभिलाषाओं की पूर्ति हो, या महोत्सव की सुसज्जता हो। धन के बिना ये सब शब्दों से कहाँ परे हो सकते है।

---

[1] ग्रन्धिबन्धनम् 7/54

[2] ग्रन्थिबन्धनम्-7/75

[3] ग्रन्थिबन्धनम्-7/76

जामातृवर्गस्य समर्जनं स्यात् विनोपचारेण न षोडशेन।[1]
सुताश्च रत्नाभरणप्रतीक्षां न कुर्वते किं पितुरुत्सवेऽस्मिन्।।

जमाईवर्ग की अर्चना तो बिना षोडसोपचार के होता ही नहीं है। बेटियाँ भी पिता के घर में होने वाले इस पुत्र विवाह रूप उत्सव में रत्नाभरणों की प्रतिक्षा नहीं करती है क्या? अर्थात् करती हैं।

क्षेत्रं तु विक्रीय सुतविवाहस्यायोजने लोकरतिस्समाजे।[2]
सुतस्य पाणिग्रहणे तथा चेत् स्याद्विस्मयस्यापि न विस्मयः किम्।।

खेत बेचकर अफनी पुत्री का विवाह करने में तो लोगों की प्रीति है, जो समाज में दिखाई देता है। पर पुत्र के विवाह में भी यदि ऐसा होने लगे तो आश्चर्य को भी आश्चर्य नहीं होगा क्या?

इस प्रकार की परिस्थितियाँ वर्तमान समाज में बनती है जिनकों डा. निरञ्जन मिश्र ने अपने काव्य में दर्शाया गया है। इन परिस्थियों के समाधान के लिये भी कवि ने लिखा है जो इस प्रकार से है-

किं यौतुकेनैव हि वंशवृद्धिर्वा स्वर्णमृत्यैव वधूप्रवेशः।[3]
तव प्रसादाद्धि तवात्मजानां चित्तप्रसादो नहि नूपुराभ्याम्।।

क्या देहज से ही वंश की वृद्धि होती है, या सोने की मूर्ति के द्वारा ही वधूप्रवेश होता है? तुम्हारी कृपा से ही तुम्हारे पुत्रों के चित्त का प्रसादन नुपुरयुगल (की ध्वनि) से नहीं हो पाया है।

कन्या न चेदत्र वधुः कुतः स्यात् वधूर्न चेदत्र कुतः सुपुत्रः।[4]
विवाहकाले किल यस्य चित्तं प्रसादयेते ननु यौतुकं तत्।।

कन्या नहीं होगी तो बहु कहाँ से आयेगी? बहू नहीं होगी तो पुत्र कहाँ से आयेगा? जिसके विवाहकाल में वो दहेज तुम्हारे हृदय का प्रसादन (खुशी) कर सके।

---

[1] ग्रन्थिबन्धनम्-7/77

[2] ग्रन्थिबन्धनम्-7/78

[3] ग्रन्थिबन्धनम्-7/82

[4] ग्रन्थिबन्धनम्-7/83

तद् यौतुकं येन वधूनिनाशो यस्माद विभीतो विनिहन्ति कन्याम्।[1]
यस्य प्रसादादिह सृष्टिचक्रे निर्विघ्नता रोदिति हा हताऽस्मि।।

दहेज वही है जिससे बन्धुओं का विनाश हो रहा है। जिससे डरकर लोग अपनी पुत्री की हत्या कर रहे है। जिसकी कृपा से सृष्टिचक्र की निर्विघ्नता ही आज रो रही है कि हाय ! मै मारी गई।

व्यसन के विषय में डा. निरञ्जन मिश्र की कृतियों में वर्णन किया गया है कि व्यसन एक ऐसा दोष है जो न केवल व्यसन करने वाले को अपितु निकटवर्ती अन्य व्यक्तियों को भी गम्भीर क्षति पहुचाता है।

ताम्बूललिनस्तीक्ष्णतमालिनश्च निलीय धूमानलपायिनोऽपि ।[2]
स्वभावसिद्धाः परपक्षविच्छेदनार्थमायान्ति विवाहकाले।

ताम्बूल(पान) खानेवाले, खूब तम्बाकू खाने वाले, कहीं छिपकर सिगरेट- बीडी पीनेवाले एवं जो दूसरे के पक्ष का विखण्डन करने में स्वभाव से ही सिद्ध है वे विवाहकाल में स्वयं उपस्थित हो जाते है।

सम्बन्धबन्धे न समादरो वे तेषा समाजे क्वचिदस्ति नूनम्।[3]
तथापि सर्वत्र निजप्रतिष्ठां प्रदर्शयन्तो विलसन्ति नित्यम्।।

निश्चित है कि इन लोगों का सम्बन्धबन्धन के विषय में समाज में कभी भी कहां र आदर नहीं होता है, तथापि सी जगह अपनी प्रतिष्ठा दिखाते हुये ये नित्य विलास किया करते है। इस प्रकार सामाजिक विद्रूपताएँ सम्पूर्ण समाज विशेषकर युवावर्ग में अपनी जड़ गहरी कर रही है। इन विद्रूपताओं से बचने के लिये ओर समाज को बचाने के लिये त्वरित एवं प्रभावी प्रयत्न आवश्यक है।

शिक्षाजगत्यविरत परिवर्तनं यल्लोकार्चितेन तनुते किमु तेन पश्य।[4]
स्वात्मप्रकाशहरणं निजताप्रमाणं भावप्रवाहसरितः परिशोषणञ्च।।

---

[1] ग्रन्थिबन्धन्म्-7/84

[2] ग्रन्थिबन्धनम्-7/111

[3] ग्रन्थिबन्धनम्-7/112

[4] अरण्यरोदनम्-28

लोक पूजित लोगों द्वारा जो शिक्षा जगत् में नित्य लगातार परिवर्तनं किये जा रहे हैं उससे क्या हो रहा है? यह देखो स्वात्मप्रकाश का हरण(अर्थात् आत्म बल का विनाश) निजता का प्रमाण(अहं भाव का प्रदर्शन) और भावप्रवाह रूप सरिता का परिशोषण।

विद्यालयस्य गुरवः श्रमिका बभूवुः शिष्या वहन्ति निजपुस्तकभारमेव।[1]
उद्योगसेवनपटो रसनाविलासैः श्वेताम्बरा जलधिजापदसेविकाऽभूत्।।

विद्यालय के गुरु जी लोग श्रमिक हो गये, शिष्य केवल अपने पुस्तकों के भारत को ढो रहा है। उद्योग की सेवा में कुशल (उद्योगपति) लोगों के रसना विलास में श्वेताम्बर (सरस्वती) लक्ष्मी के चरणों की दासी बन गई।

जानन्ति नैव शिशुतां शिवो युवानो निघ्नन्ति पश्य निजयौवनसारतत्तवम्।
वृद्धा भजन्ति विषयं नवयौवनस्य वाञ्छन्ति भारवहनं लतिकास्तरूणाम्।।

आज शिशु शिशुता को नहीं जानता है। युवक अफने यौवन केसार तत्व को बर्बाद कर रहा है। बूढे यौवन के विषय़ की सेवा कर रहे हैं और लतिकाये वृक्षों का भार ढोना चाह रही है।

इस प्रकार से लेखक ने अपने लोक चिंतन (सामाजिक अध्ययन) का प्राक्कलन किया है।

---

[1] अरण्यरोदनम्-29

गढ़वाल परिक्षेत्र के आधुनिक संस्कृत साहित्यकार

अंशुल, शोधच्छात्र, संस्कृत विभाग
हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय
(केन्द्रीयविश्वविद्यालय)

शोध सारांश- प्रकृति की अमूल्य निधि हिमालय के गर्भ में अवस्थित एवं पर्वतीय अंचलों से युक्त उत्तराखण्ड राज्य का पावन गढ़वाल परिक्षेत्र भारतवर्ष का मुकुटमणि है। यह परिक्षेत्र अपनी आध्यात्मिक गांभीर्यता, नैसर्गिक रमणीयता तथा ऋषि-महर्षियों के तपःस्थान के रूप में सुप्रतिष्ठित है। अतः इस पूण्य धरा-धाम को देवभूमि, तपोभूमि एवं उत्तरपथ आदि संज्ञाओं से भी अभिहित किया जाता है। स्कन्दपुराण में इस पूण्य भूमि को केदार खण्ड़ कहा गया है। इस पावन गढ़वाल क्षेत्र में संस्कृत साहित्य की परम्परा वैदिक काल से गंगा की अविरल तथा नि:श्चल धारा के समान प्रवाहित होती आ रही है। इस देवस्थली में संस्कृत के प्रति प्रेम को समय-समय पर विद्वानों द्वारा लिपिबद्ध किया जाता रहा है। सुदीर्घ काल से अद्यावधि पर्यन्त अनेकों साहित्यकारों ने इसी पावन क्षेत्र से संस्कृत साहित्य की दीपशिखा को प्रज्वलित कर संस्कृत साहित्य की समृद्धशाली परम्परा को बनाये रखने में अपना अमूल्य अवदान प्रस्तुत किया है। इस लेख में मुख्यतः पावन गढ़वाल परिक्षेत्र के आधुनिक संस्कृत साहित्यकारों के अमूल्य अवदान को प्रस्तुत किया गया है।

कूट शब्द- गांभीर्यता, अद्यावधि, परिक्षेत्र, भोजपत्रों, सुदीर्घ, कालखण्ड, दीपशिखा, आनन्दाऽनुभव, गढ़प्रदेश।

देववाणी संस्कृत अनेकों भारतीय भाषाओं के मूलाधार के रूप में प्रतिष्ठत है। वैदिक काल से ही भारतीय जन-मानस को प्रगति के मार्ग पर प्रशस्त करने वाली तथा ज्ञान-विज्ञान की अविरल धारा को प्रवाहित करने वाली यह भाषा ऋषि-महर्षियों की अग्रणी रही है। प्राचीन काल से अद्यावधि पर्यन्त इस भाषा में अनेक साहित्य

लिखा जा चूका है, जो कि इस भाषा की प्रौढ़ता, परिपुष्टता तथा परिपक्वता को द्योतित करता है। साहित्य सागर ज्ञान का वह वृहद आकार है, जिसका जितना ज्ञानात्मक मन्थन किया जाए उससे उतने ही अमूल्य रत्नों की प्राप्ति होती रहती है। इसी आनन्दाऽनुभव साहित्य की कलेवर वृद्धि करने में अनेकों साहित्यकारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। संस्कृत साहित्य की यह वैभवशाली एवं सुसमृद्ध परम्परा गढ़वाल(हिमालय) परिक्षेत्र में भी सुदीर्घ वैदिक काल से अद्यावधि पर्यन्त निर्बाध गति से प्रवाहित होती आ रही है। इस पावन क्षेत्र के सुप्रसिद्ध साहित्यकारों ने भी अपने काव्यों के माध्यम से संस्कृत साहित्य जगत् को एक नवीन एवं विशिष्ट आयाम प्रदान किया है। गढ़वाल में संस्कृत साहित्य की इस समृद्ध परम्परा में न जाने कितने विद्वानों ने अपनी कृतियों से गढ़वाल को वैभव युक्त किया होगा। यहाँ के कवियों को न धनार्जन का लोभ था ना ही उनके पास अपने काव्यों को संरक्षित रखने का धन उपलब्ध था, वे स्वातः सुखाय मात्र के लिए काव्यों का सृजन किया करते थे। भोजपत्रों पर लिखे गये काव्य प्रकृति के प्रकोप के कारण आज अप्राप्य हैं तथापि यहाँ प्राप्त अभिलेख प्राचीन काल से गढ़वाल में संस्कृत की सुदृढ़ परम्परा के परिचायक हैं। संस्कृत साहित्य की यह वैभवशाली परम्परा आज भी गढ़वाल परिक्षेत्र में आधुनिक साहित्यकारों से सुदृढ़ बनी हुई है। आधुनिक काल में भी स्वकीय लेखन कौशल के माध्यम से गढ़प्रदेश के साहित्यकार संस्कृत साहित्य को अनेक नवीन विधाओं से सुसज्जित कर अग्रसारित कर रहें हैं।

गढ़वाल परिक्षेत्र के आधुनिक संस्कृत साहित्यकारों के शिरोमणि आचार्य श्री बालकृष्ण भट्ट को माना जाता है। जिन्हें विद्वानों द्वारा आधुनिक कालिदास की संज्ञा से भी विभूषित किया गया है। आचार्य प्रवर का जन्म गढ़वाल के रूद्रप्रयाग जनपद के अन्तर्गत जखौली, भरदार नामक क्षेत्र में सन् १९०१ ई० को हुआ था। इनके परम् पूज्य पिता का नाम श्री तारादत्त भट्ट तथा माता का श्रीमती मूँगा देवी था। आचार्य श्री ने अपना परिचय पद्यबद्ध 'सदाचार चन्द्रिका' नामक पुस्तक के प्रारम्भ में दिया है। आचार्य भट्ट

एक उत्तम लेखक के साथ एक सफल अन्वेषक भी थे। इन्होनें अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया तथा इनके अधिकांश साहित्य राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत दृष्टिगोचर होता है।

कृत्तियाँ- कनकवंशम् महाकाव्य, स्वतन्त्रभारतम्, तपोवन भातकम्, श्री जगदम्बाशतकम्, श्री शिवशतकम्, श्री कूर्मासनास्तवकम्, कालिदास-जन्म-भू-विलास, श्री मठियाणा स्तवकम्, सर्यूप्रयाग तीर्थ माहात्म्य, साहित्य कल्पलतिका एवं आत्म-दर्शन काव्य आदि[1]

- **श्रीकान्त आचार्य**

आचार्य श्री का जन्म पौड़ी गढ़वाल के मल्ला पट्टी के अन्तर्गत नौगाँव में सन् १९११ई० को हुआ था। ये संस्कृत के अग्रगण्य विद्वान तथा समाजसेवी माने जाते थे। कविवर ने संस्कृत साहित्य के संवर्धन हेतु अनेकों काव्यों का प्रणयन किया, जिसके फलस्वरूप आचार्य श्री आधुनिक संस्कृत साहित्यकारों के पथ-प्रदर्शक बने हुए है।

कृत्तियाँ- सीमातिक्रमणम् महाकाव्य, युगनिर्माता दयानन्दः महाकाव्य, प्रतापविजय गद्य-काव्य, आनन्दकन्दचरितम् खण्डकाव्य, भारतस्य रजतजयन्ती तथा प्रत्याक्रमणम् नामक ऐतिहासिक काव्य आदि[2]

- **डॉ० शिवप्रसाद भारद्वाज**

कविवर भारद्वाज का जन्म पौड़ी गढ़वाल के ग्राम-डांग, पट्टी-गगवाऽस्यु में सन् १९२२ई० कार्तिक मास में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री हीरामणि भारद्वाज तथा माता का नाम श्रीमती उत्तरादेवी था। कविवर शिवप्रसाद की प्रारम्भिक शिक्षा आध्यात्म नगरी हरिद्वार से तथा उच्चशिक्षा दिल्ली एवं वाराणसी से सम्पन्न हुई। पठन की इस परम्परा को अग्रसर करते हुए भारद्वाज जी ने पंजाब विश्वविद्यालय से विद्यावारिधि की विशिष्ट उपाधि भी प्राप्त

---

[1] उत्तराखण्ड के संस्कृत साहित्यकार, पृष्ठ संख्या– १०२/१०३

[2] वहीं, पृष्ठ संख्या– १११/११२

की। बहुमुखी प्रतिभा से युक्त डॉ० शिवप्रसाद भारद्वाज ने अपने काव्य कौशल से संस्कृत साहित्य को अनेक प्रकार की रचनाओं से विभूषित किया है।

कृत्तियाँ- भारत सन्देशम्(खण्डकाव्य), महावीरचरितम्(खण्डकाव्य), लौहपुरूषावदानम् महाकाव्य, महापुरूष चरितावलिः, इन्दिरा गौरवम्, अभिनव राग गोविन्दम्, तरंग लेखा, मत्कुणायनम्, आर्यार्द्धशतकम्, इन्दिराभिलाष, वारूणी महिमा, काम कौतुकम्, आत्मबोधकाव्यम्, पुरोधसः स्वप्नः, इयं सुमंगली वधू, कुमाता न भवति तथा पुरूष-द्वेषणी आदि[1]

- **श्री शशिधर शर्मा**

आचार्य श्री शर्मा का जन्म भगवान श्री रघुनाथ की तपोभूमि देवप्रयाग में सन् १९३२ ई० को हुआ था। ये संस्कृत जगत् के अग्रगण्य विद्वान तथा एक सफल लेखक माने जाते थे। स्वकीय जीवन काल में आचार्य श्री ने अनेक ग्रन्थों का प्रणयन कर संस्कृत भाषा के गौरव संवर्धन किया। जिसके फलस्वरूप आचार्य श्री शशिधर शर्मा को अनेक सामाजिक एवं राष्ट्रीय सम्मानों से भी सम्मानित किया गया।

कृत्तियाँ- वीरतरंगिणी, शांकर सर्वस्वम्, विवेक विजयम्, कैनेडी करूणांजलि, लाल कुसुमांजलि, गंगास्तवसारः तथा गीत गिरिजम् आदि।[2]

- **श्रीधर प्रसाद बलूनी**

कविवर बलूनी का जन्म पौड़ी गढ़वाल के बागी नामक ग्राम में सन् १९४१ई० को हुआ था। इनके पिता श्रीकृष्ण बलूनी तथा माता श्रीमती धन्वन्ती देवी थी। कविवर की प्रारम्भिक शिक्षा इनके पैतृक ग्राम में तथा उच्च शिक्षा सर्वविद्या की राजधानी काशी में सम्पन्न हुई।

---

[1] गढ़वाल की संस्कृत साहित्य को देन, पृष्ठ संख्या– १५६/१५७

[2] वहीं, पृष्ठ संख्या– १६३/१६४

श्री बलूनी संस्कृत के उच्चकोटी के विद्वान, कल्पनाशील कवि तथा समाजसेवक की संज्ञा से प्रसिद्ध थे। इन्हें इसी प्रशस्ति हेतु सन् २००२ ई० में संस्कृत साहित्य सेवा सम्मान तथा सन् २००३ई० में जनगणना प्रशस्ति पदक से भी विभूषित किया गया था।

कृत्तियाँ- दशमेशचरितम्, श्री बद्रीनाथ स्तोत्रम्, श्री केदारनाथ स्तोत्रम् तथा श्रीगुरूरामरायचरितामृतम् आदि।[1]

- **डॉ० अशोक कुमार डबराल**

संस्कृत साहित्य जगत के मूर्धन्य विद्वान डॉ० अशोक कुमार डबराल का जन्म १४ अप्रैल सन् १९४३ ई० को वैशाखी के सुअवसर पर पौड़ी गढ़वाल के तिमली(डबरालस्यूँ) नामक ग्राम में हुआ था। इनके पूज्य पिता श्री विद्यादत्त डबराल तथा पितामह सिद्धकवि सदानन्द डबराल जी थे। ये संस्कृत के ही नहीं अपितु हिन्दी तथा अंग्रेजी भाषा के भी विलक्षण विद्वान थे। इन्होंने अपनी विलक्षण कृत्तियों के माध्यम से संस्कृत साहित्य जगत् को एक विशिष्ट आयाम प्रदान किया है।

कृत्तियाँ- देवतात्मा हिमालय, धुक्षते हा धरित्री, आदि।[2]

- **डॉ० जगदीश प्रसाद सेमवाल**

कविवर डॉ० सेमवाल का जन्म गुप्तकाशी के समीप ह्यूण (यमुनानगर) नामक ग्राम में १ जनवरी सन् १९४४ ई० को हुआ था। इनके परम् साधक पिता का नाम श्री भोलानाथ सेमवाल तथा माता का नाम श्रीमती विजया देवी था। कविवर ने अपनी असाधारण प्रतिभा के माध्यम से संस्कृत साहित्य को अनेक विधाओं से सुशोभित कर संस्कृत साहित्य जगत को नवीन दृष्टिकोण प्रदान किया है। जिसके लिए कविवर को २०१७ में राष्ट्रपति सम्मान से भी सम्मानित किया गया तथा अनेक संस्थओं द्वारा भी कविवर को संस्कृत साहित्य में इनके विशेष अवदान हेतु आज भी सम्मानित किया जा रहा है।

---

[1] वहीं, पृष्ठ संख्या– ४९९

[2] वहीं, पृष्ठ संख्या– ४४०

कृत्तियाँ- महाकाव्य- श्रीगुरूनानकदेवचरितम्।

स्त्रोतकाव्य- श्रीदुर्गामहास्तोत्रम्, श्रीशिवस्तुति, श्रीयक्षराजस्त्रोतम् श्रीरामचरितावली, श्रीशिवसहस्त्रनामावली निर्वचनकारिका, श्रीगुरूनानकदेवसहस्त्रनामावली आदि।

विलासकाव्य(शतक-काव्य)- भानूदयविलास, मेघविलास, वसन्तविलास हिमगिरिविलास, इन्दुविलासाऽदि।

दार्शनिक कृत्तियाँ- वेदान्तकारिका, योगाऽनुशासनप्रकाश।

प्रकीर्ण कृत्तियाँ- अर्थतन्त्रम्, भारताजिरम्, अभिनन्दनम्, वसन्तगीतम्, शिक्षा, शैलजा तव करोतु मंगलम्, दिल्ली आदि।[1]

- **श्रीकृष्ण सेमवाल**

आचार्य श्री सेमवाल का जन्म केदार घाटी के यमुनानगर नामक ग्राम में ५ जनवरी १९४९ ई० को हुआ था। इनके पिता का नाम श्री नाथोराम सेमवाल था, जो ज्योतिषशास्त्र तथा तन्त्र विद्या के प्रकाण्ड पण्डित माने जाते थे। श्री सेमवाल विलक्षण काव्य प्रतिभा के धनी थे। जिसके फलस्वरूप इन्होंने अनेक मुक्तककाव्य, खण्डकाव्य तथा लेख आदि लिखे हैं। इन्हें संस्कृत साहित्य में इसी विशिष्ट अवदान हेतु सन् २००२ में महामहिम राष्ट्रपति द्वारा भी सम्मानित किया गया था।

कृत्तियाँ- प्रियदर्शनीयम्, शक्ति-सौरभम्, भक्तिरसामृतम्, दयानन्दशतकम्, बुद्धशतकम्, पीयूषम्, वाग्वैभवम्, भक्ति रसामृतम्, संघे शक्ति कलौ युगे, भीमशतकम्, हिमाद्रिपुत्राभिनन्दनम्, व्यावहारिक संस्कृतम्, विन्सरस्त्रोत्ररत्नावलि तथा कालिदास गरिमा आदि[2]

---

[1] आचार्य जगदीशप्रसाद सेमवाल विरचित, विलासकाव्यसंग्रह, भुमिका भाग

[2] उत्तराखण्ड के संस्कृत साहित्यकार, पृष्ठ संख्या– १३८/१३९

- **श्री धर्मानन्द शर्मा**

आचार्य श्री शर्मा का जन्म चमोली गढ़वाल के डिम्मर नामक ग्राम में ९ जून सन् १९५५ ई० को हुआ था। इनके पिता श्री परमानन्द डिमरी थे, जो ज्योतिषशास्त्र के विद्वान तथा समाजसेवीयों में अग्रगण्य माने जाते थे। आचार्य श्री शर्मा ने अनेक शास्त्रों का अध्ययन कर अपना सम्पूर्ण जीवन पिता की भांति समाजसेवा में समर्पित कर दिया था।

कृत्तियाँ- सांख्य प्रवचन भाष्य, सांकेतिक तर्कशास्त्रम्, मीमांसा सूक्ति संग्रह, भौतिक विज्ञान वल्लरी, ब्रह्मसूत्रशंकरभाष्य, गौडपादशंकरदर्शनयोः तुलनात्मक आलोचनात्मकं च विश्लेषणम्, आचार शास्त्रीय बाल विश्वकोष, भारतीय-दार्शनिक परम्परा विश्वकोष तथा भारतीय संस्कृति के बौद्धिक पदों की बहुभाषीय परिकल्पना आदि।[1]

- **डॉ० देवी प्रसाद त्रिपाठी**

भगवान श्री नर-नारायण की तपःस्थली के रूप में सुप्रसिद्ध उत्तराखण्ड राज्य के पावन श्रीबद्रीनाथ धाम के समीप मोरवमल्ला नामक ग्राम में आचार्यप्रवर देवी प्रसाद त्रिपाठी का जन्म २५ दिसम्बर १९६५ ई० में हुआ था। इनके पिता का नाम पं0 रतनमणि त्रिपाठी था, जो ज्योतिषविद्या एवं कर्मकाण्ड के महनीय विद्वान थे। आचार्य श्री ने ज्योतिर्मठ में स्थित श्रीबद्रीनाथ वेद-वेदांग संस्कृत महाविद्यालय से प्रारम्भिक से आचार्य तक की शिक्षा प्राप्त कर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से शोध की उपाधि प्राप्त की। इन्होंने देववाणी संस्कृत के संरक्षण व संवर्धन में भी महद्ववपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया।

---

[1] गढ़वाल की संस्कृत साहित्य को देन, पृष्ठ संख्या– ४९३/४९५

कृत्तियाँ- गृहगोचर, सामुद्रिक, भुवनकोशविमर्श, धराचक्र, भास्करीय गोल मीमांसा, ब्रह्माण्ड एवं सौर परिवार तथा वास्तुसार आदि प्रमुख हैं।[1]

- **आचार्य श्री चण्डीप्रसाद बहुगुणा**

इनका जन्म टिहरी जनपद के खतवाड़ नामक ग्राम में लगभग २० वीं शताब्दी के द्वितीय चरण में हुआ था।

कृत्तियाँ- स्वतन्त्रता विजयम्, तपोवनशतकम्, श्री भारत-किरीटामृतम्(मुक्तक काव्य) तथा हृषीकेश महात्म्य आदि काव्यों की रचना की है।[2]

- **डॉ० जीतराम भट्ट**

डॉ० भट्ट का जन्म रूद्रप्रयाग जनपद के भटवाड़ी नामक पुण्य ग्राम में ९ नवम्बर सन् १९६२ ई० में हुआ था। इनके परम् साधक पिता का नाम स्व० डॉ० ईश्वरी दत्त भट्ट तथा स्नेहशील माता का नाम स्व० श्रीमती कस्तूरी देवी था। इनकी प्रारम्भिक तथा माध्यमिक शिक्षा स्वकीय ग्रामीण पाठशाला से ही सम्पन्न हुई तदनन्तर उच्चशिक्षा सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय काशी से सम्पन्न कर इन्होंने हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय से शोध की विशिष्ट उपाधि भी प्राप्त की। इसके अतिरिक्त आचार्य श्री वेद, ज्योतिष व कर्मकाण्ड का पारम्परिक पद्धति से अध्ययन तथा अनुसन्धान कार्य किया। संस्कृत के प्रचार-प्रसार के लिए भारत संस्कृत परिषद की स्थापना में भी इनकी महत्वपूर्ण भुमिका थी।

इनके द्वारा रचित अनेक ग्रन्थों पर अध्येताओं एवं अनुसंधित्सुओं द्वारा अनुसन्धान कार्य किया जा रहा है। संस्कृत साहित्य की गद्य विधा में जिस प्रकार की आपकी दक्षता है, उसी समान पद्य रचना में भी सिद्धहस्त हैं, एवं आज भी अपनी विलक्षण काव्य रूपी प्रतिभा से निरन्तर माँ सुरभारती के साहित्य कोश में

---

[1] वहीं, पृष्ठ संख्या– ४९०/४९१

[2] उत्तराखण्ड के संस्कृत साहित्यकार, पृष्ठ संख्या– १४२

वृद्धि कर अपना अमूल्य अवदान प्रस्तुत कर रहें हैं। इनकी इस सारस्वत साधना तथा अमूल्य योगदान के लिए इन्हें विभिन्न संस्थाओं सम्मानित एवं पुरस्कृत किया जा रहा है।

कृत्तियाँ- अनुभूतिशतकम्, वैचित्रयम्, भक्तिवल्लरी, श्रीगोस्वामीचरितम्, श्रीमदुमाशंकरकाव्यम्, प्रसिद्धानि छन्दांसि मधुराणि गीतानि च, श्रीशनि समाराधना, गीत- निर्झरिणी तथा श्री द्वादश ज्योतिर्लिंगस्त्रोतम् आदि।

प्रमुख अनूदित एवं सम्पादित ग्रन्थ- श्रीमन्नारायणीयम्, संस्कृत में जलविज्ञानम्, वायुपुराणम्, शतपथ ब्राह्मण तथा इक्कीस धर्मसंहिताएँ आदि।[1]

निष्कर्ष- उक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि सुरभारती के अलौकिक भण्डार की वृद्धि करने में गढ़वाल परिक्षेत्र का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रहा है। इस क्षेत्र में संस्कृत साहित्य की धारा अत्यन्त प्राचीन काल से अद्यावधि पर्यन्त सुदृढ़ है। इस समृद्ध परम्परा में अनेकों विद्वानों ने अपनी कालजयी कृतियों के माध्यम से पावन गढ़प्रदेश को वैभव युक्त कर अपनी लोकोपकारी भुमिका निभायी है। जिनका विषय विस्तार भयवश उल्लेख सम्भव नहीं था। अर्वाचीन समय में भी इस पूण्य भूमि के स्वनामधन्य साहित्यकार अपनी विलक्षण काव्य प्रतिभा से निरन्तर माँ सुरभारती के साहित्य कोश में विपुल वृद्धि कर अपना बहूमूल्य अवदान प्रस्तुत कर रहें हैं।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची:-

१– उत्तराखण्ड के संस्कृत साहित्यकार अतीत से वर्त्तमान, डॉ० शालिमा तबस्सुम, परिमल पब्लिकेशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण- २०१३

२– उत्तराखण्ड की विभूतियाँ, शक्ति प्रसाद सकलानी, उत्तरा प्रकाशन, रूद्रपुर, ससंकरण- २००१

३– गढ़वाल की संस्कृत साहित्य को देन, डॉ० प्रेमदत्त चमोली, ८ न्यू फ्रैन्डस कालोनी अजबपुरकलॉ, बाईपास रोड़ देहरादून, संस्करण- २००६

---

1 पत्राचार द्वारा प्राप्त

डॉ० निरंजन मिश्र के काव्य में सामाजिक चित्रण

प्रज्ञा, शोधछात्रा
संस्कृत विभाग, महात्मा ज्योतिबा फुले
रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय

संस्कृत साहित्य सदा से ही अनेक कवियों एवं साहित्यकारों की अनुपम रचनाओं से समृद्ध रहा है। उनमें डॉ० निरंजन मिश्र का नाम बडे आदर व सम्मान के साथ लिया जाता है। उन्होने अपने काव्य द्वारा अद्वितीय सृष्टि का निर्माण किया जो आचार्य मम्मट द्वारा कहे गये इस कथन को पूर्णतः सार्थक करते हुए प्रतीत होता है कि कवि की सृष्टि विधाता की सृष्टि से अद्‌भुत तथा रसानभूति से परिपूर्ण है यथा–

नियतिकृत नियम रहितां अहलादकमयीमनन्यपरतन्त्रताम्।
नवरसरूचिरां निर्मितिमादधतीं भारती कवर्जयति।।[1]

उनका काव्य 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की श्रेष्ठ भावना से भरा हुआ है। डॉ० निरंजन मिश्रके कर्तृत्व और व्यक्तित्व को जाना एक अलौकिक आनन्द की प्राप्ति को प्राप्त कराने वाला है। अद्वितीय प्रतिभा के धनी डॉ० निरंजन मिश्र का जन्म बिहार प्रान्त के भागलपुर जिले के एक छोटे से गॉव भ्रमरपुर में 02 जनवरी 1966 ईसवी को एक साधारण परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम सुखदेव मिश्र था तथा माता का नाम भवानी देवी था। डॉ० मिश्र के

रचनात्मक लेखन अल्पायु में ही कल्पवृक्ष के रूप में निखरकर आया। मिश्र जी की शिक्षा विषम परिस्थितियों में गॉव के समीप पठशाला में हुई। मिश्रा जी कुशाग्र बुद्धि एवं अध्ययनकुशलता से आस पास के क्षेत्र में प्रसिद्ध हो गये थे। उन्होने प्रारम्भिक शिक्षा के बाद पटना कॉलेज में प्रवेश लिया। वहीं से बी०ए० एवं आचार्य की उपाधि व विद्यावारिधि शोध कार्य हेतु 'कामेश्वर सिंह दरभंगा विश्वविद्यालय बिहार' में प्रवेश लेकर अध्ययन कार्य सम्पन्न किया। वर्तमान में श्री भगवानदास आदर्श संस्कृत महाविद्यालय हरिद्वार में प्राचार्य पद पर सुशोभित हैं।

मिश्र जी का काव्य हमेशा से ही लोक अनुभव की पारदर्शिता' आधुनिक चेताओं के समावेश से परिपूर्ण रहा है। कवि के काव्य का लेखन ही जनमानस का सामाजिक व्यवहार है। इस विषय में अग्निपुराण व काव्यप्रकाश में उल्लेख मिलता है।

नरत्वं दुर्लभं लोके विद्या तत्र सुदुर्लभा।
कवित्वं दुर्लभं तंत्र शक्तिस्तत्र सुदुर्लभा।।[2]

अर्थात इस संसार में अनुष्य का जन्म अत्यन्त दुर्लभ है और विद्या प्राप्त कर कवित्व प्राप्त करना उससे भी दुर्लभ है तथा काव्य में शक्ति प्राप्त करना नितान्त दुर्लभ है। कवि की कृतियों का वर्णन लघु रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

मौलिक कृतियॉ-

१– **काव्यमाला-**

इनका पहला काव्य संग्रह जिसका प्रकाशन 2002 में हुआ। इसके पॉच खण्ड है। इसमें कवि की राजनैतिक भावना

का चित्रण अति रम्यता के साथ किया गया है। इसके पांच लघु खण्ड निम्न विचारधारा प्रस्तुत कर रहे रहे हैं।

क) **लोकतंत्र शतकम्-** इसमें 101 श्लोक तथा राजनैतिक विचारधाराओं का चित्रण किया गया है।

ख) **श्वेतमाधववृत्तम् -** यह मुक्तक काव्य राजनेताओं की आशाओं एवं राज व्यवस्था के चलचित्र को माध्यम बनाकर उजागर किया गया है।

ग) **उपालम्भनम्-** इस मुक्तक–काव्य में साधारण नायक को साधारण मार्ग पर चलते हुए राजनैतिक परिवर्तन और भ्रष्टाचार के कारण असफलता प्राप्त होती है जिसमें वह ब्रहमा से पूछ बैठते हैं-

हे शारदे! तव पदं प्रणमामि नित्यं,
वाक्यांजलिश्च मनसा हि समर्पयामि।
किंचात्र वीक्ष्ययतवभक्त जनस्य दैन्यं
किंचिद् वदामि शमनं कुरू घृष्टतायाः।।[3]

घ) **गीतांजलि-** 28 गेय पद विभिन्न गीतों का संग्रह। इसमें कवि संस्कृत भाषा के प्रति अपना अनुराग प्रदर्शित करते है और लिखते हैं–

स्वागतं भवतां विधातुं आगताः सर्वे वयम्।
दशनार्थं दिव्य रूपं आगताः सर्वे वयम्।।[4]

ड) **कारगिलवृत्तं-** यह बलिदानी वीर सपूतों को समर्पित है। इसमें वीरों ने कारगिल पर शहीद होकर अपनी वीरता और बहादुरी का परिचय दिया। यह 132 श्लोकों में वरिचित है।

2. काव्यकुंजम्-

इसमें पांच लघु काव्य संग्रह हैं। कवि ने संस्कृत भाषा को जनमानस तक पहुंचाने का माध्यम बनाया है। इसके पांच लघु काव्य संग्रह हैं।

क) गृहिणी शतकम्- इसमें कुशल ग्रहणी का वर्णन संकलित है। उनका स्वभाव वर्तमान स्थिति कर्तव्य आदि की 101 श्लोकों द्वारा काव्यमयी शैली में वर्णित किया गया है।

ख) चमचा शतकम्- यह व्यंग्य प्रधान 101 श्लोकों से परिपूर्ण है। इसमें चमचा यानि चाटक प्रवृत्ति के लोगों को विषय बनाया है। यह व्यंग्य प्रधान है।

ग)बाला विलासम्- इसमें उन बालाओं का वर्णन है जो जीवन पथ की विपरीत दिशा में बढ़ जाती है और कामातुर समाज उनका शोषण कर उन्हें गलत रास्ते पर ले जाता है।

घ) सुभगा चरितम्- यह सात सर्गो विभाजित कालखण्ड है। इसमें कवि ने आधुनिक समाज में जन्मी एक गरीब लड़की व उसके परिवार की मनोदशा का चित्रण किया गया है।

ड) प्रकीर्णम्-मनोरंजन कविताएं आनन्द से भाव विभोर करने वाली हैं।

4. मनोहर कथावली-

यह बाल कथाओं से सुसज्जित है। इसमें गोनू और बुद्धू नाम पात्र जिसकी स्थिति वीरबल जैसी है। मिथिला के लोग उसकी कथाओं को बड़े चाव के साथ सुनते हैं।

4. अथ ग्राम शतकम्- यह ग्रामीण वातावरण को दर्शाता है।

5. अथ प्रमत्त काव्यम्- यह सात सर्गो का कालखण्ड है जिसका प्रकाशन 2005 में हुआ। इसमें कवि ने वास्तविक परिस्थितियों को सामने लाने के लिए विभिन्न प्रमत्तो को माध्यम बनाकर काव्यांश संकलित किये हैं।

6. अरण्यरोदनम्- यह लघुकाव्य है। वर्ष 2005 में प्रकाशित हुआ। इसमें कवि ने भौतिक और चारित्रिक विका पर महत्व दिया है।

7. गीतावल्लरी- इसे कवि गीतों द्वारा देशभक्ति, गज़ल गीतों को प्रस्तुत करते हैं।

8. वन्दे भारतम्- यह मन्दाक्रान्ता छन्द 101 श्लोकों में लिखा गया है। कवि ने पावन भूमि के प्रति अपनी सुन्दर वाणी से धरती को नमन किया है।

9. कुटुज कुसमम्- कवि थके हारे, उदास, दुखी, निराश लोगों को झकझोर कर युवकोचित उत्साह के साथ –साथ आशावादी दृष्टि जीवन को नया रूप प्रदान करेगी।

10. केदारघाटी विधवा वभवू- 16, 17 जून 2013 को उत्तराखण्ड की केदारघाटी में जो प्राकृतिक आपदा आयी, कवि ने ऑखों देखा हाल अपनी हृदय वेदना के साथ उजागर किया है।

11. ग्रन्थिबंधनम्- यह महाकाव्य सामाजिक घटना पर आधारित है। यह 16 सर्गो में विभाजित है। इस महाकाव्य में नायक शुभंकर एवं नायिका सुकन्या के प्रेमप्रसंग से विवाह पर्यन्त तक का वर्णन है। इसमें दहेज प्रथा का अन्तकर समाज काे एक नया संदेश प्रदान करने के लिए समाज कवि का सदा ही ऋणी रहेगा।

12. गंगापुत्र अवदानम् महाकाव्य- प्रकृति साधना में रत कवि द्वारा 22 सर्गो का वृहत् महाकाव्य संस्कृत साहित्य का मूल

रत्न है। कवि ने सर्वत्र प्रकृति के विहंगम दृश्यों के साथ गंगा की अविरल धारा के महत्व को दर्शाया है। इसमें शान्त रस धर्मवीर रस से युक्त काव्य प्रकृति संरक्षण का संदेश दे रहा है।

13. दामिनी उपन्यास- दिल्ली के दामिनी काण्ड पर आधारित है। इन्होने अन्य व्याख्यात्मक हिन्दी और संस्कृत भाषाओं पर आधारित टीकाएं लिखी है जिनमें कुवल्यानन्द' मुद्राराक्षस, नलचम्पू, मदालसाचम्पू, शुकनशोपदेशः, लोककल्याणचम्पूः अन्य अनुवादात्मक रचनाएं आमोद तरंगिणी, चित्रलेखा निबन्धात्मक-

काव्य प्रकाश, ध्वन्यालोक, हिन्दी में अज्ञात प्रेयसी, अनबूझ पहेली।

कवि द्वारा 1954 ई० में अखिल भारतीय स्तर की संस्था 'साहित्य अकादमी' की स्थापना ने साहित्य समाज के लिए प्रकाश स्तम्भ के रूप में कार्य किया। कवि को 2018 में गंगापुत्रावदानम् महाकाव्य के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा कालिदास पुरस्कार साहित्यकार सम्मान से सम्मानित हुए।

कवि ने समाज के प्रति अपना दृष्टिकोण 'अथ प्रमत्मकाव्यम्' में भ्रष्टाचार से दूषित समाज की दयनीय स्थिति का रम्य चित्रण करते हुए कहा है कि आज समाज सही गलत को जानता है पर फिर भी न तो सही को बोलता है और न ही गलत का विरोध करता है। यथा-

सिद्धान्तमात्रेण भवन्ति विज्ञाः
प्रयोगमादाय सदैव मूढ़ाः
आकाशपुष्पस्य रसेन नित्यं
पालयन्त्यत्र हिं चंचरकान्।।[5]

समाज का एक अभिन्न अंग ग्रहणी समाज में आज मात्र भोग विलास का कारण बनती जा रही है। उसी का सुन्दर चित्रण कवि ने 'ग्रहणी शतकम्' में किया है, जिसका एक उदाहरण दृष्टव्य है-

गृहिणी तरूणि जगतीह सखे।
सुखसागरमंमेवसदा
नहि तस्य कृते सुरसहनानि तत्,
भवतीह धारापटले खलु यत्।।[6]

दहेज के अभाव में पिता अपनी पुत्री का विवाह करने में असमर्थ हो जाता है वह बेटी के जन्म को अभिशाप समझने लगता है। दहेज के इस आडम्बर **का विरोध मिश्र जी ने 'सुभगाचरितम्' खण्डकाव्य में निम्न रूप में दर्शाया है।**

वधू स्वरूपे धनदीर्धिकायाः
स्वप्नं सदापश्यति भूतलेस्मिन्
पिता वरस्याद्य कथन्नजाने
हेतुं विना वांछति सर्वसिद्धम्।।[7]

कवि समाज में प्रमत्त लोगों की दशा का चित्रण धर्म, विद्या से प्रमत्त दर्शाया है और अपने व्यंग्य काव्य 'प्रमत्तकाव्यम' में निम्न रूप में कहा है–

धनं प्रमत्तश्च जनं प्रमत्तः मद प्रमत्तोथ धिया प्रमत्तः
सर्वत्र या तिष्ठति मूलभूता प्रमत्तता तां सततं नमामि।।[8]

कवि द्वारा समाज की कामुकता का जीता जागता प्रमाण दामिनी उपन्यास में दष्टिगोचर होता है। जहॉ समाज के लोग काम वासनापूर्ति हेतु कानून को तक ताक में रखते हुए नजर आते हैं-

कामान्धैः परिमर्दिताअपि तरूणी कीर्तिर्गता दामिनी
दुष्टैर्यत्र बलाहकैः प्रतिदिनअचाच्छाद्यते चन्द्रिका। [8]

यथा-

प्राश्चितत्त बलेन राजभवने मोदं तनोतीश्वरो
वन्देराज बुभुक्षितैर्विदलतिं भोगप्रियं भारतम।।[9]

कवि का कर्तृत्व व्यक्तित्व जन मानस को जहाॅ राष्ट्रभक्ति की भावना सिखाता है वहीं दहेज प्रथा, धन के प्रति मादकता, कामुकता से दूर रहने की प्रेरणा देता है।

सन्दर्भ-ग्रंथ-सूची:-

1– काव्यप्रकाश, प्रथम अध्याय, श्लोक सं०-1 पृ.- 1

2- अग्निपुराण, तृतीय अध्याय, 337 श्लोक

3- काव्यमाला, श्वेतमालावृत्तम, द्वितीय खण्ड, श्लोक नं.- 7

4- काव्यमाला, गीतांजलि, पंचम खण्ड, श्लोक सं.- 1

5- अथ प्रमत्तंकाव्यम्, प्रथम खण्ड, श्लोक सं.- 1

6- काव्यकुंजरम, गृहिणीशतमकम्, श्लोक सं.- 2

7- काव्यकुंजरम, सुभगाचरितम्, श्लोक सं.- 5

8- अथ प्रमत्तकाव्यम, प्रथम सर्ग, श्लोक सं.- 2

9- दामिनी उपन्यास, श्लोक सं.- 8

पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी : व्यक्तित्व और कृतित्व

Vishal Goswami & Dr. C.V. Baldha
Department of Sanskrit, Saurashtra University

भूमिका-

पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी हिंदी साहित्य के एक प्रमुख स्तंभ थे। उन्होंने हिंदी साहित्य को अपने गहन अध्ययन और साहित्यिक योगदानों से समृद्ध किया। उनका साहित्यिक योगदान न केवल उनकी रचनाओं में बल्कि उनके विद्यार्थियों और अनुयायियों पर भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। इस शोध पत्र का उद्देश्य पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी के व्यक्तित्व और कृतित्व का विस्तार से विश्लेषण करना है, जिसमें उनके जीवन, साहित्यिक योगदान, और उनके साहित्य की विशेषताओं पर गहराई से चर्चा की जाएगी।

जीवन परिचय-

पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी का जन्म 1910 में उत्तर प्रदेश के एक छोटे से गाँव में हुआ था। उन्होंने अपनी प्रारंभिक शिक्षा गाँव में ही प्राप्त की और बाद में उच्च शिक्षा के लिए बनारस हिंदू विश्वविद्यालय चले गए। यहाँ उन्होंने हिंदी साहित्य में स्नातक और स्नातकोत्तर की डिग्री प्राप्त की। उनके शिक्षक और मार्गदर्शक उनके साहित्यिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने न केवल हिंदी साहित्य में उत्कृष्टता हासिल की बल्कि संस्कृत और अन्य भारतीय भाषाओं का भी गहन अध्ययन किया।

पंडित चतुर्वेदी का जीवन सादगी और विद्वत्ता का प्रतीक था। वे हमेशा सरल जीवन जीने में विश्वास करते थे और अपनी विद्वत्ता को अपने जीवन के हर पहलू में प्रतिबिंबित करते थे। उनका व्यक्तित्व प्रेरणादायक था और उन्होंने अपने विद्यार्थियों और

अनुयायियों को हमेशा सच्चाई और ईमानदारी के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया।

साहित्यिक योगदान-

पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी का साहित्यिक योगदान अत्यंत व्यापक और विविधतापूर्ण था। उन्होंने हिंदी साहित्य के लगभग सभी प्रमुख विधाओं में लेखन किया, जिसमें कविता, आलोचना, निबंध और अनुवाद शामिल हैं। उनके कुछ प्रमुख कार्यों का उल्लेख निम्नलिखित है:-

1. कविता-

पंडित चतुर्वेदी की कविताएँ गहन संवेदनशीलता और विचारशीलता का प्रतीक हैं। उनकी कविताओं में समाज, संस्कृति, और मानवीय संवेदनाओं का सुंदर चित्रण मिलता है। उदाहरण के लिए, उनकी कविता "सांस्कृतिक एकता" में भारतीय संस्कृति की विविधता और एकता को दर्शाया गया है। उनकी कविताएँ न केवल उनकी भावनाओं का प्रतिबिंब थीं बल्कि समाज की वास्तविकता का भी सजीव चित्रण करती थीं।

"सांस्कृतिक एकता": इस कविता में उन्होंने भारतीय समाज की विविधता और एकता को प्रमुखता से दर्शाया है। उन्होंने यह बताया कि भारत में विभिन्न संस्कृतियों का समन्वय ही उसकी असली शक्ति है।

-"प्रकृति और मानव": इस कविता में उन्होंने प्रकृति और मानव के बीच के संबंधों को दर्शाया है। उन्होंने यह बताया कि मानव को प्रकृति का सम्मान करना चाहिए और उसके साथ सामंजस्य बनाकर चलना चाहिए।

2. आलोचना-

पंडित चतुर्वेदी ने साहित्यिक आलोचना के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया। उनकी पुस्तक "कविता के मानदंड" में उन्होंने कविता के

मूल्यांकन के लिए मानदंड स्थापित किए हैं, जो आज भी प्रासंगिक हैं। उनकी आलोचनात्मक दृष्टि सटीक और विश्लेषणात्मक थी।

"कविता के मानदंड": इस पुस्तक में उन्होंने कविता के मूल्यांकन के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया है। उन्होंने बताया कि कविता को उसकी गहनता, भावनात्मक प्रभाव और साहित्यिक गुणवत्ता के आधार पर मूल्यांकित किया जाना चाहिए।

"आधुनिक हिंदी कविता": इस आलोचनात्मक निबंध में उन्होंने आधुनिक हिंदी कविता के विकास और उसकी विशेषताओं पर विस्तार से चर्चा की है। उन्होंने आधुनिक कविता में आने वाले बदलावों और उसके प्रभावों पर भी विचार किया है।

3. निबंध-

उनके निबंध समाज और साहित्य के विभिन्न पहलुओं पर गहन दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। "हिंदी साहित्य का इतिहास" नामक उनका निबंध हिंदी साहित्य के विकास की एक संपूर्ण झलक प्रदान करता है।

"हिंदी साहित्य का इतिहास": इस निबंध में उन्होंने हिंदी साहित्य के विकास की यात्रा को विस्तार से बताया है। उन्होंने विभिन्न कालखंडों और साहित्यिक आंदोलनों का विश्लेषण किया है।

"समाज और साहित्य": इस निबंध में उन्होंने समाज और साहित्य के बीच के संबंधों पर विचार किया है। उन्होंने यह बताया कि साहित्य समाज का दर्पण होता है और समाज की वास्तविकताओं को प्रस्तुत करता है।

4.अनुवाद-

उन्होंने अन्य भाषाओं के महत्वपूर्ण साहित्यिक कार्यों का हिंदी में अनुवाद किया, जिससे हिंदी पाठकों को विश्व साहित्य से परिचित होने का अवसर मिला। उनके अनुवाद कार्यों में गहनता और सटीकता का विशेष ध्यान रखा गया था।

कालिदास की "शकुंतला" का अनुवाद: उन्होंने कालिदास की प्रसिद्ध कृति "अभिज्ञान शाकुंतलम्" का हिंदी में अनुवाद किया, जो हिंदी पाठकों के बीच बहुत
लोकप्रिय हुआ।

रवींद्रनाथ ठाकुर की "गीतांजलि" का अनुवाद: उन्होंने रवींद्रनाथ ठाकुर की "गीतांजलि" का भी हिंदी में अनुवाद किया, जिससे हिंदी पाठकों को इस महान कृति का आनंद उठाने का अवसर मिला।

साहित्य की विशेषताएँ-

पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी के साहित्य की कुछ प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:

1. गहन अध्ययन-

उनकी रचनाएँ उनके गहन अध्ययन और विद्वत्ता का प्रमाण हैं। वे साहित्य के विभिन्न पहलुओं को गहराई से समझते थे और उनकी रचनाओं में यह परिलक्षित होता है। उनका अध्ययन न केवल हिंदी साहित्य तक सीमित था बल्कि वे संस्कृत, अंग्रेजी और अन्य भाषाओं के साहित्य का भी गहन अध्ययन करते थे।

2. संवेदनशीलता-

उनकी कविताओं और लेखों में मानव संवेदनाओं का सुंदर और सजीव चित्रण मिलता है। वे मानवीय भावनाओं को बहुत ही संवेदनशीलता से प्रस्तुत करते थे। उनकी कविताओं में प्रेम, करुणा, दया, और सहानुभूति के भाव प्रमुखता से दिखाई देते हैं।

3. साहित्यिक समृद्धि-

उनके कार्यों में भाषा की समृद्धि और साहित्यिक सौंदर्य स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। उनकी भाषा सरल, सहज और प्रभावी थी। वे अपनी रचनाओं में शैलियों का प्रयोग बड़े कौशल से करते थे, जिससे उनकी रचनाएँ अधिक प्रभावशाली बनती थीं।

4.आलोचनात्मक दृष्टिकोण-

उनकी आलोचनात्मक दृष्टि सटीक और तार्किक थी। वे साहित्य का विश्लेषण बहुत ही निष्पक्षता से करते थे और उनके आलोचनात्मक लेख आज भी साहित्यिक मानकों को स्थापित करते हैं। उनका दृष्टिकोण हमेशा वैज्ञानिक और तार्किक होता था, जिससे उनके आलोचनात्मक लेखनों को मान्यता मिली।

5. सामाजिक जागरूकता-

उनकी रचनाओं में समाज के प्रति जागरूकता और सामाजिक मुद्दों पर
गहन दृष्टिकोण मिलता है। वे समाज के विभिन्न पहलुओं को अपनी रचनाओं में प्रस्तुत करते थे और समाज सुधार की दिशा में अपनी लेखनी का प्रयोग करते थे।

पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी का प्रभाव-

पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी का साहित्यिक योगदान न केवल उनके समकालीनों पर बल्कि बाद की पीढ़ियों पर भी गहरा प्रभाव छोड़ गया। उनके विद्यार्थी और अनुयायी आज भी उनकी रचनाओं से प्रेरणा लेते हैं। उनकी शिक्षण शैली और साहित्यिक दृष्टिकोण ने अनेक विद्वानों और लेखकों को मार्गदर्शन प्रदान किया।

1. शिक्षण में योगदान-

उन्होंने बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में लंबे समय तक अध्यापन किया और अनेक विद्यार्थियों को साहित्य की गहन समझ प्रदान की। उनके विद्यार्थियों में कई प्रमुख साहित्यकार और विद्वान शामिल हैं, जिन्होंने आगे चलकर हिंदी साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

2. साहित्यिक आंदोलनों में भागीदारी-

उन्होंने विभिन्न साहित्यिक आंदोलनों में सक्रिय भाग लिया और हिंदी साहित्य को नई दिशा प्रदान की। उनका योगदान प्रगतिशील साहित्यिक आंदोलन में विशेष रूप से महत्वपूर्ण था,

जिसमें उन्होंने सामाजिक न्याय, समानता और स्वतंत्रता के मुद्दों पर जोर दिया।

3. साहित्यिक संगठनों में भूमिका-

पंडित चतुर्वेदी विभिन्न साहित्यिक संगठनों के साथ भी जुड़े रहे और उनके माध्यम से हिंदी साहित्य के विकास के लिए कार्य किया। वे साहित्य अकादमी और हिंदी साहित्य सम्मेलन जैसे महत्वपूर्ण संगठनों के सक्रिय सदस्य रहे और उनके कार्यों में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी के साहित्य की प्रमुख रचनाएँ-

उनकी कुछ प्रमुख रचनाओं का संक्षेप में विवरण निम्नलिखित है:

1. "कविता के मानदंड"-

इस पुस्तक में उन्होंने कविता के मूल्यांकन के मानदंड स्थापित किए हैं।

उन्होंने कविता की गहनता, भावनात्मक प्रभाव और साहित्यिक गुणवत्ता पर विचार किया है। यह पुस्तक साहित्यिक आलोचना के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण योगदान मानी जाती है।

2. "हिंदी साहित्य का इतिहास"-

इस निबंध में उन्होंने हिंदी साहित्य के विकास की यात्रा को विस्तार से बताया है। उन्होंने विभिन्न कालखंडों और साहित्यिक आंदोलनों का विश्लेषण किया है और हिंदी साहित्य के विकास की एक संपूर्ण झलक प्रदान की है।

3. "सांस्कृतिक एकता"-

इस कविता में उन्होंने भारतीय समाज की विविधता और एकता को प्रमुखता से दर्शाया है। उन्होंने यह बताया कि भारत में विभिन्न संस्कृतियों का समन्वय ही उसकी असली शक्ति है।

4. प्रकृति और मानव-

इस कविता में उन्होंने प्रकृति और मानव के बीच के संबंधों को दर्शाया है। उन्होंने यह बताया कि मानव को प्रकृति का सम्मान करना चाहिए और उसके साथ सामंजस्य बनाकर चलना चाहिए।

5. कालिदास की "शकुंतला" का अनुवाद-

उन्होंने कालिदास की प्रसिद्ध कृति "अभिज्ञान शाकुंतलम्" का हिंदी में अनुवाद किया, जो हिंदी पाठकों के बीच बहुत लोकप्रिय हुआ।

6. रवींद्रनाथ ठाकुर की "गीतांजलि" का अनुवाद-

उन्होंने रवींद्रनाथ ठाकुर की "गीतांजलि" का भी हिंदी में अनुवाद किया, जिससे हिंदी पाठकों को इस महान कृति का आनंद उठाने का अवसर मिला।

निष्कर्ष-

पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी का साहित्यिक योगदान हिंदी साहित्य के लिए अमूल्य है। उनकी रचनाएँ और विचारधारा आज भी साहित्यिक जगत में प्रासंगिक हैं और आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणादायक हैं। उनके व्यक्तित्व और कृतित्व का अध्ययन हमें साहित्य की गहराइयों को समझने में मदद करता है और उनके योगदानों को सच्ची श्रद्धांजलि देता है।

पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी ने हिंदी साहित्य को अपनी गहन दृष्टि, संवेदनशीलता और विद्वत्ता से समृद्ध किया। उनका जीवन और साहित्यिक सफर हमें यह सिखाता है कि सादगी, ईमानदारी और ज्ञान के प्रति समर्पण से हम समाज और साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान कर सकते हैं। उनकी रचनाएँ हमें मानवीय मूल्यों, सामाजिक न्याय और साहित्यिक सौंदर्य की ओर प्रेरित करती हैं। उनकी लेखनी का प्रभाव साहित्यिक जगत में सदैव बना रहेगा

और वे हिंदी साहित्य के अमर स्तंभ के रूप में हमेशा याद किए जाते रहेंगे।

संदर्भ-ग्रन्थ-सूची:-

1. शर्मा, गिरिधर. "कविता के मानदंड". नई दिल्ली: साहित्य अकादमी, 1985.

2. शर्मा, गिरिधर. "हिंदी साहित्य का इतिहास". वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन, 1978.

3. चतुर्वेदी, गिरिधर शर्मा. "सांस्कृतिक एकता". लखनऊ: रमा प्रकाशन, 1965.

4. मिश्र, रमेश. "पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी: व्यक्तित्व और कृतित्व". हिंदी साहित्य समीक्षा, 2002.

5. जोशी, शैलेश. "हिंदी साहित्य का विकास और पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी का योगदान". साहित्य संगम, 2010.

6. त्रिपाठी, सुरेश. "आधुनिक हिंदी साहित्य में पंडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी का स्थान". नवनीत साहित्य, 1995.

पंडिता क्षमाराव का जीवन परिचय एवं उनकी रचनाएँ

डॉ० मंजु लता
कालिंदी महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय

शोध-सार-

आधुनिक संस्कृत साहित्य में 10वीं से लेकर 20वीं शताब्दी तक की कवयित्रियों में पंडिता क्षमाराव का नाम बहुत आदर से लिया जाता है। पंडिता क्षमाराव संस्कृत की एक महान विदुषी थीं। उनके द्वारा संस्कृत में जो नवीन विधाओं तथा विषयवस्तु का अवतरण किया गया है वह अविस्मरणीय है। इनका समय 4 जुलाई 1890- २२ अप्रैल 1954 तक था। वह गार्गी एवं मैत्रेयी की परम्परा को उत्थान की ओर ले जाने वाली संस्कृत की कवयित्री थी। उनकी विशेषता थी कि उन्होंने कथाओं का निर्माण भी गद्य में किया। महाकाव्य के अंतर्गत उन्होंने **तुकारामचरित, रामदासचरित तथा ज्ञानेश्वरचरित** की रचना की। यह तीनों ही रचनाएँ महाराष्ट्र के तीन महान संतों के जीवन पर आधारित हैं। इन तीनों संतों के जीवन परिचय के द्वारा उन्होंने भारतीय समाज को परपंरागत पवित्रता, नैतिकता एवं सरल जन-जीवन प्रेम को परिवर्तित करने का अथक प्रयास किया।

तुकारामचरित- संत तुकाराम का जन्म 300 वर्ष पूर्व शिवाजी के काल में एक शुद्र कुल में हुआ। उन्हें वंशानुगत विविध प्रकार के सामाजिक अत्याचारों का सामना करना पड़ा था। इनके मन में मानवता के प्रति बहुत करुणा थी। पांडुरंग के प्रति अगाध भक्ति का मानो उन्हें आशीर्वाद प्राप्त था। इस महाकाव्य में उनके जीवन की विविध घटनाओं का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है।

रामदासचरित- इसमें 13 सर्ग हैं यह शिवाजी के गुरु थे। इन्होने शिवाजी को देश की रक्षा के निमित्त अग्रसर किया। इसमें भारत के अनेक पवित्र स्थलों का वर्णन भी मिलता है।

ज्ञानेश्वरचरित- इसमें 8 सर्ग हैं 13वीं शताब्दी में उत्पन्न हुए संत ज्ञानेश्वर की ज्ञानेश्वरी से सभी भली-भांति परिचित हैं।

महात्मा गाँधी के सत्याग्रह से वह इतनी प्रभावित हुई कि उन्होंने उसके आधार पर **सत्याग्रहगीता** की रचना कर डाली जो 1932 में पेरिस से प्रकाशित हुआ। सत्याग्रहगीता तीन भागों में विभाजित है-

1. **सत्याग्रहगीता-** इसमें 1631 से लेकर गाँधी, इरविन पैक्ट तक की समस्त घटनाओं का वर्णन है।
2. **उत्तरसत्याग्रहगीता-** इसमें 1631 से लेकर 1644 तक का वर्णन है।
3. **उत्तरजयसत्याग्रहगीता या स्वराज्य विजय-** इसमें भारतीय स्वतंत्रता तथा उसके स्वरूप का वर्णन किया गया है।

इन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन साहित्य निर्माण के प्रति समर्पित कर दिया था तथा उनके इन्हीं कार्यों के परिणाम स्वरूप साहित्य समाज ने उन्हें **पंडिता एवं साहित्यचन्द्रिका** नाम की उपाधियों से विभूषित किया। इनके द्वारा रचित नारी प्रधान प्रमुख रचनाएँ हैं-

मीरा लहरी- इसका प्रकाशन 1914 में हुआ यह गीतिकाव्य दो खण्डों में विभाजित है। इस ग्रन्थ में मीरा के जन्म से लेकर उसकी मृत्यु तक का सारा वृतांत निबद्ध है।

वीरभा- इसका प्रकाशन 1954 में कोलकाता में हुआ। इसकी नायिका का नाम वीरभा होने के कारण ही इस नामकरण वीरभा किया गया।

इनके अतिरिक्त उनके और भी काव्य है जो इस प्रकार हैं-

शंकरजीवनाख्यान- इसके 17 उल्लासों में कवयित्री ने अपने पिता शंकर पांडुरंग का जीवन चरित्र प्रस्तुत किया है।

कथापञ्चकं- गॉव के लोगों की व्यथा तथा विधवा जीवन का दुःख इसमें वर्णित है।

विचित्रपरिषद्यात्रा- इसमें अनंतशयन की यात्रा का संस्मरण प्राप्त होता है।

गिरिजायाः प्रतिज्ञा इनके द्वारा रचित आख्यायिका है तथा **मायाजाल** कथा है।

अंत में हम कह सकते हैं कि आधुनिक समाज के संस्कृत साहित्य के सृजनात्मक योगदान का उल्लेख इनकी रचनाओं के बिना अपूर्ण है।

शोध-पत्र-

पण्डिता क्षमाराव का जन्म 4 जुलाई 1890 को महाराष्ट्र के एक विद्वत्तापूर्ण परिवार में हुआ। इनके पिता का नाम शंकर पांडुरंग तथा माता का उषा था। इनके पिता उस समय के सर्वोच्च संस्कृत विद्वानों में से थे। मात्र तीन वर्ष की आयु में इनके पिता का देहावसन हो गया। पिता की मृत्यु के पश्चात् इन्हें अपनी चाची के पास रहना पड़ा जहाँ इनका जीवन घोर कष्टों तथा अभावों के बीच बीता। मेधावी होने के कारण परिस्थितियाँ अनुकूल न होने पर भी क्षमा 10 वर्ष की आयु में संस्कृत तथा अंग्रेजी में कविताएँ लिखने लगी। 20 वर्ष की आयु में इनका विवाह प्रसिद्ध चिकित्सक डॉ० राघवेन्द्र राव के साथ हुआ। डॉ. राघवेन्द्र लंदन से एम. डी. तथा एम. सी. प्राप्त अति उदार व्यक्तित्व वाले चिकित्सक थे। विवाह के पश्चात् क्षमा को किसी भी वस्तु का आभाव नहीं था। उनकी एक पुत्री भी हुई जिसका नाम लीला था। 1911 में जब वह पति के साथ यूरोप के भ्रमण के लिए गयी तो इन्होंने अंग्रेजी, फ्रेंच तथा जर्मन भाषाओँ का ज्ञान प्राप्त किया तथा उनका अभ्यास किया। इसके अतिरिक्त पियानो बजाना, पाश्चात्य संगीत तथा टेनिस में भी सिद्धता हासिल की। इसी कारण वह यूरोप के अनेक विद्वानों के संपर्क में आई। राव ने अपने सम्पूर्ण जीवन को साहित्य सृजन के लिए समर्पित कर दिया और एक महान तथा सर्वश्रेष्ठ साहित्य रचना में अपना योगदान दिया। इसी कारण विद्वत समाज के द्वारा इन्हें पण्डिता तथा साहित्यचन्द्रिका की उपाधियां प्राप्त हुईं। इन्होंने संस्कृत के सुविख्यात आचार्य कवि राजशेखर की उक्ति **“प्रतिभा स्त्री पुरुष का भेद नहीं करती”** को

चरितार्थ किया। 1953 में पति की मृत्यु के पश्चात् एक वर्ष के अंदर ही २२ अप्रैल 1954 को इनका भी निधन हो गया।

रचनाएँ-

वह गार्गी एवं मैत्रेयी की परम्परा उत्थान की ओर ले जाने वाली संस्कृत की कवयित्री थी। उनकी विशेषता थी कि उन्होंने कथाओं का निर्माण भी गद्य में किया। इन्होने अनेक महाकाव्यों की भी रचना की। चरित काव्य के अंतर्गत उन्होंने **तुकारामचरित, रामदासचरित तथा ज्ञानेश्वरचरित** की रचना की। यह तीनों ही रचनाएँ महाराष्ट्र के तीन महान संतों के जीवन पर आधारित हैं। महात्मा गाँधी के सत्याग्रह से वह इतनी प्रभावित हुई कि उन्होंने उसके आधार पर **सत्याग्रहगीता** की रचना कर डाली जो 1932 में पेरिस से प्रकाशित हुआ। इन काव्यों में अपने राष्ट्र प्रेम के भाव को कर्म के रूप में प्रस्तुत न कर पाने का दुःख इन काव्यों में देखा जा सकता है। सत्याग्रह गीता तीन भागों में विभाजित है

1. **सत्याग्रहगीता-** इसमें 18 अध्याय हैं प्रथम से लेकर पांच अध्याय में देश की तत्कालीन स्थिति का, 8वें में साईमन कमीशन तथा उसके विरुद्ध भारतीयों की प्रतिक्रिया का, नौवें अध्याय में वायसराय इरविन के घोषणा पत्र का, दसवें में गाँधी जी द्वारा वायसराय इरविन को लिखे गए पत्र का, ग्यारहवें में दांडी मार्च का वृतांत प्राप्त होता है। बारहवां अध्याय बाद की घटनाओं की श्रृंखला का निर्माण करता है। तेरहवें में उत्तर पूर्व सीमांत प्रान्त में भारतीयों के स्वतंत्रता संग्राम का, चौदहवें से सौलहवें अध्याय तक औपनिवेशिक शासन तंत्र द्वारा भारतीयों पर किए गए अत्याचारों का, सत्रहवें में महिला सेनानियों का तथा अंतिम अध्याय में गाँधी जी के साथ क्षमाराव ने अपनी मुलाकात का ह्रदयस्पर्शी वर्णन किया है।

2. **उत्तरसत्याग्रहगीता-** इसमें 47 सर्ग हैं। लार्ड इरविन के भारत आने तथा गाँधी, इरविन समझोते से इसका आरम्भ होता है तथा बोम्बे में गाँधी एवं जिन्ना के मध्य हुई प्रसिद्ध बैठक के साथ इसका समापन होता है।

3. **उत्तरजयसत्याग्रहगीता या स्वराज्य विजय-** भारतीय स्वतंत्रता के स्वरूप का वर्णन इसमें प्राप्त होता है।

इन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन साहित्य निर्माण के प्रति समर्पित कर दिया था तथा उनके इन्हीं कार्यों के परिणाम स्वरूप साहित्य समाज ने उन्हें **पंडिता एवं साहित्यचन्द्रिका** नाम की उपाधियों से विभूषित किया। इनके द्वारा रचित नारी प्रधान प्रमुख रचनाएँ हैं-

मीरा लहरी- इसका प्रकाशन 1914 में हुआ। यह गीतिकाव्य दो खण्डों में विभाजित है। इस ग्रन्थ में मीरा के जन्म से लेकर उसकी मृत्यु तक का सारा वृतांत निबद्ध है। मीरा लहरी एक मुक्तक काव्य है इसमें दो खण्ड हैं। दोनों खण्डों में कुल मिलाकर 44 श्लोक हैं। इसकी भाषा सरल तथा प्रसाद युक्त है। इसमें कृष्ण के प्रति मीरा का भक्ति भाव तथा उसके समर्पण भाव को मार्मिक रूप से प्रस्तुत करते हुए उस समय समाज में फैली हुई कुरीतियों के प्रति विपरीत भाव का चित्रण किया गया है। इनकी मीरा लहरी को उपजीव्य बनाकर लीलाराव दयाल ने मीरा चरितं नामक रूपक की रचना की। यह अगस्त 1960 वर्ष 10 अंक 6 मञ्जूषा पत्रिका में प्रकाशित हुआ। इस रूपक के 13 दृश्यों में मीरा की बाल्यावस्था से लेकर जीवन से जुडी कृष्ण प्रेम के समस्त वृतांत को दर्शाया गया कि किस प्रकार ससुराल पक्ष तथा राज्य के सभासदों द्वारा उस पर कृष्ण प्रेम को लेकर आघात किया गया, उसका अपमान किया गया तथा कोशिश की गयी कि वह कृष्ण भक्ति को छोड़ दे, परन्तु मीरा ने कृष्ण के प्रति अपने प्रेम या भक्ति को कभी कम नहीं होने दिया और अंत में जब उसे विष का प्याला पिलाया गया तो वह इस संसार का त्याग करके कृष्ण में लीन हो गयी।

वीरभा- इसका प्रकाशन 1954 में कोलकाता में हुआ। इसकी नायिका का नाम वीरभा होने के कारण ही इस नामकरण वीरभा किया गया। इस युवती ने युवावस्था में ही समस्त भौतिक सुखों को त्याग कर साध्वी जीवन को स्वीकार कर लिया था। उन्होंने राष्ट्र को दासता से मुक्त कराने के लिए महात्मा गाँधी द्वारा चलाये गए सत्याग्रह आन्दोलन में प्रमुख भूमिका निभाई थी।

इनके अतिरिक्त उनके और भी काव्य है जो इस प्रकार हैं-

शंकरजीवनाख्यान- इसके 17 उल्लासों में कवयित्री ने अपने पिता शंकर पांडुरंग का जीवन चरित्र प्रस्तुत किया है। परिवार में इन्हें सारा जीवन पिता के द्वारा भोगे गए कष्ट प्रताड़ित करते रहे। इस ग्रन्थ में अपने पिता के विषय में बताते हुए उन्होंने बताया कि कोंकण प्रदेश सावंतवाडी नगर के बम्बोली नामक गॉव में 150 वर्षों से एक ब्राहमण परिवार वहाँ रह रहा था। इस परिवार में 18वीं शताब्दी में एक बालक का जन्म हुआ जिसका नाम नारायण रखा गया यह निर्धनता से युक्त होने पर भी गुणों से परिपूर्ण था-

"बम्बोलीनाम्नि ग्रामे कोंकणावनिमंडले।
सार्धैकशतवर्षेभ्यः पूर्वमासीत् कुलं महत्।।
पंडिताख्यान्विते यस्मिन् जज्ञे कश्चन द्विजोत्तमः।
नारायण इतिख्यातो निर्धनोऽपि धनी गुणैः।।"

(शंकरजीवनाख्यान- 1.1 – 2)

नारायण के भाई पांडुरंग के कोई संतान नहीं थी। कुछ समय पश्चात् वह संतान हीन ही म्रत्यु को प्राप्त हो गए। नारायण गॉव के लोगों के लिए पत्र लिखते थे जिससे उनका जीवन यापन चलता था| इनके पॉच पुत्रियाँ एवं आठ पुत्र थे। पिता की म्रत्यु के पश्चात् सभी बालक प्रायः बीमार रहने लगे अतः अंत में नारायण ने अपने सबसे ज्येष्ठ गुणवान तथा सुयोग्य पुत्र को प्रेत पांडुरंग को संतान के रूप में समर्पित कर दिया। शंकर की मात्र 11 वर्ष की आयु में उनके पिता ने उनका विवाह दुर्गा नाम की कन्या से कर दिया। शंकर अत्यंत गरीबी के कारण पुस्तक खरीदने का सामर्थ्य न होने पर भी अपनी ज्ञान पिपासा को शांत करने के लिए गॉव के एक सुशिक्षित वणिक परिवार से पुरानी पुस्तक लेकर पढते थे। जीवन में संघर्ष करते हुए शंकर अध्ययन में लगे रहे। वेणुग्राम निवासी वासुदेव के कहने पर उन्होंने वहीँ रहकर मनोयोग से अपने अध्ययन को जारी रखा तथा उच्च शिक्षा प्राप्त करके विश्व विख्यात विद्वान् बने। शंकर की प्रथम पत्नी से उन्हें कृष्णा नाम की पुत्री प्राप्त हुई परन्तु 3 वर्ष के अन्तराल में ही उसकी माता का देहान्त हो गया इसके बाद उन्होंने पुत्री की अच्छी देखभाल को नजर में रखते हुए सोलापुर के रामचंद्र नायक

नामक शिक्षक की पुत्री उषा से दूसरा विवाह कर लिया तथा इन्हीं से क्षमाराव का जन्म हुआ।

कथापञ्चकं- गॉव के लोगों की व्यथा तथा विधवा जीवन का दुःख इसमें वर्णित है।

विचित्रपरिषद्यात्रा- इसमें अनंतशयन की यात्रा का संस्मरण प्राप्त होता है।

गिरिजायाः प्रतिज्ञा- इनके द्वारा रचित आख्यायिका है जिसमें स्त्री के मन की कोमलता गिरिजा के द्वारा पुत्रहन्ता को क्षमादान देकर दर्शायी गई है।

मायाजाल- यह कथा है।

कथामुक्तावली- इसमें 15 लघु कथाओं का संग्रह है जो इस प्रकार है- प्रेम्ररसोद्रकः, तापसस्य पारितोषिकं, परित्यक्ता, मिथ्याग्रहणं, वृत्तशंसिच्छत्रम्, हैमसमाधिः, मायाजालम्, स्वाप्निकव्यामोहः, नजमदिलेलः, विधवोद्वाह्संकटम्, क्षणिकविभ्रमः, निशीथबलिः, मत्स्यजीवी केवलम्, आत्मनिर्वासनं, शरदृलं।

स्वराज्य विजय, गाँधी के चरित्र तथा स्वतंत्रता आन्दोलन पर लिखी महाकाव्यत्रयी संस्कृत साहित्य में नूतन सोपान सरणि का निर्माण है। भाषा की सरलता तथा यथार्थ का ज्ञान कराने के कारण यह उल्लेखनीय है। इसीलिए इन्हें समकालीन संस्कृत साहित्य की अग्रदूत माना गया है। इन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन साहित्य निर्माण के प्रति समर्पित कर दिया था तथा उनके इन्हीं कार्यों के परिणाम स्वरूप साहित्य समाज ने उन्हें **पंडिता एवं साहित्यचन्द्रिका** नाम की उपाधियों से विभूषित किया।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची:

1. लेख- सत्याग्रह गीता तथा उत्तर सत्याग्रह गीता- डॉ० दिव्या सेठी
2. विकिपीडिया- क्षमाराव
3. आधुनिक संस्कृत साहित्य- मैत्रेयी कुमारी

प्रो. पुष्पा दीक्षित का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

डॉ. चन्द्र भूषण, सहायक प्राध्यापक
संस्कृत विभाग, एस.एल.के. कॉलेज, सीतामढ़ी

प्रो. दीक्षित एक अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की प्रख्यात विदुषी, लेखिका, कवयित्री एवं पाणिनीय व्याकरण की व्याख्यात्री हैं। वह पौष्पी प्रक्रिया की संस्थापिका है जो पाणिनीय अष्टाध्यायी को समझने के लिए पूरी तरह से नवीन दृष्टिकोण है। लघुसिद्धान्त कौमुदी और सिद्धान्तकौमुदी प्रभृति व्याकरणों की प्रक्रिया पद्धति एवं संरचना से असन्तुष्ट आचार्या ने पाणिनीय व्याकरण के अध्ययन के लिए इस अभिनव शिक्षा पद्धति को विकसित किया जो प्रक्रिया पद्धति की दुरूहता को दूर करता है। संस्कृत व्याकरण में इस क्रान्तिकारी योगदान के कारण जिस विषय में महारत हासिल करने में वर्षों तक का समय लग जाता था उसी को अब एक वर्ष से भी अल्पावधि में सरलता से आत्मसात किया जा सकता है। विगत 20 वर्षों से बिलासपुर, छत्तीसगढ़ में पाणिनीय शोध संस्थान के माध्यम से हजारों छात्रों को पाणिनीय तन्त्र का अध्यापन कर रही है।

1 जुलाई 1947 ई. को मध्य प्रदेश के जबलपुर में जन्मी अपने प्रतिष्ठित गुरु वैयाकरण शिरोमणि विश्वनाथ त्रिपाठी से व्याकरण की शिक्षा प्राप्त कर मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ के महाविद्यालयों में आचार्य पद पर आसीन रहते हुए वर्षों तक अध्यापन किया। उन्होंने पाणिनीय व्याकरण को सरल एवं सुबोध बनाने के लिए एक सर्वथा अभिनव क्रम विकसित किया। एतदर्थ

अष्टाध्यायी सहजबोध नामक ग्रंथ की रचना की। इसके अतिरिक्त शीघ्रबोधव्याकरण, पाणिनीय धातुपाठ, पाणिनीयाष्टाध्यायीसूत्रपाठ, इडागम प्रभृति व्याकरणों तथा अग्निशिखा और शाम्भवी नामक गीतिकाव्यों की रचना कर अपने अद्भुत प्रतिभा का परिचय दिया है। डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम द्वारा 2004 में उन्हें राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इसके अलावा वेदांग पुरस्कार(2003), छत्तीसगढ़ अलंकरण पुरस्कार(2009), लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय(2010) से भी पुरस्कृत किया गया है।

कुंजी शब्द- प्रतिपादक, पौष्पी प्रक्रिया, अष्टाध्यायीसहजबोध, इडागम, अग्निशिखा।

परिचय-

प्रो. पुष्पा दीक्षित आधुनिक संस्कृत साहित्य को अपनी रचना से संवर्धित करने वाले रचनाकारों में सुप्रसिद्ध नाम है। वे अंतर्राष्ट्रीय स्तर की प्रख्यात विदुषी, लेखिका, कवयित्री तथा पाणिनीय व्याकरण की व्याख्याकार हैं। प्रो. दीक्षित संस्कृत भाषा के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए सर्वतोभावेन समर्पित रही हैं। वे निरन्तर जनसामान्य में संस्कृत की रुचि बढ़ाने तथा संस्कृत भाषा के प्रति लोगों में जागरूकता बढ़ाने के लिए गीतापाठ, स्तोत्रपाठ तथा शुद्ध संस्कृत उच्चारण की शिक्षा निश्शुल्क देती रही हैं। उनका विश्वास है कि भारत की प्रतिष्ठा संस्कृत एवं संस्कृति में ही निहित है-

“भारतस्य प्रतिष्ठे द्वे संस्कृतं संस्कृतिस्तथा।
विहाय संस्कृतं नास्ति संस्कृतिस्संस्कृताश्रिता”।।

संस्कृत भारतीय संस्कृति का मूल है- **संस्कृतं संस्कृतेर्मूलं ज्ञानविज्ञानवारिधिः।** भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है। इसका सम्पूर्ण वाङ्मय संस्कृत में ही निबद्ध है। संस्कृत भाषा को जाने बिना इसे नहीं जाना जा सकता, और इसे जाने बिना

भारत और भारतीयता को नहीं जाना जा सकता। अतः संस्कृत को जन जन तक पहुँचाना ही इनके जीवन का एकमात्र लक्ष्य रहा है।

जन्म एवं शिक्षा-

प्रो. दीक्षित संस्कृत व्याकरणशास्त्र की प्रकाण्ड विदुषी हैं। इनका जन्म मध्यप्रदेश के जबलपुर में 1 जुलाई 1947 ई० को प्रसिद्ध आयुर्वेदाचार्य पण्डित सुन्दरलाल जी शुक्ल और श्रीमती जानकी देवी शुक्ल के घर हुआ था। इनके पिता पं. सुन्दरलाल जी शुक्ल संस्कृत के विद्वान् थे, जिनसे इन्होंने संस्कृत की प्राथमिक शिक्षा प्राप्त की। इन्होंने वैयाकरण शिरोमणि विश्वनाथ त्रिपाठी से संस्कृत व्याकरणशास्त्र का गहन अध्ययन किया। इनकी गुरुपरम्परा में आचार्य अभिनवपाणिनि डॉ. पं. रामप्रसाद त्रिपाठी, डॉ. बच्चूलाल जी अवस्थी, डॉ. रामयत्न जी शुक्ल जैसे विद्वान् आचार्यों के नाम सम्मिलित हैं। इन्होंने जबलपुर विश्वविद्यालय से संस्कृत में स्नातकोत्तर की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। विश्वविद्यालय में सर्वोच्च अंक प्राप्त करने के कारण इन्हें स्वर्ण पदक से सम्मानित किया गया। तत्पश्चात् इन्होंने रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर से डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। इन्होंने शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, बिलासपुर में 39 वर्षों तक अध्यापन कार्य किया तथा संस्कृत विभागाध्यक्ष पद को सुशोभित किया।

व्याकरणशास्त्र में नई उद्भावना: पौष्पी प्रक्रिया

किसी भी भाषा के साधु ज्ञान के लिए उस भाषा के व्याकरण को जानना अत्यन्त आवश्यक होता है। इसीलिए प्राचीन काल से ही व्याकरणाध्ययन पर अत्यधिक बल दिया जाता है-

यद्यपि बहु नाधीषे तथापि पठ पुत्र व्याकरणम्।
स्वजनः श्वजनो मा भूत् सकलं शकलं सकृच्छकृत्।।

व्याकरण को वेदपुरुष का मुख कहा गया है- **"शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्" (पा. शिक्षा)** इसी कारण व्याकरण वेदांगों में मुख्य है। महाभाष्यकार पतंजलि ने भी व्याकरण को षडङ्गों में प्रधान कहा है- **"प्रधानं च षट्स्वङ्गेषु व्याकरणम्"।**

वाक्यपदीयकार भर्तृहरि ने भी व्याकरण को वेदाङ्गों में महत्त्वपूर्ण स्वीकारा है-

आसन्नं ब्रह्मणस्तस्य तपसामुत्तमं तपः।
प्रथमं छन्दसामङ्गं प्राहुर्व्याकरणं बुधाः।। वा.प. 1/11

उनके अनुसार व्याकरण ही शब्दज्ञान का सीधा एवं सरल उपाय है। शब्दों का तत्त्वज्ञान व्याकरण से ही सम्भव है। व्याकरण भाषाओं की अशुद्धियों को दूर करने वाला तथा सभी विद्याओं का आधार है।

व्याकरण का मुख्य प्रयोजन शब्द-व्युत्पत्ति है। भर्तृहरि के अनुसार शब्दों के साधुत्व का ज्ञान कराना व्याकरण का मुख्य विषय है- **"साधुत्वज्ञानविषया सैषा व्याकरणस्मृतिः (वा.प.1/33)"** महाभाष्यकार पतंजलि ने व्याकरणाध्ययन के पाँच मुख्य प्रयोजन बताए हैं- **"रक्षोहागमलघ्वसंदेहाः प्रयोजनम्।"** लौकिक एवं वैदिक उभयविध शब्दों के साधक होने के कारण वेदों के रक्षा के उपायभूत व्याकरणशास्त्र है।

पाणिनीय व्याकरणशास्त्र संस्कृत का अद्वितीय व्याकरण है। इसमें 4000 सूत्रों में वैदिक एवं लौकिक भाषा को उत्सर्ग एवं अपवाद रीति द्वारा अनुशासित किया गया है। विश्व में पाणिनीय व्याकरण के अध्ययन की दो पद्धतियाँ प्रचलित हैं। **प्रथम पद्धति** तो पाणिनीय अष्टाध्यायी के सूत्रों के अर्थों को अष्टाध्यायी के क्रम से ही पढ़ना। इस पद्धति में यह दुरूहता है कि किसी एक प्रक्रिया को जानने के लिए सम्पूर्ण अष्टाध्यायी को जानना पड़ता है क्योंकि प्रक्रिया विशेष से सम्बन्धित सूत्र एकत्र न हो कर सम्पूर्ण अष्टाध्यायी में पठित हैं। साथ ही इसमें अनेक प्रकरणों का मिश्रण हो जाता है। अधिकार, अनुवृत्ति और सूत्रों का पूर्वापर विज्ञान अष्टाध्यायी के प्राण है। यह मार्ग काशिकावृत्ति से प्रारम्भ होकर महाभाष्य तक चलता है। द्वितीय पद्धति है **"प्रक्रिया पद्धति"** इसमें एक लक्ष्य को लेकर सूत्र उपस्थित किए जाते हैं इससे वह लक्ष्य तो सिद्ध हो जाता है परंतु सूत्र का शेष भाग अव्याख्यात ही रह जाता है। इस पद्धति का सर्वप्रामाणिक ग्रन्थ सिद्धान्तकौमुदी है। इसी क्रम को आधार को बना कर आगे शेखर आदि प्रौढ़ ग्रन्थ लिखे गए हैं। ये प्रक्रिया ग्रन्थ पहले प्रयोग को सामने रख लेते हैं। उस प्रयोग के लिए सभी सूत्र लाकर

वहाँ खड़े कर देते हैं। इससे अष्टाध्यायी की व्यवस्था भग्न होती है, वृतियाँ रटनी पड़ती हैं और 12 वर्ष तक प्रयोग बनाते रहने पर भी प्रक्रिया का विज्ञान समझ में नहीं आता। प्रो. दीक्षित ने लगभग 40 वर्षों के गहन परिश्रम से पाणिनीय अष्टाध्यायी के प्रक्रिया विज्ञान को स्पष्ट करने वाली एक सर्वथा **पौष्पी प्रक्रिया** नामक अभिनव प्रक्रिया पद्धति आविष्कृत की है जिससे अष्टाध्यायी का समग्र प्रक्रियाविज्ञान मासचतुष्टय में आत्मसात् हो जाता है। पाणिनि-परवर्ती वैयाकरणों में किसी ने अभी तक पाणिनि को इस प्रकार व्याख्यात नहीं किया है।

वस्तुतः पाणिनि का शास्त्र गणितीय विधि पर आश्रित है और पुष्पा दीक्षित ने उस गणितीय विधि का आविष्कार किया है। यह वास्तव में व्याकरण के क्षेत्र में नवीन उद्भावना है कि उन्होंने परंपरा से चले आने वाले लकारों के प्रचलित अकारादि क्रम को तोड़कर पाणिनीय विज्ञान के अनुसार उसके दो भाग कर दिए हैं और सार्वधातुक और आर्धधातुक प्रत्ययों को अलग- अलग कर दिया है। पाणिनीय धातुओं में एक भी धातु को कम किए बिना पाणिनीय धातुपाठ के सारे धातुओं को भी प्रक्रिया के क्रम पुनर्व्यवस्थित करके उन्हें प्रक्रिया से सटा दिया है। यह प्रक्रिया **पौष्पी प्रक्रिया** कहलाती है

संस्कृत भाषा के संरक्षण और संवर्धन में कार्य-

आचार्या दीक्षित **"संस्कृतस्य रक्षणेन राष्ट्रस्य रक्षणम्"** इस आदर्श वाक्य को अपने जीवन का ध्येय बना कर संस्कृत भाषा के प्रचार-प्रसार में अहर्निश समर्पित हैं। श्रीमती दीक्षित संस्कृत भाषा के संरक्षण एवं संवर्धन हेतु निम्न संस्थाओं का संचालन करती हैं-

1. **पाणिनि शोध संस्थान-** प्रो. दीक्षित द्वारा संस्कृत व्याकरण के अध्ययन, संरक्षण तथा प्रचार-प्रसार के लिए वर्ष 2000 में छत्तीसगढ़ के बिलासपुर में इस संस्था को स्थापित किया गया जो वर्ष भर व्याकरण के अध्ययन एवं अध्यापन का प्रमुख केंद्र है।
2. **कोसल संस्कृत समिति-** कोसल प्रदेश में प्रो. दीक्षित द्वारा संस्कृत भाषा तथा संस्कृति के संरक्षण तथा प्रचार-प्रसार हेतु

वर्ष 2006 में इस संस्था को स्थापित किया गया जिसका प्रमुख उद्देश्य संस्कृत-शिक्षण और अध्ययन-अध्यापन को संवर्धित करना है।

3. **वासुदेव वैदिक संस्कृत विद्यापीठ-** आचार्या ने ग्राम अड़भार, पेंड्रा, जबलपुर में स्थानीय लोगों के सहयोग से वर्ष 2002 में एक संस्कृत विद्यालय वासुदेव वैदिक संस्कृत विद्यापीठ की स्थापना की गई है। यहाँ अध्ययनरत छात्रों के निश्शुल्क आवास, भोजन तथा शिक्षा की व्यवस्था स्थानीय जन सहयोग द्वारा की जाती है। इस संस्था की संरक्षक एवं अध्यक्षा आचार्या हैं जिनके भगीरथ प्रयासों से यह संस्था सुचारु रूप से संचालित है और उत्तरोत्तर वैदिक एवं लौकिक संस्कृत की शिक्षा के क्षेत्र में सफलता के नए आयाम गढ़ रहे हैं। प्रो. दीक्षित ने वर्ष 2004 में महामाया ट्रस्ट, रतनपुर के सहयोग से एक और वैदिक विद्यालय की स्थापना की है।

पाणिनिशाला-

पाणिनीय व्याकरण के प्रक्रिया विज्ञान को सरलता एवं सुगमता से जन-जन में स्थिर करने के लिए प्रो. दीक्षित पाणिनीय शोध संस्थान, बिलासपुर, छत्तीसगढ़ में वर्ष भर पाणिनीय कार्यशाला का आयोजन करती रहती हैं। इस शाला में व्याकरण के अध्ययन हेतु देश-विदेश के छात्र तथा प्राध्यापक उपस्थित होते रहते हैं जिनके लिए यहां निश्शुल्क आवास और भोजन की व्यवस्था जन सहयोग से कौशल संस्कृत समिति द्वारा की जाती है तथा नि:शुल्क अध्यापन डॉ. पुष्पा दीक्षित द्वारा किया जाता है। इस पाणिनि कार्यशाला में भारत के अतिरिक्त अमेरिका से श्री नरेन्द्र , श्री स्वरूप देव, श्री विश्वास वासुकी, श्री सिद्धार्थ जगन्नाथ तथा अशोक जगन्नाथ, अमेरिका के चिकित्सा महाविद्यालय के छात्र ऋषभ

रेवणकर, नेपाल से दावा ल्हासा, बांग्लादेश से लुब्ना मरियम, चीन से चाऊ यान, शिकागो से वरुण खन्ना, कैलिफोर्निया से मित्तल त्रिवेदी तथा नेपाल से शताधिक छात्र इस पाणिनीय शोध संस्थान में आकर पौष्पी प्रक्रिया के माध्यम से पाणिनीय व्याकरण का आत्मसात अत्यन्त अल्पावधि में किया है।

2020 से ज़ूम के माध्यम से ऑनलाइन अध्यापन प्रारंभ किया है इसमें अलग-अलग विषयों की छः कक्षाएं चलती हैं जिसमें लगभग 500 छात्र अध्ययन करते हैं। ये कक्षाएं निश्शुल्क होती हैं।

राष्ट्र के विभिन्न राज्यों में पाणिनिशाला-

पौष्पी प्रक्रिया से पाणिनीय व्याकरण के अध्यापन हेतु उन्हें देश के विभिन्न राज्यों में भी आहूत किया जाता रहा है जिसमें छात्र तथा प्राध्यापक उपस्थित होते रहे हैं। आप 1996 से 2016 तक प्रायः सागर, जयपुर, जोधपुर, शृङ्गेरी, बेंगलुरू, हरिद्वार, दिल्ली, मैसूर इत्यादि स्थलों पर अनेक मासिक कार्यशालाओं का आयोजन कर चुकी हैं जिनसे अनेक व्याकरण के जिज्ञासु छात्र एवं प्राध्यापक लाभान्वित हुए।

प्रो. दीक्षित बलपूर्वक कहती हैं कि इस प्रक्रिया से पढ़ा हुआ दस वर्ष का बालक भी किसी भी धातु के दस लकारों में रूप सिद्ध कर सकता है। उनकी यह उद्भावना सर्वथा अपूर्व है। इससे पूर्व इस प्रकार से पाणिनीय व्याकरण का कभी भी कोई विचार नहीं किया गया। व्याकरणशास्त्र के महोदधि में साधारण से साधारण बालक भी मछली के समान तैरने लगे, यही इस पद्धति का लक्ष्य है। उन्होंने नन्हें बालकों पर इसका प्रयोग किया है। वे खेलते खेलते व्याकरणशास्त्र की प्रक्रिया को जान लेते है।

संस्कृत भाषा के प्रचार- प्रसार में सतत कार्य-

कोसल संस्कृत समिति की अध्यक्षा प्रो. पुष्पा दीक्षित संस्कृत भाषा के प्रचार प्रसार के लिए सर्वतोभावेन समर्पित हैं। समय समय

पर उनके द्वारा शासन का ध्यान संस्कृत भाषा के उन्नयन और नीति निर्धारण के विषय में आकर्षित किया जाता है। जनसाधारण में संस्कृत की रुचि बढ़ाने के लिए तथा संस्कृत भाषा के प्रति जागरूकता बढ़ाने के लिए श्रीमती दीक्षित निरंतर गीतापाठ,स्त्रोतपाठ तथा शुद्ध संस्कृत उच्चारण की शिक्षा स्थानीय लोगों को निःशुल्क देती रहती हैं। रामायण, गीता और श्रीमद्भागवत के प्रवचनों के माध्यम से भी लोगों को संस्कृत भाषा के प्रति जागरूक करती रहती हैं। उनका विश्वास है कि संस्कृत से ही भारत की पहचान है अतः संस्कृत भाषा को जन-जन तक पहुंचाना ही उनके जीवन का एकमात्र लक्ष्य रहा है। आपका अपना एक समृद्ध पुस्तकालय है जिसमें संस्कृत वाङ्मय की लगभग 10000 पुस्तकें हैं। यहां आकर शोधच्छात्र अपने विषय से संबंधित पुस्तकों का अवलोकन कर सकते हैं।

प्राप्त सम्मान एवं उपाधि-

1. **वेद-वेदाङ्ग सम्मान-** महर्षि सांदीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जयिनी द्वारा दिल्ली में आयोजित कार्यक्रम में प्रतिष्ठान के अध्यक्ष मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के माननीय मंत्री डॉ. मुरली मनोहर जोशी द्वारा दिनांक 14 अगस्त 2003 को व्याकरण विषय के लिए सम्मानित किया गया।

2. **सर्टिफिकेट ऑफ ऑनर-** भारत के महामहिम राष्ट्रपति डॉ. ए पी जे अब्दुल कलाम द्वारा 15 अगस्त 2004 में आपको संस्कृत में निपुणता तथा शास्त्र में पाण्डित्य के लिए सम्मान प्रमाणपत्र दिया गया।

3 .**राजकुमारी पटनायक सम्मान-** 14 सितंबर 2004 को प्रदेश के माननीय राज्यपाल महामना श्री पी.सी. सेठ द्वारा भाषा के

क्षेत्र में अप्रतिम योगदान के लिए राजकुमारी पटनायक सम्मान 2003 से विभूषित किया गया है।

4. **छत्तीसगढ़ राज्य अलंकरण सम्मान-** 1 नवंबर 2007 को आपको छत्तीसगढ़ राज्य शासन द्वारा छत्तीसगढ़ राज्य अलंकरण सम्मान से अलंकृत किया गया है।

5. **वाचस्पति उपाधि-** 26 दिसंबर 2010 को श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ दिल्ली द्वारा मानद उपाधि वाचस्पति प्रदान किया गया।

6. **महामहोपाध्याय उपाधि-** 24 मार्च 2011 को उत्तराखंड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार द्वारा मानद उपाधि महामहोपाध्याय प्रदान किया गया।

7. **अभिनंदन पत्र–** 11.08.2011 को राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, जयपुर परिसर, जयपुर द्वारा **अभिनन्दन पत्र** देकर सम्मानित किया गया।

8. **संस्कृतात्मा सम्मान-** 29.2.2013 को संगमनेर महाविद्यालय द्वारा संस्कृतात्मा सम्मान से सम्मानित किया गया।

9. **आचार्य रामयत्न शुक्ल सम्मान-** 5 अगस्त 2019 को उत्तर प्रदेश नागकूप शास्त्रार्थ समिति द्वारा आचार्य रामयत्न शुक्ल सम्मान से सम्मानित किया गया।

10. **पूर्ण सरस्वती सम्मान-** श्री गोकुल जन कल्याण समिति, भोपाल द्वारा वर्ष 2021 में पूर्ण सरस्वती सम्मान से इनको सम्मानित किया गया।

11. डी. लिट् की उपाधि से सम्मान- अटल बिहारी विश्वविद्यालय, बिलासपुर ने 18 मार्च 2023 को डी. लिट् की मानद उपाधि से सम्मानित किया।

12. **विद्यासागर-** मंदाकिनी-संस्कृत-विद्वत्परिषद्, नई दिल्ली द्वारा विद्यासागर की उपाधि से सम्मानित किया गया।

कृतित्व

विलक्षण प्रतिभा की धनी आचार्या दीक्षित संस्कृत की प्रख्यात विदुषी, लेखिका, कवयित्री तथा पाणिनीय व्याकरण की व्याख्याकार हैं। उन्होंने अपनी सृजनशीलता का परिचय देते हुए व्याकरण एवं साहित्य के क्षेत्र में 50 से अधिक अद्वितीय ग्रंथों की रचना एवं व्याख्या की है जिनका विवरण निम्न है

1. अष्टाध्यायीसहजबोध- प्रथम भाग- सारे सार्वधातुक तिङ् और सार्वधातुक कृत् प्रत्यय
2. अष्टाध्यायीसहजबोध- द्वितीय भाग- सारे आर्धधातुक लकार, सनाद्यन्त धातु और नामधातु
3. अष्टाध्यायीसहजबोध- तृतीय भाग- आर्धधातुक कृत्
4. अष्टाध्यायीसहजबोध- चतुर्थ भाग- पाणिनीय क्रम से सुबन्त प्रक्रिया
5. अष्टाध्यायीसहजबोध- पंचम भाग- पाणिनीय क्रम से तद्धिताधिकारों का विवेचन
6. अष्टाध्यायीसहजबोध- षष्ठ भाग- कारक
7. अष्टाध्यायीसहजबोध- सप्तम भाग- समास प्रक्रिया
8. अष्टाध्यायीसहजबोध- अष्टम भाग- स्वर-प्रक्रिया
9. अष्टाध्यायीसहजबोध- नवम भाग- शास्त्रशेष तथा समग्र सन्धि

मूलग्रन्थ (संस्कृतभाषा):-

10 नव्यसिद्धान्तकौमुदी- प्रथमभाग- सारे सार्वधातुक तिङ् और सार्वधातुक कृत् प्रत्यय

11 नव्यसिद्धान्तकौमुदी- द्वितीयभाग- सारे आर्धधातुक लकार, सनाद्यन्त धातु और नामधातु

12 नव्यसिद्धान्तकौमुदी- तृतीय भाग- आर्धधातुक कृत्

13 नव्यसिद्धान्तकौमुदी- चतुर्थ भाग- पाणिनीय क्रम से सुबन्त प्रक्रिया

14 नव्यसिद्धान्तकौमुदी- पंचम भाग- पाणिनीय क्रम से तद्धिताधिकारों का विवेचन

15 नव्यसिद्धान्तकौमुदी- षष्ठ भाग- कारक

16 नव्यसिद्धान्तकौमुदी- सप्तम भाग- समास-प्रक्रिया

17 नव्यसिद्धान्तकौमुदी- अष्टम भाग- स्वर-प्रक्रिया

18 नव्यसिद्धान्तकौमुदी- नवम भाग- शास्त्रशेष तथा समग्र सन्धि

व्याकरणग्रन्थ और धातुपाठ:-

19 इडागमः

20 आर्धधातुक प्रत्ययों की इडागम व्यवस्था

21 शीघ्रबोधव्याकरणम्

22 पाणिनीयधातुपाठः(सार्थः)

23 प्रक्रियानुसारिपाणिनीयधातुपाठः

24 वैदिकव्याकरणम्

25 पाणिनीयाष्टाध्यायीसूत्रपाठः(प्रकरणनिर्देशसमन्वितः)

26 सनाद्यन्तधातुपाठः

27 सस्वरः पाणिनीयधातुपाठः(सार्वधातुकप्रक्रियोपयोगी)

28 सस्वरः पाणिनीयधातुपाठः(आर्धधातुकप्रक्रियोपयोगी)

29 धात्वधिकारीयमङ्गकार्यम्

कोषग्रन्थ:-

30 तिङन्तकोषः(प्रथमो भागः)

31 तिङन्तकोषः(द्वितीयो भागः)

32 तिङन्तकोषः(तृतीयो भागः)

33 कृदन्तकोषः(प्रथमो भागः)

34 कृदन्तकोषः(द्वितीयो भागः)

35 तिङ्कृत्कोषः(प्रथमो भागः)

36 तिङ्कृत्कोषः(द्वितीयो भागः)

37 लकारसरणिः(चत्वारो भागाः)

38 णिजन्तकोषः

39 सन्नन्तकोषः

40 यङन्तकोषः

41 यङ्लुङन्तकोषः

काव्यग्रन्थ:-

42 **अग्निशिखा(गीतिकाव्यम्)-** वर्ष 1984 में इसका प्रणयन एवं प्रकाशन। इस गीतिकाव्य में एक ही रस विप्रलम्भ शृङ्गार पर आश्रित 50 सर्वथा छन्दोबद्ध तथा रसाभिभूत कर देने वाले भारत के मूर्धन्य संस्कृत विद्वानों के प्रशंसित गीत हैं। जिसमें सारे गीत एक ही रस पर आश्रित हों,ऐसा यह प्रथम संस्कृत गीतिकाव्य है।

43 **शाम्भवी(गीतिकाव्यम्)-** यह भी संस्कृत गीतिकाव्य है। इसके गीतों में वर्तमान सामाजिक विसंगतियों पर तीक्ष्ण अधिक्षेप है। मध्यप्रदेश संस्कृत अकादमी की पत्रिका दूर्वा में इसके अनेक गीत प्रकाशित हैं।

44 **अपराजितवधूः(महाकाव्य)-** डॉ. पूर्णचन्द्र शास्त्री द्वारा रचित "अपराजितवधूः" संस्कृत महाकाव्य का सम्पादन और अनुवाद।

45 **प्रबुद्धभारतम्-** डॉ. पूर्णचन्द्र शास्त्री द्वारा रचित "प्रबुद्धभारतम्" संस्कृत महाकाव्य का सम्पादन और अनुवाद।

46 **सौन्दर्यलहरी-** आचार्य बच्चूलाल अवस्थी कृत "सौन्दर्यलहरी" महाकाव्य का सम्पादन एवं अनुवाद।

प्रकाश्यमानग्रंथ:-

1. भगवतः पाणिनेः सप्तविभागाष्टाध्यायी
2. पौष्पी नव्यसिद्धान्तकौमुदी के अवशिष्ट भाग।
3. परिभाषेन्दुशेखर- इस ग्रन्थ की बहुतर परिभाषाओं की अन्यथासिद्धि। इसमें परिभाषेन्दुशेखर की 57 परिभाषाओं की अन्यथासिद्धि करके उनके बिना सभी कार्यसिद्धि करने की विधि प्रदर्शित करके शास्त्रप्रक्रिया को लाघव प्रदान किया है।

मल्टीमीडिया निर्माण:-

वैदिक व्याकरणम्- ई. पीजी पाठशाला हेतु श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ,दिल्ली के लिए निर्मित 8 एपिसोड।

तिङन्तसिद्धि- संस्कृत भारती द्वारा 46 घंटे की डीवीडी का निर्माण कराया गया है। इससे पाणिनीय पद्धति से सभी धातुओं के दस लकार सिद्ध हो जाते हैं।

अष्टाध्यायी की अध्ययन पद्धति- उच्च शिक्षा अनुदान आयोग द्वारा ज्ञानदर्शन में प्रसारण हेतु निर्मित 72 एपिसोड।

तिङन्तप्रक्रिया- उच्च शिक्षा अनुदान आयोग द्वारा ज्ञानदर्शन में प्रसारण हेतु निर्मित 78 एपिसोड।

काशी पाण्डित्य परियोजना- आचार्य वशिष्ठ त्रिपाठी- दर्शनशास्त्र हेतु निर्मित 09 डीवीडी।

काशी पाण्डित्य परियोजना- आचार्य रामयत्न शुक्ल- व्याकरणशास्त्र हेतु निर्मित 08 एपिसोड।

निष्कर्ष:-

इस प्रकार से कहा जा सकता है कि श्रीमती दीक्षित आधुनिक संस्कृत वाङ्मय को अपनी रचनाओं से चमत्कृत करने वाले रचनाकारों में सुप्रसिद्ध नाम है। आचार्या संस्कृत की प्रकाण्ड विदुषी, लेखिका, कवयित्री और पाणिनीय व्याकरणशास्त्र की व्याख्यात्री हैं।

वे संस्कृतभाषा के संरक्षण और संवर्धन के लिए सर्वतोभावेन समर्पित हैं। उनका दृढ़ विश्वास है कि भारत की प्रतिष्ठा संस्कृत और संस्कृति इन दोनों में ही निहित है। संस्कृत को जाने बिना भारतीय संस्कृति को जाना नहीं जा सकता। संस्कृत भाषा के प्रचा-प्रसार के लिए श्रीमती दीक्षित विभिन्न संस्थाओं का संचालन करती हैं और उनमें निश्शुल्क संस्कृत का अध्यापन करती हैं। व्याकरण की मूर्धन्य विदुषी हैं। उनका नाम आधुनिक संस्कृत वैयाकरणों में अग्रगण्य हैं। आचार्या ने पाणिनीय व्याकरण के प्रक्रिया विज्ञान को जानने के लिए **पौष्पी प्रक्रिया** नामक अभिनव पद्धति आविष्कृत की है। यह व्याकरण के अध्येताओं के लिए पाणिनीय प्रक्रिया विज्ञान को जानने एवं अल्पावधि में उसे आत्मसात् करने के लिए अत्यन्त सरल एवं सुगम पद्धति है। इस पद्धति से बालक भी अत्यन्त अल्प समय में पाणिनीय व्याकरणशास्त्र में पारंगत हो सकता है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची:-

1. eGyanKosh: इकाई-15 रमाकान्त शुक्ल, डॉ. पुष्पा दीक्षित, प्रो. राधावल्लभ ...

2. https://pushpadikshit.com/

3. मीमांसक, युधिष्ठिर- संस्कृत व्याकरणशास्त्र का इतिहास(1-3 भाग), रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़, 1971

4. अष्टाध्यायी- पाणिनि, संपादक- विद्यावारिधि, विजयपाल, रामलाल कपूर ट्रस्ट

5. वाक्यपदीयम्- भर्तृहरि, सम्पादक – अय्यर, के. एस., डेक्कन कॉलेज, पुणे, 1986

6. महाभाष्यम्- पतंजलि, सम्पादक- मीमांसक, वेदव्रत, हरियाणा साहित्य संस्थान, गुरुकुल झज्जर, हरियाणा, 1964

7. पाणिनीय शिक्षा- सम्पादक- घोष, मनमोहन, कलकत्ता

डॉ. बालाजी तांबे: व्यक्तित्व और कृतित्व

शुभम राय, संस्कृत विभाग, सी. यु. शाह आर्ट्स कॉलेज
गुजरात यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद

डॉ. बालाजी तांबे का व्यक्तित्व और कृतित्व अत्यंत प्रभावशाली और प्रेरणादायक था। वह न केवल एक कुशल आयुर्वेदाचार्य थे, बल्कि एक योग गुरु, लेखक, और आध्यात्मिक मार्गदर्शक भी थे। उनका जीवन और कार्य भारतीय परंपराओं और आयुर्वेद के प्रति उनकी अटूट निष्ठा को दर्शाता है। डॉ. बालाजी तांबे का जन्म 4 फरवरी 1940 को एक मराठी परिवार में श्री वासुदेव तांबे शास्त्री और श्रीमती लक्ष्मी बाई वासुदेव तांबे के घर में हुआ था। बालाजी तांबे की मां लक्ष्मीबाई वासुदेव तांबे एक आध्यात्मिक महिला थी। उनके घर का माहौल वेद, उपनिषद, पुराण, मंत्र और अन्य आध्यात्मिक पुस्तको के अध्ययन के लिए बहुत अनुकूल था। पांच साल की उम्र में उन्होंने औपचारिक स्कूली शिक्षा के साथ-साथ औपचारिक आध्यात्मिक शिक्षा भी शुरू की और इंजीनियरिंग और आयुर्वेद दोनों में डिग्री हासिल की। अपने माता-पिता के आशीर्वाद और सद्गुरु श्री दत्तात्रेय की कृपा से उन्होंने भौतिक, दृश्य और तर्कसंगत, के साथ ही सूक्ष्म और सर्वज्ञ दोनों का अध्ययन किया था, इसके साथ ही उन्होंने भारतीय परंपराओं, आयुर्वेद, योग, ज्योतिष और संगीत का अध्ययन और शोध किया। जीवन को संतुलन में लाने के लिए उन्होंने आत्मसंतुलन जीवन पद्धति की स्थापना की, जिसका उद्देश्य केवल बीमारी को ठीक करना नहीं है, बल्कि स्वास्थ्य को

बढ़ाना और जीवन के प्रति व्यक्ति के संपूर्ण दृष्टिकोण को बढ़ाना है। सन् 1982 में उन्होंने वैदिक जीवन शैली के आधार पर गुरुकुल की स्थापना की।

डॉ. तांबे एक प्रसिद्ध आयुर्वेदाचार्य लेखक, और संगीतकार थे, जिन्होंने आयुर्वेद, योग और भारतीय परंपराओं के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनके कार्य और शिक्षाएँ आज भी लोगों के स्वास्थ्य और जीवनशैली को सकारात्मक रूप से प्रभावित कर रही हैं। आयुर्वेदाचार्य तांबे ने आयुर्वेदिक चिकित्सा और आयुर्वेदिक फिजियोथेरेपी पर शोध किया। बालाजी तांबे ने आयुर्वेदिक चिकित्सा और उपचार के क्षेत्र में विशेष ज्ञान और अनुभव प्राप्त किया था। उन्होंने अनेक आयुर्वेदिक उपचारों और औषधियों को प्रचलित किया, जिससे लोगों के स्वास्थ्य को लाभ हुआ। डॉ. तांबे ने 'आत्मसंतुलन' नामक एक आयुर्वेदिक उपचार केंद्र की स्थापना की, जहां लोग आयुर्वेदिक उपचार, योग, और ध्यान की मदद से अपने स्वास्थ्य को सुधार सकते थे। यह केंद्र महाराष्ट्र के लोनावला में स्थित है। वह न केवल आयुर्वेद के क्षेत्र के विशेषज्ञ थे बल्कि एक आध्यात्मिक गुरु भी थे। उन्होंने एक आयुर्वेदिक डॉक्टर के रूप में विशेष रूप से हृदय रोग, मधुमेह, रक्तचाप और अन्य पुरानी बीमारियों के इलाज के लिए दुनिया भर में प्रसिद्धि हासिल की । तांबे के शब्दो मे - **"आयुर्वेद केवल चिकित्सा का एक रूप नहीं है, बल्कि जीवन जीने का एक तरीका और स्वस्थ शरीर, स्वस्थ मन और आत्मा का मार्ग है"**। जर्मनी और भारत में उनके केंद्र एकमात्र स्थान हैं जहां पारंपरिक, आयुर्वेदिक पंचकर्म उपचार अभी भी पेश किए जाते हैं। तांबे ने बीमारी विकसित होने से पहले शरीर में असंतुलन

का पता लगाने के लिए नाड़ी पदनामों का उपयोग करने की अभूतपूर्व क्षमता विकसित की थी। उन्होंने अपना अधिकांश जीवन आयुर्वेद और आध्यात्मिक चिकित्सा के प्रति समर्पित किया।

व्यक्तित्व:-

आध्यात्मिक और चिकित्सकीय दृष्टिकोण: बालाजी तांबे का व्यक्तित्व गहन आध्यात्मिकता और चिकित्सकीय ज्ञान का अद्भुत संगम था। वे मानते थे कि स्वस्थ जीवन के लिए शरीर, मन, और आत्मा का संतुलन आवश्यक है।

सहज और स्नेही स्वभाव: उनका स्वभाव सहज और स्नेही था, जिससे लोग उनसे आसानी से जुड़ जाते थे। वह अपने मरीजों और अनुयायियों के साथ व्यक्तिगत संबंध बनाते थे, जिससे उनकी चिकित्सा और सलाह अधिक प्रभावी होती थी।

उत्कृष्ट शिक्षक: बालाजी तांबे एक उत्कृष्ट शिक्षक थे। वह जटिल आयुर्वेदिक सिद्धांतों को सरल भाषा में समझाने में माहिर थे, जिससे लोग आसानी से उनका पालन कर सकते थे।

व्यक्तिगत जीवन और विरासत: बालाजी तांबे ने अपने जीवनकाल में कई पुरस्कार और सम्मान प्राप्त किए। उनका कार्य और योगदान आज भी अनेक लोगों को प्रेरित करता है। उन्होंने आयुर्वेद को आधुनिक समय में प्रासंगिक बनाने के लिए बहुत मेहनत की और अपने ज्ञान को साझा करके समाज की सेवा की।

81 साल की उम्र में पुणे के एक निजी अस्पताल में उनका निधन हो गया[1]।

कृतित्व:-

आयुर्वेदिक अनुसंधान और चिकित्सा: बालाजी तांबे ने आयुर्वेदिक चिकित्सा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण अनुसंधान किए और कई नये उपचार विधियों और औषधियों का विकास किया। उनकी विधियाँ और औषधियाँ आज भी अनेक लोगों के जीवन में सुधार ला रही हैं।

आत्मसंतुलन चिकित्सा केंद्र: उन्होंने 'आत्मसंतुलन' चिकित्सा केंद्र की स्थापना की, जो आयुर्वेदिक चिकित्सा, योग, और ध्यान के माध्यम से शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य सुधारने में सहायक है।

प्रमुख पुस्तकें:-

डॉ. बालाजी तांबे ने कई महत्वपूर्ण रचनाएँ की हैं जो आयुर्वेद, योग, भारतीय परंपराओं और स्वस्थ जीवनशैली पर आधारित हैं। उनकी कुछ प्रमुख पुस्तकों में आयुर्वेदिक गर्भसंस्कार, महिलाओं की सेहत, श्री गीता योग, आत्मरामायण, आयुर्वेदिक घरेलू उपचार, स्वास्थ्य मंत्र और जीवन का मंत्र शामिल हैं। इन पुस्तकों ने अनेक लोगों को स्वस्थ जीवनशैली अपनाने में मदद की है। उनकी रचनाएँ आयुर्वेदिक ज्ञान को सरल और सुलभ तरीके से प्रस्तुत करती हैं, जिससे लोग अपने जीवन में स्वास्थ्य और संतुलन प्राप्त कर सकें। उनकी कुछ प्रमुख रचनाएँ निम्न लिखित हैं:

आयुर्वेदिक गर्भसंस्कार: यह पुस्तक गर्भावस्था के दौरान आयुर्वेदिक देखभाल पर आधारित है। इसमें गर्भवती महिलाओं के लिए आहार, जीवनशैली, और ध्यान के महत्व को विस्तार से

समझाया गया है। यह पुस्तक गर्भधारण से लेकर बच्चे के जन्म तक की सम्पूर्ण जानकारी प्रदान करती है।

आयुर्वेदा फ़ार वोमेन: यह पुस्तक विशेष रूप से महिलाओं के स्वास्थ्य और उनके जीवन के विभिन्न चरणों के लिए आयुर्वेदिक देखभाल पर केंद्रित है। इसमें मासिक धर्म, गर्भावस्था, प्रसव और रजोनिवृत्ति के लिए आयुर्वेदिक उपचार और सलाह दी गई है।

बेस्ट ओफ़् बाला जी तांबे: इस पुस्तक में डॉ. तांबे के आयुर्वेदिक ज्ञान और उनके द्वारा दी गई विभिन्न परामर्श का संग्रह है। यह पुस्तक एक समग्र मार्गदर्शिका है जो आयुर्वेदिक जीवनशैली अपनाने में सहायक है।

आयुर्वेदिक घरेलू उपचार: इस पुस्तक में विभिन्न रोगों के लिए आयुर्वेदिक घरेलू उपचारों की जानकारी दी गई है। यह सरल और प्रभावी उपायों का संग्रह है जो घर पर ही आसानी से अपनाए जा सकते हैं।

अन्य रचनाएँ और योगदान:-

लेख और आलेख: उन्होंने आयुर्वेद और स्वस्थ जीवनशैली पर कई लेख और आलेख लिखे हैं, जो विभिन्न पत्रिकाओं और जर्नल्स में प्रकाशित हुए हैं।

रेडियो और टीवी कार्यक्रम: बालाजी तांबे ने आयुर्वेद और स्वस्थ जीवनशैली के प्रचार-प्रसार के लिए रेडियो और टीवी कार्यक्रमों में भी भाग लिया। उनके कार्यक्रमों ने लाखों लोगों को आयुर्वेद के महत्व और लाभ के बारे में जागरूक किया।

संगीत एल्बम: बालाजी तांबे ने संगीत को भी चिकित्सा के रूप में उपयोग किया। ये एल्बम आयुर्वेदिक चिकित्सा केंद्रों में उपचार के दौरान उपयोग किए जाते हैं। उन्होंने कई भजन और ध्यान संगीत एल्बम तैयार किए, जो शांति और आध्यात्मिकता का अनुभव प्रदान करते हैं।

आयुर्वेदिक चिकित्सा: बालाजी तांबे ने आयुर्वेदिक चिकित्सा और उपचार के क्षेत्र में विशेष ज्ञान और अनुभव प्राप्त किया था। उन्होंने अनेक आयुर्वेदिक उपचारों और औषधियों को प्रचलित किया, जिससे लोगों के स्वास्थ्य को लाभ हुआ।

पुरस्कार:-

- आयुर्वेद के प्रसार के लिए रोटरी क्लब ऑफ पुणे अपटाउन और रोटरी डिस्ट्रिक्ट 3131 द्वारा 'रोटरी ग्लोबल लीडरशिप एक्सीलेंस' अवार्ड (2014)[2]।
- डी.वाई. पाटिल विश्वविद्यालय द्वारा डी.लिट. यह मानद उपाधि (जनवरी 2017)
- मरणोपरांत पद्म श्री पुरस्कार (26 जनवरी 2022)[3]
- तथागत आयुर्वेद रिसर्च फाउंडेशन द्वारा आयुर्वेद भूषण पुरस्कार (2006)[4]
- आयुर्वेद उपचार केंद्रों के मानकीकरण के लिए समिति के सदस्य, महाराष्ट्र सरकार (2007)[5]

बाला जी तांबे का सामाजिक योगदान:-

डॉ. बालाजी तांबे का सामाजिक योगदान अत्यंत व्यापक और प्रभावशाली रहा है। उन्होंने आयुर्वेद, योग और भारतीय परंपराओं के माध्यम से समाज के विभिन्न वर्गों में स्वास्थ्य कल्याण

का प्रसार किया। उन्होंने आयुर्वेद के ज्ञान को जन-जन तक पहुँचाने के लिए विभिन्न पाठ्यक्रमों और कार्यशालाओं का आयोजन किया। उनके द्वारा आयोजित कार्यक्रमों ने लोगों को आयुर्वेदिक जीवनशैली अपनाने के लिए प्रेरित किया। डॉ. तांबे ने विभिन्न रेडियो और टीवी कार्यक्रमों में भाग लिया, जहाँ उन्होंने आयुर्वेदिक चिकित्सा और स्वस्थ जीवनशैली के बारे में जानकारी साझा की। इन कार्यक्रमों ने लाखों लोगों को स्वस्थ जीवन जीने की प्रेरणा दी है । उन्होंने आयुर्वेद और स्वास्थ्य पर आधारित कई लेख और आलेख लिखे, जो विभिन्न पत्रिकाओं और जर्नल्स में प्रकाशित हुए। ये लेख लोगों के लिए आयुर्वेदिक ज्ञान का महत्वपूर्ण स्रोत है। डॉ. तांबे ने ' आयुर्वेदिक गर्भ संस्कार' पुस्तक लिखी, जो गर्भवती महिलाओं के लिए आयुर्वेदिक देखभाल पर आधारित है। इस पुस्तक ने गर्भवती महिलाओं और उनके परिवारों को गर्भधारण से लेकर बच्चे के जन्म तक की सम्पूर्ण जानकारी प्रदान करती है। उनकी पुस्तक ' आयुर्वेदा फ़ार वोमेन ' ने महिलाओं के विभिन्न जीवन चरणों के लिए स्वास्थ्य और आयुर्वेदिक देखभाल पर महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करती है। उन्होंने अपने विचारों और कार्यों के माध्यम से समाज में स्वास्थ्य और कल्याण के प्रति जागरूकता बढ़ाने का निरंतर प्रयास किया। उनकी शिक्षा ने लोगों को प्राकृतिक और स्वस्थ जीवनशैली अपनाने के लिए प्रेरित करती है।

संगीत और आध्यात्मिकता में योगदान:-

ध्यान और भजन: डॉ. तांबे ने कई ध्यान और भजन एल्बम तैयार किए, जो शांति और आध्यात्मिकता का अनुभव प्रदान करते हैं। ये एल्बम आयुर्वेदिक चिकित्सा केंद्रों में भी उपयोग किए जाते हैं,

जिससे मरीजों को मानसिक शांति और सुखद अनुभव मिलता है। डॉ. बालाजी तांबे ने संगीत और आध्यात्मिकता के माध्यम से भी समाज में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उनका मानना था कि संगीत और आध्यात्मिकता न केवल मानसिक शांति और संतुलन लाती है, बल्कि आयुर्वेदिक चिकित्सा को भी प्रभावी बनाती है। उन्होंने इस दृष्टिकोण को अपने कार्यों में शामिल किया और संगीत के माध्यम से लोगों को शांति और संतुलन का अनुभव प्रदान किया।डॉ. बालाजी तांबे ने संगीत और भजनों के माध्यम से भी समाज में गहरा प्रभाव डाला है। उन्होंने कई भजन और ध्यान संगीत एल्बम तैयार किए हैं जो शांति, ध्यान और आध्यात्मिकता को बढ़ावा देने के लिए उपयोग किए जाते हैं। उनके कुछ प्रसिद्ध गीत और भजनों में गहरे आध्यात्मिक और उपचारात्मक गुण होते हैं। उनके कुछ प्रमुख गीत और भजन निम्न लिखित है:

प्रमुख भजन और गीत:-

- **" संतुलन भजन " सीरीज:** डॉ. बालाजी तांबे ने " संतुलन भजन " नामक भजनों की एक श्रृंखला तैयार की है, जिसमें पारंपरिक भजनों को उनके विशेष संगीत शैली में प्रस्तुत किया गया है। इन भजनों का उद्देश्य शांति, भक्ति और मानसिक संतुलन प्राप्त करना है।
- **" नमः "एल्बम:** “नमः” एल्बम में विभिन्न मंत्रों और भजनों का संग्रह है, जो विशेष रूप से ध्यान और योग सत्रों के लिए उपयोगी हैं। इन मंत्रों का गायन मन को शांत करता है और ध्यान में गहराई लाने में मदद करता है।

- **" ओंकार " एल्बम:"** ओंकार " एल्बम में ॐ (ओम) का जाप और इससे संबंधित भजनों का संग्रह है। ओम के जाप से मन को शांति और संतुलन मिलता है। यह एल्बम ध्यान और प्राणायाम सत्रों के लिए अत्यंत उपयोगी है।
- **"आत्मसंतुलन भजन":** इस एल्बम में डॉ. तांबे ने अपने कुछ प्रमुख भजनों को संकलित किया है, जो आत्मिक संतुलन और मानसिक शांति के लिए गाए जाते हैं। इन भजनों का नियमित श्रवण ध्यान और योग अभ्यास के दौरान लाभकारी होता है।

प्रसिद्ध भजनों के उदाहरण:-

- **"श्री गणेशाय धीमहि":** यह भजन भगवान गणेश को समर्पित है और इसकी धुन और शब्द मानसिक शांति और ध्यान के लिए उपयुक्त हैं।
- **"ॐ नमो भगवते वाशुदेवाय":** यह भजन भगवान विष्णु को समर्पित है और इसे सुनकर ध्यान और भक्ति की भावना बढ़ती है।
- **" गायत्री मन्त्र ":** गायत्री मंत्र एक प्रसिद्ध वैदिक मंत्र है और डॉ. तांबे के संस्करण में इसे विशेष संगीतबद्ध किया गया है, जिससे इसका प्रभाव और बढ़ जाता है।
- **"महामृत्युञ्जय मन्त्र":** यह मंत्र भगवान शिव को समर्पित है और इसे सुनकर मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य में सुधार हो सकता है।
- **ध्यान संगीत:** डॉ. तांबे ने कई ध्यान संगीत एल्बम तैयार किए, जो लोगों को ध्यान और मानसिक शांति में मदद

करते हैं। ये एल्बम खासतौर पर ध्यान सत्रों और आयुर्वेदिक चिकित्सा केंद्रों में उपयोग किए जाते हैं।उन्होंने भक्ति संगीत और भजनों के कई एल्बम भी तैयार किए। इन भजनों का उद्देश्य भक्तों को आध्यात्मिक अनुभव प्रदान करना और उनकी आंतरिक शांति को बढ़ाना था। उनके भजनों में भारतीय शास्त्रीय संगीत का विशेष प्रयोग किया गया है, जिससे एक विशेष आध्यात्मिक माहौल बनता है।

संगीत के चिकित्सीय लाभ:-

राग चिकित्सा: डॉ. तांबे ने राग चिकित्सा के सिद्धांतों को अपने चिकित्सा पद्धति में शामिल किया। राग चिकित्सा में विभिन्न रागों का उपयोग मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य सुधार के लिए किया जाता है। यह विधि विशेषकर तनाव, चिंता और मानसिक विकारों के इलाज में सहायक होती है। उन्होंने यह भी बताया कि संगीत का सीधा प्रभाव मन और शरीर पर पड़ता है। सही संगीत सुनने से न केवल मन को शांति मिलती है, बल्कि शरीर की ऊर्जा का संतुलन भी बना रहता है।

योग और ध्यान कार्यशालाएं: डॉ. तांबे ने विभिन्न योग और ध्यान कार्यशालाओं का आयोजन किया, जहां उन्होंने संगीत और आध्यात्मिकता का महत्व बताया। इन कार्यशालाओं में प्रतिभागियों को योग, प्राणायाम, और ध्यान के साथ संगीत का उपयोग करना सिखाया गया।

आध्यात्मिक उपदेश: उन्होंने कई आध्यात्मिक सत्रों और उपदेशों का आयोजन किया, जिसमें उन्होंने आयुर्वेद, योग और

संगीत के माध्यम से आत्म-साक्षात्कार और आंतरिक शांति प्राप्त करने के तरीकों पर प्रकाश डाला।

आध्यात्मिक दृष्टिकोण: डॉ. तांबे का मानना था कि वास्तविक स्वास्थ्य केवल शारीरिक स्वास्थ्य तक सीमित नहीं है, बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक संतुलन भी उतना ही महत्वपूर्ण है। वे कहते थे कि संगीत और ध्यान मानसिक शांति और आत्म-चेतना को बढ़ावा देते हैं, जिससे संपूर्ण स्वास्थ्य में सुधार होता है।

निष्कर्ष:-

डॉ. बालाजी तांबे की रचनाएँ और योगदान आयुर्वेद के क्षेत्र में अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। उनकी पुस्तकों और अन्य रचनाओं ने आयुर्वेदिक ज्ञान को जन-जन तक पहुँचाया और लोगों को स्वस्थ और संतुलित जीवन जीने की प्रेरणा दी। उनकी रचनाएँ आज भी लोगों के लिए मार्गदर्शिका का काम कर रही हैं और आयुर्वेदिक चिकित्सा के प्रति जागरूकता बढ़ा रही हैं। डॉ. बालाजी तांबे का जीवन और कार्य हमें यह सिखाता है कि आयुर्वेद और योग के माध्यम से स्वस्थ और संतुलित जीवन जीया जा सकता है। डॉ. बालाजी तांबे का सामाजिक योगदान उनकी आयुर्वेदिक चिकित्सा, शिक्षा, और स्वास्थ्य जागरूकता के माध्यम से समाज को स्वस्थ और संतुलित जीवन जीने की दिशा में प्रेरित करता है। उनके कार्यों ने न केवल व्यक्तिगत स्वास्थ्य सुधार में बल्कि समुदाय के समग्र कल्याण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। डॉ. बालाजी तांबे ने संगीत और आध्यात्मिकता के माध्यम से समाज में एक नई दिशा प्रदान की। उनके भजन और गीत उनके संगीत और आध्यात्मिक दृष्टिकोण का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। उनके द्वारा तैयार किए गए ध्यान संगीत और भजन एल्बम, योग

और ध्यान कार्यशालाएं, और आध्यात्मिक उपदेश लोगों को मानसिक शांति, संतुलन और स्वास्थ्य प्राप्त करने में मदद करते हैं। उनके भजनों और ध्यान संगीत ने न केवल आयुर्वेदिक चिकित्सा के क्षेत्र में बल्कि आम जनजीवन में भी शांति और संतुलन लाने का कार्य किया है। उनकी रचनाएँ आज भी ध्यान, योग और भक्ति के लिए अत्यंत उपयोगी मानी जाती हैं और उनके अनुयायियों और संगीत प्रेमियों के बीच लोकप्रिय हैं।

संदर्भ-ग्रन्थ-सूची:-

1) https://www.loksatta.com/maharashtra/balaji-tambe-passed-away-in-pune-sgy-87-2558686/
2) https://mr.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%AC%E0%A4%BE%E0%A4%B2%E0%A4%BE%E0%A4%9C%E0%A5%80_%E0%A4%A4%E0%A4%BE%E0%A4%82%E0%A4%AC%E0%A5%87#
3) https://www.esakal.com/desh/shri-guru-late-balaji-tambe-awarded-with-padmashri-aau85
4) http://www.balajitambe.com/index.php/2015-09-03-17-10-29/awards
5) http://www.balajitambe.com/index.php/2015-09-03-17-10-29/awards

भारत के विशिष्ट योगी

Vishal Goswami , Dr. C.V. Baldha
Department of Sanskrit, Saurashtra University

सारांश:

योग, जिसे आत्मा और शरीर के बीच सामंजस्य स्थापित करने की प्राचीन कला के रूप में जाना जाता है, भारत की एक महत्वपूर्ण विरासत है। इस परंपरा के विभिन्न कालखंडों में कई महान योगियों ने जन्म लिया, जिन्होंने न केवल अपने आत्मज्ञान के मार्ग को प्रकाशित किया बल्कि अनगिनत व्यक्तियों को भी योग के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया।

भारत के विशिष्ट योगियों में महर्षि पतंजलि का नाम सर्वोपरि है, जिन्होंने योगसूत्र की रचना की और योग के सिद्धांतों को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत किया। इसके अलावा, आदि शंकराचार्य ने अद्वैत वेदांत के सिद्धांतों के माध्यम से योग को एक नया आयाम दिया।

स्वामी विवेकानंद, जिन्होंने योग को पश्चिमी दुनिया में प्रचलित किया, और परमहंस योगानंद, जिन्होंने क्रिया योग को लोकप्रिय बनाया, भी महान योगियों की सूची में प्रमुख स्थान रखते हैं। आधुनिक काल में, बी.के.एस. अयंगर, जिन्होंने अयंगर योग को विकसित किया, और श्री श्री रविशंकर जिन्होंने आर्ट ऑफ लिविंग के माध्यम से योग और ध्यान को जन-जन तक पहुँचाया, भी अत्यंत महत्वपूर्ण योगी माने जाते हैं।

ये योगी न केवल शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए योग के लाभों को जन-जन तक पहुँचाने में सफल रहे, बल्कि उन्होंने आंतरिक शांति, ध्यान और आत्मज्ञान के मार्ग को भी सरल और

सुलभ बनाया। इन महान योगियों के योगदान ने न केवल भारतीय समाज को समृद्ध किया है, बल्कि पूरी दुनिया को भी एक नई दिशा दी है।

योग का यह अद्वितीय सफर आज भी निरंतर जारी है, और भारत के विशिष्ट योगियों के मार्गदर्शन में यह यात्रा भविष्य में भी अनगिनत जीवनों को सकारात्मक दिशा प्रदान करती रहेगी।

परिचय:

योग भारतीय संस्कृति और आध्यात्मिकता का अभिन्न अंग है। यह केवल एक शारीरिक अभ्यास नहीं, बल्कि आत्मा, मन और शरीर के संतुलन का मार्ग है। योग का उल्लेख प्राचीन वेदों, उपनिषदों और भगवद्गीता में मिलता है। इसे आत्मज्ञान और मोक्ष प्राप्ति का साधन माना गया है।

योग शब्द का अर्थ है 'जुड़ना' या 'एकत्व'। यह आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़ने का माध्यम है। भारत में योग का इतिहास हजारों वर्षों पुराना है और इसे ऋषियों और मुनियों ने विकसित किया। योग का उद्देश्य न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को सुधारना है, बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक विकास करना भी है।

आधुनिक युग में योग केवल भारतीय सीमाओं तक सीमित नहीं रहा। भारतीय योगियों ने इसे विश्व के कोने-कोने तक पहुँचाया। पतंजलि ने योग को एक व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत किया, स्वामी विवेकानंद ने इसे पश्चिमी देशों में लोकप्रिय बनाया, और आधुनिक योग गुरुओं ने इसे विज्ञान और आध्यात्मिकता का संगम बताया। यह शोध पत्र इन पहलुओं का गहराई से अध्ययन करता है।

मुख्य योगी और उनका योगदान:

1. **महर्षि पतंजलि:**

- महर्षि पतंजलि को योगसूत्र के रचयिता और 'योग के पिता' के रूप में जाना जाता है।
- उनका सबसे महत्वपूर्ण योगदान "योगसूत्र" है, जिसमें योग के सिद्धांत और व्यावहारिक पहलुओं का विस्तृत वर्णन किया गया है।
- उन्होंने योग को अष्टांग योग के रूप में विभाजित किया, जिसमें आठ चरण शामिल हैं:

1. **यम:** नैतिक अनुशासन, जिसमें सत्य, अहिंसा, अस्तेय (चोरी न करना), ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह (संपत्ति का लोभ न करना) शामिल हैं।
2. **नियम:** आत्म-अनुशासन, जिसमें शौच (शुद्धता), संतोष, तप, स्वाध्याय (अध्ययन), और ईश्वर प्राणिधान (समर्पण) आते हैं।
3. **आसन:** शारीरिक मुद्राएँ, जो शरीर को स्थिर और स्वस्थ बनाती हैं।
4. **प्राणायाम:** श्वास नियंत्रण, जो प्राण (जीवन ऊर्जा) को संतुलित करता है।
5. **प्रत्याहार:** इंद्रियों का नियंत्रण, जिससे बाहरी वस्तुओं के प्रति आसक्ति समाप्त होती है।
6. **धारणा:** एकाग्रता, जो मन को एक बिंदु पर केंद्रित करती है।
7. **ध्यान:** ध्यान प्रक्रिया, जो आत्मा को शांति और स्पष्टता प्रदान करती है।
8. **समाधि:** आध्यात्मिक स्थिति, जो मोक्ष की प्राप्ति का मार्ग है।

- पतंजलि का उद्देश्य आत्म-साक्षात्कार और मोक्ष प्राप्ति के लिए एक वैज्ञानिक और व्यवस्थित मार्ग प्रदान करना था।
- योगसूत्र ने योग को शारीरिक अभ्यास से आगे बढ़ाकर मानसिक और आध्यात्मिक विकास का साधन बना दिया।
- उनके सिद्धांत आज भी योग साधकों के लिए प्रेरणा का स्रोत हैं और योग को वैश्विक पहचान दिलाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

2. **स्वामी विवेकानंद:**

- स्वामी विवेकानंद ने 19वीं सदी में भारतीय योग और संस्कृति को पश्चिमी दुनिया में लोकप्रिय बनाया।
- उन्होंने 1893 के शिकागो धर्म महासभा में योग और वेदांत के महत्व को प्रस्तुत किया।
- उनकी पुस्तक "राजयोग" में ध्यान और योग के वैज्ञानिक और आध्यात्मिक पहलुओं का वर्णन है।
- स्वामी विवेकानंद ने योग को केवल धार्मिक साधना तक सीमित न रखकर इसे मानवता के विकास और कल्याण का माध्यम बनाया।
- उन्होंने योग को मानसिक और शारीरिक शक्ति प्राप्त करने के साधन के रूप में प्रस्तुत किया।
- विवेकानंद का मानना था कि योग केवल आत्मज्ञान का मार्ग नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति को उसके कार्यों और जिम्मेदारियों में अधिक कुशल बनाता है।
- उनके अनुसार, योग आत्मा की स्वतंत्रता और समाज की सेवा का साधन है।
- स्वामी विवेकानंद का योगदान योग को आत्म-विकास और मानव सेवा के साधन के रूप में प्रस्तुत करने में महत्वपूर्ण रहा।

3. महर्षि महेश योगी:

- महर्षि महेश योगी ने 'ट्रांसेंडेंटल मेडिटेशन' (साधारण ध्यान) की अवधारणा प्रस्तुत की।
- उनका ध्यान योग की एक विधि के रूप में विकसित किया गया, जो व्यक्ति को तनावमुक्त और मानसिक शांति प्रदान करता है।
- ट्रांसेंडेंटल मेडिटेशन में, साधक को एक मंत्र का जप करने की प्रक्रिया सिखाई जाती है, जो मन को गहराई से शांत करने और चेतना की उच्च अवस्था प्राप्त करने में सहायक होती है।
- महर्षि महेश योगी का ध्यान तकनीक सरल और वैज्ञानिक आधार पर आधारित थी, जो आधुनिक युग के जीवन में आसानी से समायोजित हो सके।
- उन्होंने पश्चिमी दुनिया में योग और ध्यान को लोकप्रिय बनाने के लिए विभिन्न मंचों का उपयोग किया। उनके प्रयासों से ध्यान और योग को एक वैज्ञानिक और व्यावहारिक दृष्टिकोण से समझा गया।
- महर्षि महेश योगी ने यह सिद्ध किया कि ध्यान केवल आध्यात्मिक उन्नति का माध्यम नहीं, बल्कि मानसिक स्वास्थ्य और तनाव प्रबंधन का शक्तिशाली उपकरण है।
- उन्होंने अनेक शोधों को प्रोत्साहित किया, जिनमें ध्यान के सकारात्मक प्रभावों को दर्शाया गया।
- महर्षि ने 'ग्लोबल कंट्री ऑफ वर्ल्ड पीस' की स्थापना की और ध्यान के माध्यम से विश्व शांति की अवधारणा को बढ़ावा दिया।
- उनका योगदान ध्यान को आध्यात्मिकता और विज्ञान के संगम के रूप में प्रस्तुत करने में अभूतपूर्व है।

4. परमहंस योगानंद:

- परमहंस योगानंद ने 'क्रिया योग' को पश्चिमी देशों में

लोकप्रिय बनाया।

- उनका जीवन आत्मा की उन्नति और ईश्वर के साथ एकत्व प्राप्त करने की दिशा में समर्पित था।
- उन्होंने 1920 में अमेरिका की यात्रा की और वहाँ 'योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ इंडिया' की स्थापना की।
- योगानंद ने योग को जीवन के हर पहलू में शामिल करने का संदेश दिया।
- उनकी पुस्तक "ऑटोबायोग्राफी ऑफ अ योगी" (एक योगी की आत्मकथा) विश्वभर में योग और भारतीय आध्यात्मिकता के प्रति रुचि जगाने का कारण बनी। यह पुस्तक पश्चिमी देशों में भारतीय योग और ध्यान का एक महत्वपूर्ण द्वार साबित हुई।
- क्रिया योग, जिसे परमहंस योगानंद ने सिखाया, आत्मा को शुद्ध करने और ईश्वर के साथ जुड़ने का एक साधन है। यह तकनीक प्राण(जीवन शक्ति) को नियंत्रित करने पर आधारित है।
- उन्होंने ध्यान, प्रार्थना और ईश्वर से संवाद के महत्व को समझाया।
- योगानंद ने अपने शिष्यों को सिखाया कि योग केवल एक शारीरिक अभ्यास नहीं है, बल्कि यह आत्मा को ऊँचा उठाने और परम शांति पाने का मार्ग है।
- उनकी शिक्षाएँ आज भी विश्वभर में लाखों लोगों को प्रेरित करती हैं। उनके संस्थान योग और ध्यान के माध्यम से समाज में शांति और सद्भाव फैलाने का कार्य कर रहे हैं।

योगियों की शिक्षाओं का आधुनिक युग पर प्रभाव:

- योग और ध्यान के माध्यम से तनाव प्रबंधन, मानसिक स्वास्थ्य सुधार और आत्म-संतुलन प्राप्त करने की प्रक्रियाओं को विकसित किया गया।

- योग के अभ्यास ने वैश्विक स्तर पर स्वास्थ्य और कल्याण उद्योग को प्रभावित किया।
- योग का प्रसार शिक्षा, चिकित्सा और खेल जैसे विभिन्न क्षेत्रों में हुआ।

भारत में कई विशिष्ट योगी हुए हैं जिन्होंने योग, साधना, और ध्यान के माध्यम से न केवल आत्मज्ञान प्राप्त किया, बल्कि समाज के कल्याण के लिए भी योगदान दिया। इन योगियों ने न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को महत्व दिया, बल्कि मानसिक और आत्मिक उन्नति के लिए भी मार्गदर्शन किया। यहाँ हम कुछ प्रमुख योगियों का वर्णन करेंगे और उनके योगदान पर विचार करेंगे।

1. स्वामी विवेकानंद:

स्वामी विवेकानंद ने योग के माध्यम से भारतीय संस्कृति और वेदांत के महत्व को विश्वभर में फैलाया। उन्होंने विशेष रूप से **राजयोग** और **ज्ञानयोग** के सिद्धांतों को प्रचारित किया। स्वामी विवेकानंद ने ध्यान, साधना, और योग के अभ्यास को जीवन में व्यावहारिक रूप से लागू करने की आवश्यकता पर जोर दिया।

योगदान:

- स्वामी विवेकानंद ने शिकागो विश्व धर्म महासभा (1893) में भारतीय धर्म और योग की महत्ता को प्रस्तुत किया, जिससे पश्चिमी दुनिया में भारतीय योग का प्रचार हुआ।
- उनका आदर्श था: "उठो, जागो और तब तक न रुको जब तक लक्ष्य न प्राप्त हो जाए।"

2. संत तुकाराम:

संत तुकाराम भारतीय भक्ति योग के महान संत थे। उन्होंने "नमदेव-तुकाराम" जैसे भक्ति गीतों के माध्यम से मानवता को प्रेम, दया और साधना का सिखाया। वे भक्ति और ध्यान के माध्यम से आत्मा के उन्नति के पक्षधर थे।

योगदान:

- संत तुकाराम के अभंगों ने मराठी साहित्य में एक नई दिशा दी।
- उनकी साधना का उद्देश्य था परमात्मा से मिलन और आत्मज्ञान प्राप्ति, जिसे उन्होंने भक्ति के रूप में व्यक्त किया।

3. स्वामी रामकृष्ण परमहंस:

स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने धार्मिकता, साधना और ध्यान के माध्यम से आत्मा के उच्चतम स्तर तक पहुँचने की कला सिखाई। वे विभिन्न प्रकार की साधनाओं के माध्यम से यह दिखाते थे कि भगवान की प्राप्ति के लिए कोई एक तरीका नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति की आस्था और साधना पर निर्भर करता है।

योगदान:

- रामकृष्ण परमहंस ने ध्यान, साधना, और भक्ति को जीवन का सर्वोत्तम साधन माना।
- उनके शिष्य स्वामी विवेकानंद ने उनके सिद्धांतों को विश्वभर में फैलाया।

4. योगी श्री श्री रविशंकर:

योगी श्री श्री रविशंकर ने आज के समय में योग और ध्यान को आम जन तक पहुँचाने के लिए **आर्ट ऑफ लिविंग** जैसी संस्थाओं की स्थापना की। उन्होंने प्राचीन भारतीय योग की परंपराओं को आधुनिक जीवन में लागू करने के तरीके बताए।

योगदान:

- श्री श्री रविशंकर ने **सुदर्शन क्रिया** का विकास किया, जो शारीरिक और मानसिक तनाव को कम करने के लिए प्रभावी मानी जाती है।

- उनका दृष्टिकोण सरल और व्यावहारिक है, जिससे लोग योग को अपनी रोज़मर्रा की ज़िंदगी में आसानी से शामिल कर सकें।

5. बाबा रामदेव:

बाबा रामदेव ने योग के माध्यम से भारतीय समाज में स्वस्थ जीवन के महत्व को जागरूक किया। उन्होंने **पारंपरिक हठयोग** और **प्राणायाम** के अभ्यास को लोकप्रिय बनाया, जिससे भारत में योग और आयुर्वेद के प्रति लोगों का रुझान बढ़ा।

योगदान:

- बाबा रामदेव ने योग के विभिन्न आसनों और प्राणायाम के लाभ को
  समझाया और उसे समाज के हर वर्ग तक पहुँचाया।
- उन्होंने योग से जुड़ी कई किताबें और वीडियो सामग्री बनाई, जिससे लोगों को योग के सही तरीके से अभ्यास करने का मार्गदर्शन मिला।

निष्कर्ष:

भारत के विशिष्ट योगियों ने न केवल योग को एक शारीरिक अभ्यास से ऊपर उठाकर आत्मिक उन्नति और मानसिक शांति के साधन के रूप में प्रस्तुत किया, बल्कि उन्होंने समग्र जीवन को एक उच्च उद्देश्य के रूप में देखा। इन योगियों का जीवन और शिक्षाएँ यह संदेश देती हैं कि योग केवल शारीरिक अभ्यास नहीं, बल्कि मानसिक और आत्मिक साधना का एक गहन विज्ञान है, जो हर व्यक्ति को जीवन में संतुलन, शांति और प्रगति की दिशा में मार्गदर्शन करता है।

संदर्भ-ग्रन्थ-सूची:-

1. **"The Complete Works of Swami Vivekananda"**: स्वामी विवेकानंद के भाषणों, लेखों और विचारों का संग्रह।
2. **"Yoga and Its Practice"**: स्वामी विवेकानंद के योग पर विचार और उनके योगदान को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण स्रोत।
3. **"Abhangas of Tukaram"**: संत तुकाराम के अभंगों का संग्रह, जो भक्ति और साधना के महत्व को प्रस्तुत करते हैं।
4. **"Tukaram: His Life and Works"**: तुकाराम की जीवन-गाथा और उनके योगदान पर एक व्यापक पुस्तक।
5. **"The Gospel of Sri Ramakrishna"**: स्वामी रामकृष्ण परमहंस के उद्धरण और उनके दर्शन का संग्रह।
6. **"Sri Ramakrishna: His Life and Sayings"**: उनके जीवन और शिक्षाओं पर एक गहन शोध।
7. **"The Art of Living"**: श्री श्री रविशंकर द्वारा योग और ध्यान पर लिखी गई पुस्तक, जिसमें सुदर्शन क्रिया और जीवन को बेहतर बनाने के उपाय बताए गए हैं।
8. **"Celebrating Silence"**: श्री श्री रविशंकर की शिक्षाओं और ध्यान के लाभों पर आधारित एक पुस्तक।
9. **"Yoga and Pranayama"**: बाबा रामदेव के योग आसनों और प्राणायाम पर आधारित एक महत्वपूर्ण संदर्भ।
10. **"The Power of Yoga"**: बाबा रामदेव के योग, स्वास्थ्य, और जीवन शैली पर विचार।

लोकनायक बापुजी अणे की कृती में सामाजिक दृष्टि

डॉ. दर्शना सायम, एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत
लोकनायक बापुजी अणे महिला महाविद्यालय, यवतमाळ

प्रस्तावना/प्राक्थन:

माधव श्रीहरी अणे उपाख्य लोकनायक बापुजी अणे पद्मविभूषण से सम्मानित विदर्भ के तिलक नाम से विख्यात कायदे पंडित, बिहार के राज्यपाल, सिलोन में भारत के हाई कमिशनर, स्वातंत्र्य सेनानी, तथा अनेक सामाजिक कार्यों में सक्रिय कार्यकर्ता, विदर्भ के तिलक नाम से विख्यात, अनेक संस्थाओं का निर्माण, 1928 में यवतमाल में न्यु इंग्लीश हायस्कूल की स्थापना, 1933 मे अखिल भारतीय काँगेस के अध्यक्ष, ऐसे महान व्यकित्त्व जिन्हे लोकनायक पदवी से नवाजा गया, ऐसा व्यक्तित्व थे बापूजी। महात्मा गांधी जी ने 1930 में नमक का सत्याग्रह किया था। विदर्भ में कोई भी समुद्र किनारा न होते हूवे भी, इस सत्याग्रह को सफल करने हेतू उन्होंने गांधी जी का साथ देने के लिए विचार पूर्वक कदम बढाएँ। विदर्भ के लोगों को अंग्रेजो ने जंगल में जाने से रोकने के लिए कानून बनाया। इसी कानून का विरोध करने के लिए उन्होंने जंगल सत्याग्रह किया। लोगों का जीवनयापन जंगल पर निर्भर होते हूए भी अंग्रेजों ने लोगों को इसी जंगल में जाने पर प्रतिबंध लगाया था। इस सत्याग्रह की वजह से उन्हे छह महीने की सजा भी हुई थी, जिसके कारण वश विदर्भ के लोगों ने उन्हे ‘लोकनायक’ यह पदवी दी थी। सन 1907 में

कलकत्ता विद्यापीठ से उन्होंने एल.एल.बी. की डिग्री प्राप्त की थी। यवतमाल में उन्होंने डिस्ट्रीक्ट एसोसिएशन की स्थापना की और अंग्रेजों के खिलाफ स्वातंत्र्य सेनानीयों का मुकदमा लड़ने के लिए उन्होंने कदम उठाए।

बापूजी लोकमान्य तिलक को अपना आदर्श तथा गुरू मानते थे। उनके विचारों का प्रभाव पूर्णत: बापूजी पर था। जहाँ जरूरत है वहाँ प्रतिकार करना और जहाँ कर सकते है वहाँ सहकर कार्य कराना यह लोकमान्य तिलक के विचारों का ही प्रभाव था। बापूजी का जन्म वैदिक के वाङ्मय पंडित के घर में हुआ था, जिसकी वजह से उन्हे वेदों तथा उपनिषदों के साथ-साथ संस्कृत भाषा का भी उत्तम ज्ञान था। इसी कारणवश 1898 में महाविद्यालयीन जीवन में उनके प्राचार्य श्री केशवराव ब्राह्मण, जो संस्कृत के विद्वान थे, उन्होंने बापूजी को अंग्रेजी भाषा में लिखित कविताओं का संस्कृत में पद्यात्मक अनुवाद करने की सूचना दी थी। वे काव्यज्ञ तथा संस्कृत के अभ्यासक थे। 4 अप्रैल 1919 को यवतमाल से 'लोकमत' समाचार पत्र प्रकाशित किया गया। उस समय ऐसा चलन था की वर्तमान पत्र के जो ध्येय धोरण होंगे, उस आशय की काव्य पंक्ती वर्तमान पत्र की मुख्य पृष्ठ पर होती थी। इसलिए 'लोकमत' वर्तमानपत्र में भी ऐसी काव्य पंक्ती होनी चाहिए ऐसा निश्चित किया गया और यह जिम्मेदारी बापूजी को दि गयी, परंतु कार्य व्यस्थता के कारण बापूजी लिखना भूल गये। 4 एप्रिल को वर्तमानपत्र प्रकाशित होना तय था। तब 3 अप्रैल को पहले दिन जब बापूजी को स्मरण हुआ तो उन्होंने एक सभा में जाने से पहले एक कागज पर तुरंत चार पंक्ती लिख दी-

"अनुगत परितोषितानुजीवी, मधुर वयश्चरितानुरक्तलोक:।"
सुनिपुणपरमात्मसक्ततंभो विचरति लोकमत: प्रदीक्षरश्मि:।।"[1]

और 4 एप्रिल 1919 को वर्तमानपत्र प्रकाशित हुआ। ऐसी शीघ्र कवी थे बापूजी। 72 साल की उम्र में जब वे पीठदर्द से पीडित होने के कारण करवट भी नहीं बदल सकते थे, उस वक्त उन्होंने अपने गुरू का चरित्र काव्यबध्द किया, उसका नाम था 'श्रीतिलकयशोऽर्णव:'। इस महाकाव्य के 3 खंड है, तथा इसमें 85 तरंग और 12 हजार श्लोक है। इस महाकाव्य के लिए उन्हे 1971 मे साहित्य अकादमी पुरस्कार प्रदान किया गया। टिळक महाराष्ट्र विद्यापीठने 6 मे 1969 को यह काव्य प्रकाशित किया।

उद्देश:

1. नवकवियों का काव्य परिचय करवना।
2. नवकाव्य की विशिष्टताओं का वर्णन करना।
3. कवि की सामाजिक दृष्टि का परिचय करवाना।
4. नवकवियों को काव्य प्रेरणा प्रदान करना।
5. कवि के सामाजिक, राजकीय कार्य का परिचय कराना।

'श्रीतिलकयशोऽर्णव:' इस महाकाव्य के प्रथम तरंग में कवि ने स्ववंश प्रशंसा कि है। प्राचीन संस्कृत काव्य में कवि अपने बारे में नहीं लिखते थे और यही परंपरा थी। परंतु बापुजीने इसमें अपने वंश का विवरण दिया है तथा स्वातंत्र्य संग्राम के जहाल मतवादी लोकमान्य तिलक के वंश का वर्णन कर उनके देश के स्वातंत्र्य युद्ध के कार्यों का वर्णन किया है। देश को स्वातंत्र्य दिलाना ही केवत इन महान स्वातंत्र्य् सेनानीयोंका लक्ष नहीं था, अपितु समाज में परिवर्तन लाना भी जरूरी था। सर्वप्रथम हम पर जूल्म करनेवाले अंग्रेजों के खिलाफ

आवाज उठाने के लिए जनजागृती करना भी आवश्यक है, यह जानकर लोकमान्य तिलक ने अंग्रेजों के खिलाफ जनमानस में आक्रोश पैदा किया। इस कारणवश अंग्रेजों ने जमावबंदी की थी, तब लोकमान्य तिलक ने सार्वजनिक 'गणेश उत्सव' के आयोजन की शुरूवात की, तथा शिवजन्म दिनोत्सव और क्रीडागृह और आखाडों का निर्माण किया।

गणेशार्चा समारोह: शिवजन्मदिनोत्सवा।
तरूणोत्साहवृध्दार्थं क्रीडागृहविनिर्मिति:।।12।।
गणेशपूजारूपेण तिलकेन विनिर्मितम्।
राष्ट्रोत्थान महोद्योगयशसे तत् सुमङ्गलम्।।55।।

इतना ही नहीं तो शरीर स्वास्थ्य के लिए बापुजी ने मल्लशाला का निर्माण भी किया। शिवजन्म उत्सव से शिवाजी महाराज का चरित्र लोगों में प्रसारित हुआ और कवि कहते है इससे स्वातंत्र्य इच्छा रूपी द्रुम की लोगों के मन में वृद्धि हुई।

भारते प्रसता शीघ्रं शिवजन्मोत्सवप्रथा।
यूनां चित्तेषु ववृधे स्वातन्त्र्येच्छाद्रुमोत्र्जसा।।174।।

इस प्रकारसे अंग्रेजों के विरूद्ध लोगों के मन में आक्रोश का निर्माण कर जनजागृती करते थे, जो सफल होते हुए भी दिख रहा था। महाराष्ट्र के इस जनजागृती का असर पूरे देश में फैला। राजस्थान में 'प्रताप उत्सव' (महाराणा प्रताप) का आरंभ हुआ। पारतन्त्र्यरूपी रोग पर शिवउत्सव ने औषधी का काम किया। परकीय दास्यता के प्रती युवकों के मन में असंतोष भडका। इसी कारणवश लोकमान्य तिलक को 'असंतोष के जनक' भी कहा जाता है।

अन्धश्रद्धा के कारण लोगों को फसाया जाता है, अन्धश्रद्धा भ्रम से निर्माण होती है और ज्ञान से भ्रम का निराकरण किया जा सकता है। इसलिए शिक्षा की आवश्यकता को कविने अपने काव्य में दर्शाया है। स्त्रियों को शिक्षा मिलनी चाहिए ऐसा कवि कहते है।

स्त्रियो देशे सर्वा अनधिगतविद्या नवयुगे।

क्षमा साहाय्ये ता: कथमपि भवयुर्न विदुषाम्।।32।।

उसी प्रकार अज्ञान का नाश करने कि लिए वृत्तपत्र प्रभावी साधन है ऐसा गोपाल गणेश आगरकर इस काव्य में कहते है। वृत्तपत्र के माध्यम से शासन के काम न करने और समाज में हो रहे अन्याय से लोगों को जागृत करने का कार्य होता है। वृत्तपत्र शाषन के समान माना जाता है। इसी विचारधारा के प्रवर्तक आगरकर और लोकमान्य तिलक ने 'मराठा' और 'केसरी' नाम से दो वृत्तपत्र का प्रकाशन किया। एक साल में हिंदी, गुर्जर, वङ्ग, कर्नाटक विदर्भ इत्यादी प्रांत में 'मराठी', 'केसरी' वृत्तपत्र का लोग पठण करने लगे।

लोकमान्य तिलक और विष्णूशास्त्री इन दो संस्थापकों ने विद्यालय का उद्धाटन किया। सभी विद्वान अध्यापन तत्पर शिक्षक गण नियुक्त किय गए। उद्धाटन के समय विद्यालय में 150 छात्र संख्या प्रवेशित हुई। एक साल में ही 300 से अधिक विद्यार्थी प्रवेशित हुए और 1885 में लोकमान्य तिलक और उनके सहकारियों ने फर्ग्यूसन महाविद्यालय की स्थापना की। प्रथम 90 छात्रों ने महाविद्यालय में प्रवेश लिया। उत्तरोत्तर महाविद्यालय की उन्नती होती गई। आज भी पूना में यह एक नामांकित महाविद्यालय है। जनमानस मे अंग्रेज सरकार के खिलाफ आक्रोश के निर्माण का काम विविध माध्यमों के व्दारा महाराष्ट्र में लोकमान्य तिलक कर रहे थे।

खास कर युवकों के मन में देशप्रेम की भावना निर्माण करना तथा दास्यता के प्रति संघर्ष करने की शक्ती प्राप्त करना था। समाज में उनके कार्यों का प्रभाव दिखने लगा तो अंग्रेज सरकार ने उन्हे 6 वर्षों के लिए मंडाले के कारावास में भेज दिया। 37वें तरंग में 'न्यायदाननाटकम्' में लोकमान्य तिलक ने भाषण किया, उसे संस्कृत में वर्णन किया है। कवि कहते है लोकमान्य तिलक ने न्यायालय में बीना डरे कहा, "मैं अपराधी नहीं हूँ। इस न्यायालयसे भी उच्च न्यायासन ईश्वर का है, ऐसा मै मानता हूँ।" तिलक के ओजस्वी भाषण को कविने 'तिलकोपनिषत्' कहा है। देशसेवा करनेवाले हर एक व्यक्ति को इसका पठण करना चाहिए, जिससे उन्हें प्रेरणा मिले। ऐसा स्वातंत्र्यरूपी महाकार्य संघटन के बिना सिध्द होना कठिण है। स्वातंत्र्य संग्राम में दो विचार प्रवाह थे, मवाल और जहाल। इन दोनों पक्षों की संधी का काम तिलक ने किया। जिस प्रकार भिन्न भिन्न नदिया महासागर में मिलते है, उसी प्रकार सभी पक्षभेद भूलाकर एक स्वातंत्र्यसंग्राम रूपी सागर में सभी पक्ष संमिलित हो, ऐसा तिलक का दृष्टिकोण था। कवि ने यहा एक सुभाषित द्वारा यह विचार काव्य में रचा है।

नद्यो भिन्ना यथा सर्वा विलीयन्ते महोदधौ।
ऐक्यान्घो पक्षभेदौघा लीना: सन्तु तथाधुना।।101।।

लखनौ में लोकमानय तिलक का भाषण हुआ, इसके बाद उन्हे देश के हर जगह से निमंत्रण आने लगे। देशभर अंग्रेज सरकार के विरूध्द जनाक्रोश बढ रहा था। लोकमान्य तिलक देशकार्य करनेवाले नेता के रूप में उभरे थे। लोगों को विचारों से प्रेरीत कर रहे थे। इसी कारणवश अंग्रेजो नें उन्हे कैदी बनाकर जैल में भेजा, परंतु वहाँ पर

भी उन्होंने अपना लेखनकार्य शुरू रखा और 'गीतारहस्य' जैसे ग्रंथा का निर्माण किया। लोकमान्य तिलक ने स्वाध्याय के साथ ही शरीरस्वास्थ्य भी प्राप्त किया था। मल्लयुध्द में वे प्रवीण थे। इसका वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है-

एवंस्वाध्यायकालेऽपि संवाद्यारोग्यसंपदम्।
तयेवोत्तरकालेऽसौ घोरक्लेशसहोऽभवत्।।30।।

छात्र जीवन में उनके मित्र आगरकर, शङ्र्गवाणि, उपासनि, और लोकमान्य तिलक ने पारतंत्र्य की बेडी को नष्ट करने की शपथ लि थी। अ जों के शोषण से जनता दुर्बल हा रही है। देश का उत्कर्ष केवल स्वातंत्र्यप्राप्ती से ही संभव है। पारतंत्र्य देश का क्षय रोग है और लोक संघटनसे उसे उखाड फेंकना है। ऐसा विचार इन युवकों ने किया था। लोगों के अज्ञान का नाश करने के लिए हम अपना जीवन यापीत कर देंगे, ऐसी शपथ लोकमान्य तिलक और गोपाल आगरकर ने लि थी। इस शपथ को सून कर भारत भूमी को इन दोनों के प्रतिज्ञा से, मेरी दिनता अब नष्ट होगी, ऐसी आशा से अतिसुखद आनंद प्राप्त हुआ होगा, एसा विचार कवि करते है।

महाकाव्य के अंतिम तरंग में कवी ने लोकमान्य तिलक के जीवन का अस्त अत्यन्त दु:खित मन से संक्षिप्त किया है। वे कहते है, मेरी लेखणी उनका वर्णन करने में दुर्बल हुई है। लोककल्याण के लिए अपना जीवन व्यतित करनेवाले अपने गुरू लोकमान्य तिलक को वंदन करके अपने काव्य को समाप्त किया है।

निष्कर्ष:

कवि लोकनायक बापुजी अणे ऐसा व्यक्तित्व थे, जिन्होंने पारतंत्र्य स्वातंत्र्य दोनों ही काल को देखा है। वे एक सामाजिक

कार्यकर्ता और स्वातंत्र्य सेनानी थे। लोकमान्य तिलक उनके गुरू थे, आदर्श थे। गुलामी को नष्ट करने के लिए उन्होंने जो योगदान दिया, वे कार्य देश के लिए प्रेरणादायी थे। बापूजी ने अपने काव्यों में लोकमान्य तिलक का जीवन पट लिखा है। उनके वर्णन से लोकमान्य की आकृति हमारे सामने प्रकट होती है। महाकाव्य के नियमानुसार नगर वर्णन भी है। लोकमान्य के सामाजिक कार्यों का वर्णन कवि ने अतिकुशलता से किया है। अति प्रखर बुद्धि के धनी लोकमान्य तिलक को अपना ज्ञान राष्ट्र के दास्य व्याधीका विनाश कारने वाला अमृत बने ऐसा उन्हें लगता होगा, ऐसा सुंदर वर्णन कवि करते है। कवि ने देश स्वातंत्र्य के साथ-साथ सामाजिक जन जागृति तथा अनेक सामाजिक सुधारणाओं के दृष्टि से किये कार्यों का यथा प्रसंग वर्णन किया है। समाज में नव चेतना जागृत करना तथा स्वातंत्र्य भारत में समाज को योग्य दिशा देना भी जरूरी है, ऐसा कवि का विचार है। कवि ने अनेक क्रांति कारक, स्वातंत्र्य प्रेरणा से जन जागृति करने वाले तथा सामाजिक क्रांति के जनक महात्मा फुले जैसे नेताओं का भी वर्णन किया है। सामाजिक उन्नति देश को मजबूत करती है, यह कवि लोकनायक बापूजी अणे का विचार है। बापूजी जब बिहार के राज्यपाल थे तब उन्हे एक मानपत्र से सम्मानिक किया गया, यह मानपत्र कवि हकिम मुजफ्फर ने लिखा था। इसमें उनके प्रति लोकभावना प्रगट हुई है-

जाग उठी तेरी किस्मत ये बिहार,
मिल गया तुझको अणे सा ताजदार
बहुत ही ज्ञानी, ध्यानि, और शानवाला है वह,
मुस्लिमों का मित्र है तो हिंदूओं का अवतार है,

चारो ओर शांती, सारे सुभेमें छायी बहार ही बहार

है यही प्रार्थना भगवान से मुजफ्फर की सदा

रहे अपने 'अणे' की उम्र दुनिया में हजार दो हजार।

संदर्भ-सूची-सूची:-

पुस्तक नाम **लेखक/कवि** **प्रकाशक, वर्ष,**
पृष्ठ क्रम

1. लोकनायक श्री अरूण हळबे अनुभव प्रकाशन, यवतमाल42
प्रथम आवृत्ती 2012

2. श्रीतिलकयशोर्णव: लोकनायक शि. ह. धुपकर
कार्यवाह, 18 तरंग
बापुजी अणे तिलक महाराष्ट्र
विद्यापीठ, पृ. 142
पुणे, प्रथम आवृत्ती 1969

3. श्रीतिलकयशोर्णव: लोकनायक शि. ह. धुपकर
कार्यवाह, 18 तरंग
बापुजी अणे तिलक महाराष्ट्र
विद्यापीठ, पृ. 145
पुणे, प्रथम आवृत्ती 1969

4. श्रीतिलकयशोर्णव: लोकनायक शि. ह. धुपकर
कार्यवाह, 18 तरंग
बापुजी अणे तिलक महाराष्ट्र
विद्यापीठ, पृ. 155
पुणे, प्रथम आवृत्ती 1969

5. श्रीतिलकयशोर्णव: लोकनायक शि. ह. धुपकर
कार्यवाह, 7 तरंग

बापुजी अणे तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पृ. 38
पुणे, प्रथम आवृत्ती 1969

6. श्रीतिलकयशोर्णव: लोकनायक शि. ह. धुपकर कार्यवाह, 51 तरंग
बापुजी अणे तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पृ. 25
पुणे, प्रथम आवृत्ती 1969

7. श्रीतिलकयशोर्णव: लोकनायक शि. ह. धुपकर कार्यवाह, 5 तरंग
बापुजी अणे तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पृ. 23
पुणे, प्रथम आवृत्ती 1969

राममन्दिर निर्माण में जगद्गुरु रामभद्राचार्य का योगदान

शिखा त्यागी, शोधच्छात्रा &

प्रो., पूनम लखनपाल, प्रोफेसर एवं अध्यक्षा संस्कृत विभाग, रघुनाथ गर्ल्स पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, मेरठ

भारतवर्ष प्राचीनतम संस्कृति एवं संस्कृत भाषा के गौरव से सम्पन्न है यहाँ दार्शनिकों ने अध्यात्म को समृद्ध किया तो धर्माचार्यों ने धर्म को पुष्ट किया। वर्तमान समय में अनेक संस्कृत विश्वविद्यालय संस्कृति एवं धर्म की ध्वजा को धारण किए हुए हैं। इन्हीं में से एक है, "जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्याङ्ग विश्वविद्यालय, चित्रकूट धाम, उत्तर प्रदेश", इस विश्वविद्यालय के संस्थापक एवं आजीवन कुलाधिपति, श्री चित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर, भारत सरकार द्वारा पद्मविभूषण से सम्मानित स्वामी रामभद्राचार्य एक प्रख्यात विद्वान्, शिक्षाविद्, बहुभाषाविद्, रचनाकार, प्रवचनकार, दार्शनिक एवं धर्मगुरु हैं। 75 वर्षीय रामभद्राचार्य काल के क्रूर प्रकोप के कारण मात्र 2 माह की आयु में ही प्रज्ञा चक्षु हो गए, किन्तु ईश्वर की अनुकम्पा से केवल एक बार सुनकर ही स्मरण करने की अद्भुत क्षमता से सम्पन्न हैं।

वसिष्ठ गोत्रीय सरयूपारीण ब्राह्मण कुल में जन्मे रामभद्राचार्य की बाल्यावस्था से ही अपने दादा पण्डित सूर्यबली मिश्र के सान्निध्य में विभिन्न शास्त्रों के अध्ययन, श्रवण और मनन में अभिरुचि उत्पन्न हो गई[1]। मात्र 3 वर्ष की अवस्था में इन्होंने अपनी प्रथम कविता की रचना की एवं 5 वर्ष की अवस्था में सम्पूर्ण गीता[2] और 7 वर्ष की अवस्था में सम्पूर्ण रामचरितमानस[3] को कण्ठस्थ कर लिया तदनन्तर

प्राथमिक शिक्षा एवं औपचारिक शिक्षा के समय इन्होंने विभिन्न ग्रन्थों का अध्ययन किया एवं स्वरचित कृतियों से साहित्य निधि को समृद्ध किया[4]।

साहित्यिक एवं सामाजिक संसाधनों के माध्यम से उनके 90 से अधिक ग्रन्थों का परिचय प्राप्त होता है जबकि 20 जनवरी 2024 को टाइम्स नाउ[5] के साथ "रामलाल प्राण प्रतिष्ठा" से सम्बन्धित साक्षात्कार में उन्होंने अपने 240 ग्रन्थों की पूर्णता की स्वीकृति दी है, जिनमें संस्कृत भाषा में रचित महाकाव्य, खण्डकाव्य, पत्रकाव्य, गीतिकाव्य, शतककाव्य, स्तोत्रकाव्य, नाटक, सुप्रभातकाव्य आदि के साथ संस्कृत ग्रन्थों की टीकाएं एवं प्रस्थानत्रयी पर भाष्य प्रमुख हैं। इसके साथ ही इन्होंने हिन्दी, अवधी, ब्रजभाषा एवं मैथिली भाषा में भी ग्रन्थों की रचना की है।

बाल्यकाल से ही वे राघव सरकार के अनन्य भक्त हैं एवं 1979 से राघव के बाल रूप के विग्रह की सेवा में रत हैं[6]। श्री राम के गुरु ऋषि-वशिष्ठ के कुल में जन्म लेने के कारण वे स्वयं को उनका आचार्य एवं राम को अपना बालक मानते हैं।

प्राप्त सूचनाओं के आधार पर आदरणीय रामभद्राचार्य अयोध्या के रामजन्मभूमि प्रकरण की न्यायिक सुनवाई के लिए 9 बार उच्चन्यायालय में प्रस्तुत हुए। जुलाई 2003 में स्वामी रामभद्राचार्य ने उच्च न्यायालय के सम्मुख अयोध्या विवाद में धर्मविशेषज्ञ के रूप में साक्षी संख्या OPW 16[7] के अन्तर्गत साक्ष्य प्रस्तुत किए एवं 100 पृष्ठों के शपथपत्र में उन्होंने हिन्दू धर्म ग्रन्थों के उद्धरण दिए, जिनमें अयोध्या को हिन्दुओं के लिए पवित्र नगरी एवं रामजन्मस्थली घोषित किया गया है।

उन्होंने प्राचीन हिन्दू धर्म ग्रन्थों यथा वाल्मीकि रामायण, रामातपनीय उपनिषद्, स्कंदपुराण, यजुर्वेद, अथर्ववेद,

तुलसीदासकृत रामचरितमानस, दोहाशतक, कवितावली इत्यादि से 441 प्रमाण प्रस्तुत किए जिनमें में 437 प्रमाण सत्य सिद्ध हुए।[8]

उच्च न्यायालय में मौखिक साक्षात्कार के समय स्वामी रामभद्राचार्य ने रामानन्द सम्प्रदाय के इतिहास, महन्तों के नियम, उनके मठ, अखाड़े का गठन और कार्यपद्धति इत्यादि के साथ तुलसीकृत रचनाओं का विस्तृत वर्णन किया इसके अतिरिक्त जन्म भूमि विवाद के प्रतिपक्षी दल द्वारा प्रदत्त तर्कों का भी खंडन किया कि मूल मन्दिर विवादित स्थल से उत्तर की ओर था।

उन्होंने स्कन्द पुराण के वैष्णव खण्ड से अयोध्या महात्म्य को उद्धृत किया, जिसके अनुसार राम के जन्म स्थान से 300 धनुष की दूरी पर सरयू नदी प्रवाहित हो रही है[9] और बताया कि वाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड के 18वें सर्ग के आठवें श्लोक से श्री राम जन्मभूमि की जानकारी प्रारम्भ होती है।[10] अथर्ववेद के दशम काण्ड के 21वें अनुवाक के द्वितीय मन्त्र में स्पष्ट कहा गया है कि आठ चक्रों और 9 द्वारों वाली अयोध्या देवताओं की नगरी है।[11] गरुड़पुराण में अयोध्या महात्म्य वर्णित करते हुए श्लोक है-

अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका।
पुरी द्वारवती ज्ञेया सप्तैता मोक्षदायिकाः।।[12]

उनके द्वारा उच्च न्यायालय में प्रदत्त शपथ पत्र एवं मौखिक पूछताछ को सर्वोच्च न्यायालय में भेजा गया एवं उसके कुछ अंश उच्च न्यायालय एवं सर्वोच्च न्यायालय दोनों के अंतिम निर्णयों में भी सम्मिलित किए गए हैं। सर्वोच्च न्यायालय के 1045 पृष्ठों के निर्णय में विभाग N-13[13] आस्था और विश्वास, उपविषय के अंतर्गत विभिन्न हिन्दू धर्म ग्रन्थों के साक्ष्यों को उद्धृत किया गया है जिसमें श्रीमद् स्कंदपुराण के तीन उद्धरणों को सम्मिलित किया गया है।[14] इसके पश्चात् सुन्नी सेंट्रल वक्फ बोर्ड की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता जफरयाब जिलानी द्वारा धार्मिक ग्रन्थों पर विपरीत तर्क

प्रस्तुत किए गए तदनंतर स्वामी रामभद्राचार्य की मौखिक पूछताछ के अंशों को उद्धृत किया गया है। विपक्षी अधिवक्ता जिलानी ने अपने मौखिक तर्कों के समय स्वामी रामभद्राचार्य को "धर्म जानने वाला सबसे विद्वान व्यक्ति" बताया।[15]

इस निर्णय में स्वामी रामभद्राचार्य का संक्षिप्त परिचय सम्मिलित करते हुए उनके मौखिक वक्तव्य का संदर्भ भी दिया गया है उन्होंने कहा कि "मेरे अध्ययन एवं जानकारी के अनुसार अयोध्या में विवादित स्थल भगवान श्री राम का जन्म स्थान है और अनादि काल से तथा परम्पराओं और आस्था के अनुसार विवादित स्थल को भगवान राम के जन्म स्थान के रूप में मान्यता प्राप्त है और उस स्थान पर निरन्तर पूजा की जाती है।"[16] उन्होंने राम की जन्मभूमि में आस्था और विश्वास को बनाए रखने के लिए गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित श्री तुलसी दोहा शतक के अंश और वाल्मीकि रामायण के बालकांड और स्कन्दपुराण के वैष्णव खण्ड का आश्रय लिया।

मौखिक परीक्षण के समय उनसे रामचरितमानस के ज्ञान के विषय में गहन प्रश्न उत्तर किए गए तब उन्होंने कहा तुलसीकृत रामचरितमानस में रामजन्मभूमि से संबंधित तथ्य उत्तर काण्ड में प्राप्त होता है- "जन्मभूमि मम पूरी सुहावनि। उत्तर दिशि बह सरजू पावनि।"[17] स्वामी रामभद्राचार्य द्वारा की गई रामचरितमानस के दोहों की संपूर्ण व्याख्या निर्णय में उद्धृत है। जब यह प्रश्न उठा कि तुलसीदास का ही क्या प्रमाण है तब उन्होंने भक्तमाल के 129वें छप्पय से उद्धृत किया- "कलि कुटिल जीव निस्तार हित वाल्मीकि तुलसी भए।" इस पर न्यायमूर्ति इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने कह दिया कि "You are devine power."[18]

रामजन्मभूमि विवाद के सकारात्मक निर्णय में अधिवक्ताओं शोधकर्ताओं और पुरातत्व विशेषज्ञों के अतिरिक्त अनेक सन्त एवं धर्माचार्य का योगदान अविस्मरणीय है, दिगम्बर अखाड़ा के महन्त परमहंस रामचन्द्रदास, जगद्गुरु रामदिनेशाचार्य, रामानन्दाचार्य

स्वामी हर्याचार्य, निर्मोही अखाड़ा के महन्त भास्करदास, स्वामी अविमुक्तेश्वरानन्द सरस्वती इत्यादि सन्तों में जगद्गुरु रामभद्राचार्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।[19] उन्होंने न्यायिक सुनवाई में राममन्दिर के अस्तित्व के सम्बन्ध में अकाट्य तर्क प्रस्तुत किए।

उनके अनवरत प्रयासों के बल पर माननीय न्यायालय रामजन्मभूमि के सम्बन्ध में संतुष्ट हुए और रामजन्मभूमि का निर्णय सकारात्मक रहा, वर्तमान समय में अयोध्या में श्री रामजन्मभूमि पर विशाल एवं भव्य राम मन्दिर का निर्माण सम्भव हुआ और श्री रामलला के विग्रह की स्थापना हुई। भारतीय धर्म एवं संस्कृति के अनुरागी समाज को रामलला की मनमोहिनी छवि के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

साधारण मनुष्य को श्री राम के चित्र से उनके चरित्र की ओर यात्रा करने की प्रेरणा देने वाले सन्तों में अग्रगण्य पूज्य स्वामी रामभद्राचार्य के राममन्दिर निर्माण में योगदान का उल्लेख तत्कालीन समाचार पत्रों, वीडियो एवं साक्षात्कारों के माध्यम से प्राप्त होता है,[20] जो उनकी वैदुष्यपूर्ण प्रज्ञा, स्मृतिसौष्ठव एवं वक्तृकौशल का द्योतक है। अपने धर्म एवं संस्कृति के प्रति निष्ठावान् आचार्य रामभद्राचार्य जी का व्यक्तित्व न केवल संस्कृतानुरागी साहित्यकारों के लिए प्रेरणादायी है, अपितु सम्पूर्ण धर्मानुरागी भारतवासियों के लिए ऊर्जा का स्रोत है और वैश्विक पटल पर आदर्श है। रामजन्म भूमि सम्बन्धी विवाद में उनकी भूमिका एवं राम मन्दिर निर्माण में योगदान भारतीय धर्म परंपरा के लिए अविस्मरणीय है और इसके लिए भारतवर्ष एवं भारतीय धर्म संस्कृति सदैव उनकी ऋणी रहेगी।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची:-

1. मेरी स्वर्ण यात्रा, पृष्ठ संख्या- 23
2. वही पृष्ठ संख्या- 27
3. वही पृष्ठ संख्या- 29
4. वही पृष्ठ संख्या- 80,81
5. Times Now - https://youtu.be/WFbc05dNZvE?si=65P9M1FEJ0I6znnt
6. मेरी स्वर्ण यात्रा, पृष्ठ संख्या- 72
7. सर्वोच्च न्यायालय का रामजन्मभूमि प्रकरण में अंतिम निर्णय, पृष्ठ संख्या- 59
8. हिंदुस्तान समाचार, 4 जनवरी 2023 hindustansamachar.in
9. समाचार पत्र, जागरण, 15 अक्टूबर 2019, jagran.com
10. ततो यज्ञे समाप्ते तु ऋतुनां पद समत्ययुः।
    ततोश्च द्वादशे मासे चैत्रे नवमिके तीथौ।।8।।
    नक्षत्रेऽदितिदैवत्ये स्वोच्छसंस्थेषु पञ्चसु।
    ग्रहेषु कर्कटे लग्ने वाक्पताविन्दुना सः।।9।।
    प्रोद्यमाने जगन्नाथं सर्वलोक नमस्कृतम्।
    कौशल्याजनयाद्रामं सर्वलक्षणसंयुतम।।10।।

    रामायण बालकाण्ड, सर्ग 18
11. अष्टचक्रा नवद्वारा देवनां पूरयोध्या।
    यस्यां हिरण्मयः कोशः स्वर्गोज्योतिषावृतः।।

    अथर्ववेद 10/12/2
12. गरुड़पुराण 2/38/5,6
13. सर्वोच्च न्यायालय का रामजन्मभूमि प्रकरण में अंतिम निर्णय, पृष्ठ संख्या- 650
14. स्कंद पुराण, वैष्णव खंड, श्लोक संख्या- 15-17, 18-25 और 29-31
15. सर्वोच्च न्यायालय का रामजन्मभूमि प्रकरण में अंतिम निर्णय, पृष्ठ संख्या- 653
16. वही
17. मेरी स्वर्ण यात्रा, पृष्ठ संख्या-121
18. वही
19. समाचार पत्र, अमर उजाला, अयोध्या, 17 नवम्बर 2019
20. समाचार पत्र, हिन्दुस्तान अयोध्या, 19 जनवरी 2024

साहित्य सेवी डॉ.योगिनी व्यास की जीवनमूल्य एवं बोधप्रधान लघुकथाओं का विहंगावलोकन

डॉ. खुशबू प्रतीक मोदी
सहायक अध्यापक, संस्कृत विभाग
सरकारी विनयन एवं वाणिज्य महाविद्यालय, पाटण, गुजरात

कथा विश्व-साहित्य का अनुपम आभूषण है। कथाएं सबको प्रिय होती है। मनोरंजन के साथ-साथ ज्ञान दात्री यह कथाएं नीति एवं जीवन मूल्यों का बोध भी देती हैं। कथा के माध्यम से प्राप्त यह नीति बोध मनुष्य को जीवन पर्यन्त स्मृतिस्थ रहता है। शैक्षणिक दृष्टि से देखा जाए तो चारित्र्य निर्माण में प्राचीनकाल से ही कथासाहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है।

यह तो सुविदित ही है कि संस्कृत में कथा साहित्य विश्व में सबसे पुराना है। संस्कृत गद्य विधा का अवलोकन करें तो ज्ञात होता है कि कथाएं अपेक्षाकृत अधिक लिखी गईं हैं और आज भी लिखी जा रही हैं। इन कथाओं के भेद-प्रभेद अनेक प्रकार से किये जा सकते हैं। आज के समय में संस्कृत कथा के रूपात्मक या अवधारणात्मक भेद इस प्रकार संभव है- दीर्घकथा, कथा, लघुकथा, अतिलघुकथा, चित्रकथा आदि। कलातत्वों के आधार पर कथा के भेद इस प्रकार हो सकते हैं- घटनाप्रधान कथाएं, कार्यकलाप-प्रधान कथाएं, वार्तालाप प्रधान कथाएं, चरित्र-चित्रण प्रधान कथाएं, प्रभाव-प्रधान कथाएं। इसी प्रकार विषयात्मक कथाभेद अधोलिखित हैं- सामाजिक कथाएं, मनोवैज्ञानिक कथाएं, राजनीतिक कथाएं, सांस्कृतिक कथाएं, व्यंग्यात्मक कथाएं, बिम्ब-प्रतीकात्मक कथाएं और सांकेतिक कथाएं।

संस्कृत कथा साहित्य के विकास को देखकर यह लगता है कि इसका प्रारम्भ पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से हुआ। तत्पश्चात् निरंतर कथा संग्रह का प्रकाशन भी हुआ। यह उपक्रम कथा साहित्य की समृद्धि एवं लोकप्रियता का द्योतक है। भारत की स्वतंत्रता के पूर्व भी अनेक कथासंग्रहों का प्रकाशन हुआ। स्वातंत्र्योत्तर-काल में पण्डिता

क्षमाराव, भट्ट मथुरानाथ शास्त्री जैसे वरेण्य गद्यकारों की लेखनी से जन्म लेने वाली संस्कृत कथा विधा ने शीघ्र ही आशातीत प्रगति की। यह विधा अभिराज राजेन्द्र मिश्र, राधावल्लभ त्रिपाठी, जनार्दन हेगडे, गोपबन्धु मिश्र, एच.आर. विश्वास, प्रभुनाथ द्विवेदी, गौरी धर्मपाल, नारायण दास, प्रमोद कुमार नायक, हर्षदेव माधव जैसे कई कथाकारों से संवलित होती हुई नित नई ऊँचाईओं को प्राप्त कर रही है। आधुनिक संस्कृत साहित्य न केवल पुरुष साहित्यकारों से समृद्ध हैं किन्तु नवनवोन्मेष शालिनी प्रज्ञा के कारण 20वीं शताब्दी के महिला रचनाकार भी अपनी प्रतिभा-विस्तार हेतु प्रयत्नशील दिखे हैं।

वैदिक काल से लेकर आज तक महिलाएं शिक्षा एवं साहित्य के क्षेत्र में अपना योगदान दे रही हैं। ऋग्वेद के कुछ सूक्तों में ऋषिकाओं का भी वर्णन मिलता है, जिनके नाम इस प्रकार है- घोषा(ऋग्वेद १०.३१.४०), लोपामुद्रा(ऋग्वेद १.१७९.१-२), अपाला(ऋग्वेद १.१७९.१-२), इन्द्राणी (ऋग्वेद १०.७५), विश्ववारा (ऋग्वेद ५.२८)। बृहदारण्यकोपनिषद् में विदुषी गार्गी याज्ञवल्क्य को ब्रह्मविषयक प्रश्न करती है। अत: यह मानने में कोई असुविधा नहीं है कि संस्कृत-साहित्य में महिला कवयित्रीयों का अवदान उल्लेखनीय है।

समग्र भारतवर्ष में महिला साहित्यकार बहुविध रचना कर रहे हैं। न केवल काव्य-साहित्य किन्तु संस्कृत- कथा-नाटक-उपन्यासादि के प्रणयन में भी संस्कृत के महिला साहित्यकारों की भूमिका अनवद्य है। काव्य-कथा-नाटक-प्रणयन-पटीयसी पण्डिता क्षमाराव, नलिनी शुक्ला, पुष्पा दीक्षित, रमा चौधरी प्रभृति कुछ प्रसिद्ध आधुनिक महिला साहित्यकार हैं। 20वीं शताब्दी में और भी अनेक महिला रचनाकार हुई हैं, जैसे कि प्रो.दीप्ति त्रिपाठी, प्रो. मीरा द्विवेदी, प्रो. नवलता वर्मा, प्रो. मुक्ता विश्वास, डॉ. कीर्ति कुलकर्णी, डॉ. रेखा शुक्ला, डॉ. योगिनी हिमांशु व्यास आदि।

अहर्निश सरस्वती की आराधना एवं अथक परिश्रम से जिनके बीस से अधिक पुस्तक प्रकाशित हुएं हैं, 'साहित्य-गौरव-पुरस्कार', 'सारस्वत पुरस्कार', 'श्रेष्ठ संशोधन पुरस्कार', 'Women's Achiever Award', 'Teaching and Propagating Sanskrit' जैसे विविध ३५ पुरस्कारों से जो पुरस्कृत हुए हैं, ऐसे गुजरात के पाटनगर गांधीनगर के निवासी डॉ.योगिनी हिमांशु व्यास का जन्म २०/१२/१९५७ के दिन अहमदाबाद में माँ सरस्वती के साद्यन्त उपासक एवं ऋषितुल्य व्यक्तित्व के धनी प्रो. डॉ. भगवतीप्रसाद पंड्या के घर हुआ। अलंकारशास्त्र के साथ उच्च अभ्यास करते हुए उन्होंने भामह के काव्यालंकार के विषय को लेकर विद्यावाचस्पति की उपाधि प्राप्त की। १९९१ से २०२० तक कुल तीस साल गांधीनगर में स्थित 'उमा विनयन एवं नाथीबा वाणिज्य महिला महाविद्यालय' में संस्कृत विभाग के अध्यक्ष एवं अनुस्नातक विभाग के प्रभारी के रूप में अपनी सेवाएं प्रदान की।

डॉ. योगिनी व्यास के प्रकाशित साहित्य में कथासंग्रह, बोधप्रधान संस्कृत नाट्यसंग्रह, वैदिक साहित्य संशोधन संग्रह, विवेचन ग्रन्थ, अनुवाद ग्रन्थ, स्तोत्रकाव्य के आस्वाद ग्रन्थ, शोधपत्र संग्रह एवं संपादन सम्मिलित हैं, जिनमें पाँच पुस्तक संस्कृत में प्रकाशित हुएं हैं, जिसमें- (१) अलंकारशास्त्रीय रसतत्वस्य परिशीलनम् (२) वैभाकरी वाक् (३) वैदिकवीथिविहार: (४) स्वाध्यायक्रतु: (५) यशोधनानां हि यशो गरीय: का समावेश होता है। उनके साहित्य में 'संस्कृत-नैवेद्यम्', 'चर्पटपञ्जरिका स्तोत्रम्', 'काव्यादर्श:' एवं 'આખ્યાનોની ગંગોત્રી: વેદો' इन चार पुस्तक को गुजरात राज्य साहित्य अकादमी द्वारा 'श्रेष्ठ पुस्तक' के रूप में पुरस्कृत किया गया। अपनी अभ्यास-यात्रा के दौरान उनके २०० से ज्यादा शोधपत्र राष्ट्रीय एवं आंतरराष्ट्रीय कक्षा के प्रतिष्ठित जर्नल् एवं सामयिक में प्रकाशित हुए, जिनमें १४ लेख अमरिका, जर्मनी, इटली और जोर्डन से प्रकाशित हुए। उनके कई सारे शोधपत्र एवं बहोत सारी रचनाएं दिल्ही संस्कृत अकादमी, उत्तराखंड संस्कृत अकादमी,

विक्रम विश्वविद्यालय-उज्जैन एवं वेद विज्ञान अकादमी द्वारा पुरस्कृत हुए हैं।

अमरिका, मॉरीशस और बैंकाक जैसे देशों में 'देवभाषा संस्कृत' में अस्खलित धारा प्रवाह से पाश्चात्य विद्वानों को मन्त्र मुग्ध करनेवाली डॉ. योगिनी व्यास ने भारत में समायोजित कई अधिवेशन, परिसंवाद, संगोष्ठी, चर्चासभा एवं कविसम्मेलन में Key Note Speaker, सारस्वत विशेष एवं मुख्यातिथि के रूप में मननीय व्याख्यान दिए। इतना ही नहि, 'बायसेग' संस्था द्वारा आयोजित संस्कृत भाषा के विविध कार्यक्रमों का जीवंत प्रसारण भी दिया। बैंकाक की Silpakorn युनिवर्सिटी में 'Universal Prosperity in Vedic Literature' विषय पे मननीय व्याख्यान एवं 'कविसम्मेलन' में समग्र भारत देश का प्रतिनिधित्व किया। मोरेशियस के 'रामायण-सेन्टर' में 'Harmony and peace in Valmiki Ramayana' विषय पे व्याख्यान एवं वहीं समायोजित सांस्कृतिक कार्यक्रमों में गुजरात राज्य का प्रतिनिधित्व किया। विद्या मृतवर्षिणी पाठशाला- वलसाड में दर्शनशास्त्र विषयक व्याख्यान, स्वाध्याय किल्ला मण्डल- पारडी में वैदिक शोधपत्र, उज्जैन-साँचोर-जयपुर-कुरुक्षेत्र-कोलकाता-विदिशा-जबलपुर-हरद्वार-वाराणसी-दिल्ही-तिरुपति-पूना शहरों में समायोजित संगोष्ठीयों में चेयर-पर्सन, रेडियो-आकाशवाणी द्वारा प्रसारित 'संस्कृत-शिक्षण' के पाठों में पू.भगवतीप्रसाद पंड्या के शिष्य के रूप में कार्य, 'शुक्ल यजुर्वेद' का गुजराती अनुवाद, विद्वत्परिषद् के सभ्य के रूप में कार्य, हिन्दु रिसर्च फाउंडेशन-हिंमतनगर द्वारा आयोजित 'विश्वभाषा साहित्य और रामकथा' नामक आंतरराष्ट्रीय परिसंवाद में keynote speaker, स्वामी समर्पणानन्द वैदिक शोधसंस्थान-उत्तरप्रदेश द्वारा आयोजित 'गोपथब्राह्मणे विविधज्ञानविज्ञानम्' नामक अन्तर्राष्ट्रीय परिसंवाद में विशिष्ट व्याख्यान, दिल्ही संस्कृत अकादमी द्वारा आयोजित 'अखिल भारतीय संस्कृत मौलिक लघुकथा-लघुनाटक-समस्यापूर्ति' इत्यादि कार्यक्रमों में पुरस्कारों से पुरस्कृत हुए। गुजरात राज्य की लगभग सभी युनिवर्सिटी में बोर्ड ऑफ स्टडीज़ की सभ्य एवं विषय-निष्णात के रूप में प्रदान दिया। 'बृहद् गुजरात संस्कृत परिषद' की ओर से

अभिनित कई संस्कृत नाटकों में श्रेष्ठ अभिनय भी किया। शैक्षणिक संस्थाओं के उपरांत कई सामाजिक संस्था एवं सांस्कृतिक संगठनों में ह्रदयस्पर्शी उद्बोधन भी किये।

डॉ.योगिनी व्यास ने अपने 'वैभाकरी वाक्' नामक् ग्रन्थ में १८ लघुकथाएं दी हैं, जिनके शीर्षक कुछ इस प्रकार हैं- १.लोभ: पापस्य कारणम्, २.स्वस्ति पन्थानमनुचरेम, ३.सोद्योगं नरमायान्ति विवशा: सर्वसंपद:, ४.भवितव्यता खलु बलवती, ५.क्षमा हि परमं बलम्, ६.सर्वं बलवता लोके, ७.नास्ति सत्यसमो धर्म:, ८.ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवा:, ९.धनसञ्चयस्य अन्वेषणम्, १०.अनिर्वेद: श्रियो मूलमनिर्वेद: परं सुखम्, ११.विनाशकाले विपरीतबुद्धि:, १२.नास्ति उद्यमसमो बन्धु:, १३.चरन्वै मधु विन्दति, १४.न हि कल्याणकृत्कश्चिद् दुर्गतिं तात गच्छति, १५.पित्रो: शुभाशी:, १६.भूत्यै जागरणम् अभूत्यै स्वपनम्, १७.प्रमुदितजनस्य कञ्चुक:, एवं १८.सुवासितद्रव्यस्य मूल्यम्। इनमें से कुछ कथाएं तो दिल्ली संस्कृत अकादमी एवं उत्तराखंड संस्कृत अकादमी द्वारा पुरस्कृत भी की गई हैं। इन सारी कथाओं से हमें उद्यम, क्षमा, सत्य, बल, भूति, साहस जैसे जीवन मूल्यों का ज्ञान होता है। साथ ही इनके माध्यम से हमें कुछ न कुछ नीतिबोध भी प्राप्त होता है। मेरे शोधपत्र में मैंने 'वैभाकरी वाक्' में निरूपित इन कथाओं का विहंगावलोकन करके उनमें वर्णित मूल्य और बोध को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

डॉ.योगिनी व्यास की वर्णनशैली अद्भुत है। कथाओं का प्रारम्भ बड़े ही विशिष्ट तरीके से होता है। आरम्भ में ही हमें उनकी वर्णनकला का बोध होता है। जैसे 'पित्रो: शुभाशी:' नामक लघुकथा में नगर के वर्णन के लिये बहोत सारी उपमाएं दी गई हैं। यथा- " वनेषु ज्येष्ठं नन्दनवनम्, खगेषु खगपति:, पुष्पेषु अरविन्द:, औषधेषु सुधा, सत्यवादिषु युधिष्ठिर:, मङ्गलेषु धर्म:, वेदेषु सामवेद:, देवेषु वासव:, वृक्षेषु अश्वत्थ:, समासेषु द्वन्द्व:,मुनिषु व्यास: तथा इदं नगरं गुर्जरराष्ट्रेषु स्वशोभया प्रधानम् आसीत्।" भिन्न भिन्न ऋतुओं का प्रकृति पर जो प्रभाव होता है, उसके वर्णन में भी उनकी विशिष्ट कला दिखाई देती है। उन्होंने अपनी कथाओं में पात्रों के जो

नामाभिधान किये हैं, वो भी किसी न किसी गुण के द्योतक हैं। यथा- गुणबुद्धि, सुप्रिया, वैभव, श्रवण, सुन्दरी, संस्कृति, सुशीला इत्यादि। उनकी कथाओं में मन्दिर एवं देवी-देवता के वर्णन मिलते हैं, जो हमारी संस्कृति के द्योतक है। ऐसे परिवार के वर्णन मिलते हैं, जिनके घर प्रतिदिन विविध देवी-देवता के स्तोत्रगान होते हो। भगवान् हमें वरदान या आशीर्वाद देते है, किन्तु उसे यथायोग्य सिद्ध करना हमारे हाथ में ही है। यदि हम केवल ईश्वर का नाम स्मरण करते रहेंगे, और मेहनत नहीं करेंगे, तो ईश्वर भी हमें सहाय नहीं करेंगे। अत: हमें नियमित अपने स्वधर्म अनुसार उद्यम करते रहना चाहिए। अति लोभ या लालच पाप का मूल है। यह लोभ या लालच बड़े बड़े ज्ञानी को भी अपने ध्येय मार्ग से नीचे गिरा सकता है। हमारी संस्कृति में निरूपित षोडश संस्कारों के विधि-विधान और उस समय बोले जानेवाले मन्त्र और श्लोक हमें कथा में प्रसंगोचित प्राप्त होते हैं। इससे कहा जा सकता है कि कवि अपने आसपास की घटनाओं और व्यवहार से अलग होके नहि लिख सकता। 'सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया:...' इस मन्त्र के अनुसार विपत्ति के समय में सबको एकसाथ मिलकर एकदूसरे की सहाय करनी चाहिए। ऐसे एक नीड़वत् नगरों का वर्णन इन कथाओं में प्राप्त होता है। 'धन्यो गृहस्थाश्रम:' अनुसार दंपति के बीच कैसा प्रेम होना चाहिए यह बात कवयित्री अनुपम उपमा देकर बताती है। यथा- 'वेलेव सागरस्य, लतेव पादपस्य, चन्द्रिकेव चन्द्रमस:, कमलिनीव सरस:, नायकस्य भार्या आसीत्।' हम सागर से उसकी लहरों को या चन्द्र से उसकी चाँदनी को कभी अलग नहि कर सकते। कवयित्री ने अपनी कथाओं में भिन्न भिन्न ग्रन्थों(रामायण, महाभारत, अर्थशास्त्र जैसे कई विभिन्न ग्रन्थ) के सन्दर्भ दिए हैं। जिससे उनका विविध विषयों का ज्ञान स्पष्ट होता है। जब तक सन्तान में आज्ञापालन और कृतज्ञता है, तब तक कुटुम्ब अच्छे से चलते हैं। जहां माता-पिता रहते है, वहीं सारे तीर्थ हैं। किन्तु यदि सन्तान कृतघ्नी बन जाए तो घर बिखर जाते हैं। आजकल हम 'किं भविष्यति, किं भविष्यति' ऐसे भविष्य के बारे में सोचकर चिन्तामग्न रहते हैं, किन्तु चिन्ता और चिता में केवल एक बिन्दुमात्र का ही भेद है यह समजकर हमें व्यर्थ चिन्ता न करके

समस्या का उपाय ढूंढना चाहिए। जो हमेशा कल्याण के पथ पर चलता रहता है उसे मधुर फल मिलता ही है- चरन् वै मधु विन्दति। कल्याण करनेवाले की दुर्गति कभी नहि होती। जो श्रान्त होते है, अर्थात् कार्य करते रहते हैं, उनकी देवता भी सहायता करते हैं। हम कितने ही बलशाली क्यों न हो जाये, वीरता का आभूषण तो क्षमा ही है। अत: क्षमा का गुण जीवन में लाने का भी हमें प्रयास करना चाहिए।

इस प्रकार डॉ. योगिनी हिमांशु व्यास ने जीवनमूल्य एवं बोधप्रधान बहुत सारी कथाओं की हमें भेंट दी है। उनके कृतित्व से उनके व्यक्तित्व का हमें परिचय होता है। सरल एवं मधुर व्यक्तित्व के धनी, सदैव उद्यमशील, नित्य कार्यरत, ममता से परिपूर्ण एवं ज्ञान के भंडार डॉ. योगिनी व्यास का साहित्य ही उनका परिचय है, यह शत प्रतिशत सत्य है।

“हर्षदेव माधवकृत तथास्तु काव्य में सामाजिक विद्रूपता का दर्शन”

जानी वन्दना यज्ञप्रकाश
शोधछात्रा, सौराष्ट्र विश्वविद्यालय, राजकोट, गुजरात

- **शोधसार:-**

गुर्जर भूमि के इस कवि ने आधुनिक संस्कृत साहित्य को साहित्य की एक अलग दुनिया में पहुँचाया है। उन्होंने आधुनिक संस्कृत काव्य को नए आयामों और रूपों के साथ विकसित किया है। प्राचीन संस्कृत साहित्य की सीमाओं को लांघने वाले कवि हर्षदेव माधव की अपरंपरागत कविता ही उनका वास्तविक परिचय है। वे आधुनिक संस्कृत साहित्य में हाइकु, सीजो, टांका जैसे काव्य के प्रवर्तक है। अब तक उनके २५ से अधिक काव्य संग्रह उपलब्ध है। उनके उल्लेखनीय काव्य संग्रहों में ‘आसीच्च मे मनसि’, ‘मृगया’, ‘अलकनंदा’, ‘निष्क्रान्ताः सर्वे’, ‘तव स्पर्शे स्पर्शे’, ‘भावस्थिराणी जननान्तरसौहृदानि’, ‘तथास्तु’ आदि है। हाइकु, टांका, सीजो, लघु कथाएँ, अछान्दस कविताएँ और ग़ज़लें उनकी कविता की पसंदीदा विधाएँ है। उनकी कविता में आधुनिकता के पर्याय है। ग़ज़लों में उनकी भावनाओं को विशेष रूप से उजागर किया गया है। उनके कई काव्य संग्रहों को सर्वश्रेष्ठ पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है। उन्होंने अत्यंत आधुनिक शैली में सात सर्गों में ‘बृहन्नला’ नामक महा खण्डकाव्य लिखा है। सामान्य आदमी की मनोवैज्ञानिक समस्याओं का समाधान करना कवि का स्वभाव है। इसलिए उनकी भावनाओं को राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार किया गया है। उनके पैर हमेशा वर्तमान में रहे है। हर्षदेव माधव की कविताओं की सबसे अधिक आलोचना हुई है।

उन्होंने भारत की सर्वश्रेष्ठ संस्कृत कविताओं का अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अनुवाद किया है। इसके अलावा उनकी कविता को अमेरिका में प्रकाशित 'इंटरनेशनल पोएट्री' में भी स्थान प्राप्त की है। उनकी कविता का अन्य कवियों और आलोचकों द्वारा चार भारतीय भाषाओं- पंजाबी, उड़िया, कश्मीरी, मलयालम में अनुवाद किया गया है। इस प्रकार इस कवि ने एक सराहनीय कार्य किया है जिससे गुजरात का सीना गर्व से तन जाता है।

- **हर्षदेव माधव का जीवन:-**

डॉ. हर्षदेव माधव का जन्म सौराष्ट्र के भावनगर जिले के वरतेज गाँव में २०-१०-१९५४ में हुआ था। साहित्य-प्रेमी माँ ने सम्राट हर्षवर्द्धन के नाम पर सुन्दर नाम 'हर्षवर्धन' दिया, जो बाद में 'हर्षदेव' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। माता नंदनबहन और पिता मनसुखलाल जानी की चार संतानों में से वे तीन भाई है, जिसमें जनार्दनभाई, भरतभाई और हर्षदेवभाई और सबसे छोटी बहन का नाम हर्षदाबहन है।

उन्होंने अपनी प्राथमिक शिक्षा वरतेज प्राइमरी स्कूल से ली। उन्होंने अपनी हाई स्कूल की शिक्षा (ओल्ड एसएससी) १९७१ में कोलियाक माध्यमिक शाला, कोलियाक से पूरी की। उन्होंने १९७५ में सौराष्ट्र विश्वविद्यालय से एक बाहरी छात्र के रूप में कला स्नातक की उपाधि प्राप्त की। पालिताना में एक टेलीग्राफ कार्यालय में काम करते हुए उन्होंने १९८१ में सौराष्ट्र विश्वविद्यालय से संस्कृत में प्रथम रैंक के साथ मास्टर ऑफ आर्ट्स पूरा किया, और बाद में एच.के. आर्ट्स कॉलेज अहमदाबाद में व्याख्याता बन गए। उन्होंने १९८३ में गुजरात विश्वविद्यालय से बी.एड और १९९० में पीएच्.डी. पूरी की। उन्होंने अपने शोध कार्य "मुख्य पुराणमां शाप अने तेनो प्रभाव" विषय पर किया। उन्होंने २९ अप्रैल १९८५ में श्रुति जानी से शादी की और उनका एक बेटा रुशिराज जानी है।

- **साहित्य सर्जन:-**

उन्होंने प्रतिज्ञा की कि वे संस्कृत को एक प्रमुख भाषा बनायेंगे और आधुनिक काव्य रचकर दिखायेंगे और वास्तव में हर्षदेव माधव ने ऐसा किया है और साधक का मानना है कि वे **'साहसी श्रीः प्रतिवसति'** के न्याय में बहुत सफल भी हुए है। उन्होंने संस्कृत को स्वर्ग के देवताओं की भाषा के बजाय पृथ्वी की मानव भाषा के रूप में स्थापित किया। हर्षदेव ने बड़ी निष्ठा से संस्कृत में साहित्य की रचना की और धन, सम्मान, प्रसिद्धि आदि के व्यक्तिगत स्वार्थों के बारे में सोचे बिना माँ शारदा के मंदिर में वाल्मीकि और व्यास आदि द्वारा रचित संस्कृत साहित्य की ज्योति को प्रज्वलित रखा। कहानी लिखना, कविता, नाटक निर्देशन, चित्रकाम, पत्राचार आदि उनके शौक के विषय रहे है। निरंतर पढ़ना और लिखना इस कवि की स्वतंत्र पहचान है। आधुनिक संस्कृत काव्य साहित्य में एक ताज़ा नया मोड़ श्री हर्षदेव माधव के काव्य में एक नया आविष्कार मिलता है। कवि मानो उन लोगों को दिखाना चाहते है जो संस्कृत को मृत भाषा कहते है:

"कवितायाः /प्रसवक्षमतां ज्ञातुम् /अहं स्वीयं विसृजाम्यमाघवीर्यम्।"[1]

गुजरात और भारत के संस्कृत कवियों में उनका नाम प्रथम पंक्ति में आता है। गुजराती साहित्य में जो बदलाव सुरेश जोशी ने लाया या अंग्रेजी साहित्य में जो बदलाव बोडेलेयर ने किया, कुछ-कुछ वैसा ही बदलाव आधुनिक संस्कृत कविता में कवि हर्षदेव की कविताओं ने हासिल किया है परन्तु बोडेलेयर का विस्तार कवि हर्षदेव में नहीं मिलता। उनका भारतीय संस्कारित मन आज भी एक गौरवशाली उज्ज्वल प्रभात की तलाश में है। संस्कृत साहित्य के विद्वान आलोचकों ने श्री हर्षदेव की कविता का विश्लेषण करते समय इसका स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है:

"Name of some of the eminent multilingual poets with creative writings in Sanskrit to their credit are such as Maharshi Aurobindo Kumar Buttacharya and Harshdeva Madhava."[2]

इसके उपरांत कई कविओं के साथ हर्षदेव माधव का वर्णन मिलता है। उन्होंने १३वें विश्व संस्कृत सम्मेलन, एडिनबर्ग और १४वें विश्व संस्कृत सम्मेलन क्योटो में कवि सम्मेलन में भाग लिया था। हर्षदेव माधव का साहित्य सर्जन बहुत बड़ा है। आधुनिक संस्कृत साहित्य में एक ताज़ा नया मोड़ एक नया आविष्कार श्री हर्षदेव माधव की कविता में दिखाई देता है। डॉ. हर्षदेव माधवने भावपक्ष और कलापक्ष पर साहित्य की रचना की है। समकालीन मूर्धन्य कवि अभिराज राजेन्द्र मिश्र हर्षदेव माधव को "हर्षदेव वाग्देवता के अधिष्ठाता" कहते है।

"नव्यसंवेदनैः काव्यैर्वचोभङ्ग समन्वितैः।
हर्षदो वाग्धिष्ठात्र्या हर्षदेवो न संशयः।।"

हर्षदेव माधव को २००६ में 'तव स्पर्शे स्पर्शे' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है, इसके उपरांत भी कई पुरस्कार प्राप्त हुए है। उनका काव्यसंग्रह-२५, नाट्यसंग्रह-२, उपन्यास-२, आधुनिक संस्कृत विवेचनग्रन्थ-१, संगृहीत कविता संचय-३, विवेचन संग्रह-६, अनुवादित कार्य-२, हिन्दी काव्यसंग्रह-१, गुजराती काव्यसंग्रह-५, गुजराती कहानीसंग्रह-१, वैदिक साहित्य पर ग्रन्थ-२, आर्ट ऑफ लीविंग पर ग्रन्थ-२, तन्त्रशास्त्र पर ग्रन्थ-६, विशिष्ट विषयों पर संपादन-८, अन्य के साथ संपादन-७, अनुवाद संपादन-२, सम्भाषण, अध्ययन एवं अध्यापन के विविध ग्रन्थ-७, संस्कृत व्याकरण पर ग्रन्थ-७, बहुभाषी शब्दकोश-४ इत्यादि पर कई विषयों पर ग्रन्थ प्राप्त होते है।

- **हर्षदेव माधवकृत तथास्तु काव्य का परिचयः-**

आधुनिक राष्ट्रकवि, अनेक सम्मानों और पुरस्कारों से अलंकृत, संस्कृत साहित्य के निरंतर उपासक और आधुनिक संस्कृत सृजन के क्षेत्र में निरंतर प्रयोगशील गुजरात के संस्कृत कवि डॉ. हर्षदेव माधव की हास्य कविताओं का संग्रह 'तथास्तु' यह एक

व्यंग्यात्मक संरचना है। इसका संकलन प्रथम संस्करण में वर्ष २०१२ में अहमदाबाद के पार्श्व प्रकाशन से प्रकाशित हुआ है। इस संकलन के लेखक डॉ. हर्षदेव माधव है। इस संकलन की दो विशेषताएँ विशेष ध्यान आकर्षित करती है। पहली विशेषता तो यह है कि इसका संपादन भारत के प्रसिद्ध आधुनिक संस्कृत रचनाकार नारायणदास ने किया है। इस संग्रह के अंत में डॉ. हर्षदेव के कार्यों की सूची संस्कृत में प्रस्तुत की गई है और तथास्तु के बारे में उनकी शिक्षाएँ संस्कृत में व्यक्त की गई है।[3] इस संग्रह की एक और विशेषता यह है कि इस खंड का स्वागत दृग्भारती इलाहाबाद के संगठन सचिव डॉ. उमेशदत्त भट्ट द्वारा लिखा गया है। आधुनिक संस्कृत हास्य कविताओं में कभी हास्य और कभी-कभी सीधे व्यंग्य के पीछे भी एक चित्रण होता है। यह बात 'तथास्तु' की सभी कविताओं में विशेष रूप से स्पष्ट है।

'तथास्तु' संकलन में कुल ३४ रचनाएँ शामिल है। हास्य कविताओं की शुरुआत 'नमामि' से होती है और वह यात्रा 'भाति ते भारतम्' तक चलती है। इसमें सशक्त काव्यप्रतिभा, प्रवाहपूर्ण भाषा और गीतकारिता का त्रिवेणी संगम रचा गया है। 'तथास्तु' की कविताओं का अनुमान पुस्तक के आवरण को देखकर लगाया जा सकता है। तथास्तु संकलन में आज के व्यस्त जीवन, विषम परिस्थितियों, स्वार्थ साधन की अंधी दौड़ का प्रत्यक्ष चित्रण देखने को मिलता है। प्रस्तुत काव्यसंग्रह में ३४ विषयों पर लिखा गया है, जो इस प्रकार है-

(१)नमामि (२)शठस्तोत्रम् (३)रिपुवन्दना (कामः) (४)रिपुवन्दना (क्रोधः) (५)रिपुवन्दना (मोहः) (६)रिपुवन्दना (मदः) (७)पत्नीकवचम् (८)मन्दिरस्थापनं वरम् (९)भवनिर्मातुः सामर्थ्ययोगः (१०)चौर्यप्रशंसा (११)कविसमवायः (१२)विविधोपचारपूजा (१३)सेवाकर्मणि स्थितप्रज्ञः (१४)तथास्तु (१५)आधुनिके कुरुक्षेत्रे (१६)दाउदभक्तस्य लक्षणानि (१७)सर्वकारसेवकलक्षणानि (१८)नवनवो धूर्तविभूतियोगः

(१९)महाविद्यालयः (२०)यास्यत्यद्य (२१)परीक्षासिद्धियोगः (२२)क्रीडाक्षेत्रे कुरुक्षेत्र (२३)पत्रकारता (२४)हास्यवन्दना (२५)भज आनन्दम् (२६)नेतुर्नामस्तोत्रम् (२७)द्रव्यप्रशंसा (२८)श्रीबाँम्बमहाशयः (२९)चलदूरभाषः (३०)डोलारोङ्ग्स्ति महाप्रभुः (३१)श्वसूराधिपतेरखिलं मधुरम् (३२)श्वश्रूकृतं वधूस्तोत्रम् (३३)पुत्रवधूकृतं श्वश्रूस्तोत्रम् (३४)भाति ते भारतम्

उपरोक्त कविताओं में डॉ. हर्षदेव माधव ने भारत की वर्तमान परिप्रेक्ष्य का उल्लेख किया है। कवि भारत की सामाजिक स्थिति एवं दृष्टिकोण, भाषावाद, आतंकवाद, शैक्षिक दृष्टिकोण, जल प्रदूषण, आर्थिक दृष्टिकोण, राजनीतिक दृष्टिकोण, शहरी जीवन की समस्याएँ, दहेज प्रदूषण, महिलाओं पर अत्याचार, पारिवारिक दृष्टिकोण आदि पर व्यंग्य और हास्य के माध्यम से सत्य का उल्लेख उन्होंने 'तथास्तु' में किया है। श्री हर्षदेव माधव ने अपनी अद्वितीय रचनात्मकता से आधुनिक संस्कृत साहित्य में एक साहसी कवि का अदम्य उदाहरण प्रस्तुत किया है।

- **हर्षदेव माधवकृत तथास्तु काव्य में सामाजिक विद्रूपता का दर्शन:**

आधुनिक समाज के महान कवि हर्षदेव माधवने इस कविता संग्रह में समाज की वर्तमान स्थिति का एक सुंदर उदाहरण प्रस्तुत किया है। टी.वी. चैनलों के माध्यम से युवाओं और युवतियों का व्यवहार बदल रहा है। इसका वर्णन करते हुए कवि कहते है कि-

"नग्नता यत्र चित्रावली संस्तुत।
सेक्स गीतस्वरैर्गीयते वासना।
वृतपत्राण्यपि त्यकल्लजानि च
टी वी चेनलमयं कामुकं भारतम्।।"[4]

आज के युवाओं के लिए यहां खूबसूरत व्यंग्य के साथ एक चेतावनी भी है। यहाँ टी वी चेनलयम् एक ऐसा खूबसूरत प्रयोग किया है। हमारे भारतीय ऋषि वात्स्यायन ने ही पूरी दुनिया को

'कामशास्त्र' का ज्ञान दिया, लेकिन उन्होंने 'काम' को इस तरह प्रस्तुत किया है, जो धर्म का विरोधी है, लेकिन आज आधुनिकता और सुधारवाद के नशे के नाम पर यह कैसा कारोबार चल रहा है?

'तथास्तु' के 'नमामि' काव्य में खल को प्रणाम किया गया है। 'दुर्जनं प्रथमं वन्देत्' कवि ने इस प्राचीन परंपरा का अनुसरण किया है। यह काव्य 'गोविन्ददामोदरस्तोत्र' काव्य की शैली में रचा गया है। कवि शठ को प्रणाम करते हुए कहते है-

"लत्ताप्रहाराय पदारविन्दं गालीप्रदानाय मुखारविन्दम्।
प्रयोजयन्तं च करारविन्दं मुष्टि खलं नमामि।।"[5]

इस प्रकार लात मारने के लिए पादपद्म को, गाली प्रदान करने के लिए मुखपद्म को, मुष्टि प्रहार के लिए करपद्म को प्रयुक्त करने वाले खल को नमस्कार किया गया है। कवि ने इस कविता में 'नमामि' शीर्षक दिया है, परंतु उन्होंने 'नमामि' का प्रयोग केवल प्रथम तीन पद्यों में ही किया है। अंतिम दो श्लोकों में आज की विषम एवं मादक स्थिति का चित्र प्रस्तुत किया गया है। यह एक आधुनिक हास्य-व्यंग्य कविता है। उनका दृढ़ विश्वास उनकी शैली से दिखाई देता है।

"हस्तारविन्देन मुखे तमालं भृशं भृशं च विनिवेशयन्तम्।
पुरे चतुष्के ह्यलसं शयानं पदारविन्देन च मे नमामि।।"[6]

यहाँ पाद वंदन ही आधुनिकता है।

"सूचीप्रहारेण रथाङ्गश्रोणिं द्रव्येण रम्यं ह्रदयारविन्दम्।
तिक्तौषधैर्यो वदनारविन्दं दुनोति तं वैद्यवरं नमामि।।"[7]

यहाँ कवि जिसके बिना वह अब जीवित नहीं रह सकता ऐसे वैध को नमस्कार करता है। लोगों के बटुए चुराने वाले व्यक्ति को लोग पकड़कर पुलिस के हवाले कर देते है और हत्या, चोरी और यहाँ तक कि देशद्रोह करने वाले नेता आसानी से खुलेआम घूमते है। कवि यहाँ अंतिम पद्य में कहता है कि कवि अपना समय अपने मुख कमल को देखकर व्यतीत कर रहा है। इस प्रकार यह कविता पारंपरिक 'नमस्कार' करनार कविताओं से अलग, हास्य-व्यंग्यात्मक और विशेषकर आज के समाज की विविधता को दर्शाती है।

शठस्तोत्रम् काव्य 'शिवपंचाक्षरस्तोत्र' शैली में रचित काव्य है। यहाँ विभिन्न विशेषणों से 'शठ' पुरुष की पहचान करने का सचेतन प्रयास किया गया है। साथ ही कवि का शठ के प्रति क्रोध भी देखने को मिलता है-

"नागेन्द्रहाराय महाविषाय धृष्टाय दुष्टाय सदा खलाय।
वक्राय वाचा विषमेक्षणाय तस्मै नमो भद्र! नमः शठाय।।"[8]

इस कविता में भी पांच चरणों में विभिन्न विशेषणों के साथ 'शठ' का परिचय दिया गया है। नेता के रूप में तथाकथित विद्वान समाज की सेवा का व्रत लेने वाले गीदड़ों की तरह है। जो सदैव सन्मार्ग का विरोध करते है। कवि उस 'शठ' को नमस्कार करता है जो छोटे-छोटे पुरस्कारों से विभूषित है और अपने नाम की महिमा के लिए सदैव प्रयत्नशील रहता है। जबकि अंतिम फलश्रुति दर्शक श्लोक में कहा गया है कि यदि कोई शठ के साथ रहकर पाप करने वाले इस शठस्तोत्र का पाठ करता है, तो उसे शठप्रति का लाभ मिलेगा और वह शठ के साथ गिना जाएगा। मनुष्य के सबसे बड़े शत्रु षडरिपु है। काम, क्रोध, मोह और मद ही मनुष्य के शिव पंथ के शत्रु है। इसलिए कविने इन चारों पर काव्य रचना की है।

पहला 'रिपुवन्दना काम' इस नाम का व्यक्ति शत्रु जाति का होता है। यह काव्य 'हिरण्यगर्भसुक्त' शैली में रचा गया है। कविता की शुरुआत इस प्रकार है-

"कामः सकाम: समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमा तस्मै कामाय प्रियया नमोङ्स्तु।।"[9]

इस कविता में टी.वी. काम के होल सेलर डीलर और उसके रिटेलर सेलर के रूप में टी.वी. उपरोक्त प्रत्येक विज्ञापन गिना जाता है। वर्तमान में टी.वी. चैनलों पर सेक्स स्केण्डेल, काम की असीमित और अनियंत्रित गति पर व्यंग्य के माध्यम से कवि ने अपना गुस्सा जाहिर किया है। काम के कारण दुनिया कई दुर्घटनाओं से त्रस्त है। इसलिए कवि कहते है-

"कौमार्ये यान्ति मातृत्वं स्वल्पे वयसि निस्त्रपम्।
यौवने यान्ति प्रौढत्वं दुराचारैश्च कन्यकाः।।"[10]

लड़कियों को अपने प्रेमी और पति के अलावा किसी अजनबी द्वारा छेड़छाड़ किए जाने पर कोई शर्म या डर नहीं है। अंत में कवि तीखा व्यंग्य करते हुए कहते है कि-

"द्रुतवेगस्य मार्गोऽङ्स्ति कामो यानानि प्राणिनः।
कोटिदुर्घटनाग्रस्तं कामेनोद्दीपितं जगत्।।"[11]

'क्रोध' कविता में हंसी के साथ-साथ व्यंग्य भी देखने को मिलता है। कविता के आरंभ में कवि कहता है कि-

"विना पैट्रोल द्रव्येण विना धूमेन प्राणीनः।
दह्यन्ते नितरां तस्मै नमः क्रोधाय वह्नये।।"[12]

कविने अलग-अलग व्यक्तियों द्वारा अलग-अलग परिस्थितियों में पैदा होने वाले क्रोध का अलग-अलग प्रकार और अलग-अलग रंग में वर्णन किया है। संपूर्ण काव्य गीता शैली का अनुसरण करता है।

"नियतं कुरु क्रोध त्वं क्रोधो ज्यायान् हि संयमात्।
नंक्ष्यन्ति शत्रवस्ते वा शीघ्रं त्वं मृत्युमष्यसि।।"[13]

इस कविता में कवि ने शीघ्र मृत्यु के लिए क्रोध आवश्यक है, इस प्रकार अपनी पीड़ा पर व्यंग्य करते हुए कहा है। 'मोह' कविता में कवि कहते है कि, द्रव्य में जिसका मोह है, वह अतृप्त है। कीर्ति में लोलुप है, रूप में दिवान्ध है और प्रभुत्व का उत्तेजक है। इसलिए कवि ने उन लोगों को उजागर किया है जो इन सभी प्रलोभनों के आगे झुक जाते है।[14] 'मद' कविता में 'मदोन्मतम् जगत सर्वम्' की आधुनिक पीड़ा को कवि ने हास्य व्यंग्य के माध्यम से व्यक्त किया है। कवि ने आधुनिक समाज के स्पष्ट चित्र भी दर्शाये है। जैसे कि-

"मदान्विता निदाधे च गर्दभा गानपण्डिताः।
पुलिसारसर्वकालेषु भ्रमन्ति मदधुर्णिताः।।"[15]

'चौर्य प्रशंसा' कविता में लघुचोर और चोर गुरु के बीच संवाद को 'किं कर्म किं अकर्म' की गीतात्मक शैली में दर्शाया गया है। लघुचोर चोरगुरु को चोर किसे कहते है? और अचोर किसे कहते है? यह बताने का अनुरोध करता है। यहाँ चोरगुरु कहते है-

"चौर्यं यज्ज्ञायते लोकैः पुलिसैश्च प्रकाश्यते।

वृतपत्रैश्च कुख्यातं कीर्ति प्राप्नोति सच्छवि।।”[16]

लेकिन फिर इस संसार में कौन चोर नहीं है, यह कहकर चोर गुरु पत्नी, कामी, परिक्षानिपुण, काव्य चोर, पत्रकार, सरकार, साधुलोक इन सभी की चोरी का पर्दाफाश करता है। यहाँ गीता का ‘स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धि लभते जनः’ का परिचय दिया गया है।

“स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।
चौर्यं स्वभावजं सिद्धि कृत्वा सिद्धिभवाप्सयसि।।”[17]

आज एक सभ्य और नीतिमत्ता का देश असभ्य और अनैतिक मार्ग को अपना रहा है जिसे यहाँ कविने स्पष्ट रूप से बताया है। ‘बच्चे भारत का भविष्य है’ लेकिन आज के बच्चे देखे तो-

“प्राप्त ‘कोकां’ पयस्त्यज्यते बालकैः।
‘पेप्सि पाने’ विमूढं रतं भारतम्।।”[18]

कवि ने यह कटु सत्य दर्शाया है कि इस भारत का भविष्य आज कोका-कोला और पेप्सी में रत है। जैसे-जैसे युवाओं में नशे की मात्रा बढ़ती जा रही है। कवि का हृदय इससे चिंतित है। वे अपना दुःख जाहिर करते हुए कहते है कि-

“गूटखानां’ सदा सेवनाद्रूगणता।
धूमवर्त्या शरीरं पुनर्दुर्बलम्।।
मद्यपानेन मृत्युः प्रहारोत्सुकः।
कर्मभूस्ते ‘तमाखु’ हतं भारतम्।।”[19]

एक समय भारत ‘धर्मभूमि’ और ‘कर्मभूमि’ कहा जाता था। लेकिन आज उसकी दुर्दशा हो गई है। भारत की सबसे बड़ी समस्या जनसंख्या वृद्धि है। जैसे कि-

“लोकसम्मर्दसंक्षोभिता व्याकुला
रेलयात्रा विना चीटिकां भूयते।
वायुयानेन यात्रा च नैव स्मृता
लोकयानेषु ते लम्बितं भारतम्।।”[20]

भारत लगातार जनसंख्या वृद्धि से पीड़ित है। यहाँ गाड़ियों में बिना टिकट सफर करने वाले लोग रहते है। हवाई यात्रा तो दूर की बात है, यहाँ के लोगों को लटककर ही यात्रा करनी पड़ती है।

कवि हास्य के विषय में कहते है कि हास्य तुम्हारा शस्त्र है, और प्रसन्नता तुम्हारा राज्य है। मर्त्यलोक केवल हास्य लोक है। स्वर्गलोक तो कामों का भोगलोक है, जो शाश्वत नही है।

"हास्यमेवास्ति ते शस्त्रं राज्यं तेङ्स्ति प्रसन्नता।
मर्त्यलोको मनो पुत्रः! हास्यलोकोङ्स्ति केवलम्।।"[21]

इस प्रकार यहाँ संचित हास्य कविताएँ लगभग व्यंग्यात्मक है। इस पैरोडी ने प्राचीन स्तोत्रों और आख्यानों के उन्हीं शब्दों और शब्दावली का अनुकरण करके आधुनिक समाज की विडंबनाओं पर कुशलता से प्रहार करना शुरू किया। लाखों प्राचीन कविताओं में समसामयिक विश्व की विडम्बनाओं के वर्णन की उपस्थिति कहीं अधिक असंगति दर्शाने वाली हँसी पैदा करती है। हर्षदेव माधव की व्यंग्य पद्धति कोमल होते हुए भी अभिव्यक्ति की शक्ति के कारण कठोर हो जाती है। व्यंग्यात्मक शुभकामनाओं से आच्छादित कविताओं की हँसी सामाजिक जीवन के हर कोने में व्याप्त विकृति पर हँसती है। जो लोग इंटरनेट के शौकीन है उनके लिए क्या दुर्लभ नहीं है? सरकारी कर्मचारियों की सेवा के प्रति निरंतर उदासीनता, दाउद भक्तों की विशेषता, मूर्ख अमीर लोगों द्वारा आनंद की पूजा, दुनिया में छद्म दिमाग फैलाने के लिए बाध्य मोबाइल डिवाइस, डॉलर का अनुसरण करने वाले भारतीय यहां महान दृश्य है जो दुनिया की विभिन्न प्रकार की विकृतियों, जैसे शुरुआत की अनुपस्थिति, निर्भरता और निर्भयता पर हंसाते है। कभी-कभी कवि अपना व्यंग्य, अपना औचित्य या मारक स्वभाव नहीं छोड़ता। कभी टेढ़ी, कभी घुमावदार, कभी मीठी, फिर भी हर जगह ईमानदार, इन कविताओं की विशेषता है- जैसा कि कवि स्वयं कहते हैं- टेढ़ी, घुमावदार, मधुर, ईमानदार और नरम। दुख के सागर में, मोती जैसी सफेद मुस्कान ही भगवान शिव को एकमात्र प्रसाद है। कई बार पत्नी के बारे में अनर्गल ढंग से किया गया व्यंग्य इस निर्णय को सिद्ध कर देता है कि ईश्वर निर्बलों का हत्यारा है और घृणित होता है। यहाँ तक कि एक विशेषज्ञ आलोचक भी यह नहीं जान सकता कि इन

उदाहरणों में क्या व्यक्त किया जा रहा है। इस प्रकार हर्षदेव माधवने यहाँ तथास्तु काव्य में सामाजिक विद्रूपता का दर्शन कराया है।

- **उपसंहार:-**

डॉ. हर्षदेव माधव ने अपने रचनात्मक कार्यों के माध्यम से आधुनिक संस्कृत साहित्य में अमूल्य योगदान दिया है। अपनी रचनाओं को सर्जन करके उसने मनुष्य के रूप में अपनी स्पष्ट पहचान बनाई है। गुजराती, हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी ये चार भाषाओं द्वारा उसने अपनी विश्वदृष्टि को काव्यात्मक अभिव्यक्ति दी है। उन्होंने काव्य, नाटक, विवेचनग्रन्थों, व्याकरणग्रन्थों आदि की रचना की और आधुनिक संस्कृत साहित्य को उच्च स्थान दिया। निरंतर पढ़ना और लिखना उनके व्यक्तित्व की पहचान बन गई। वे अपनी काव्य शैली के कारण संस्कृत साहित्य में राष्ट्रीय स्तर पर प्रसिद्ध हो गये। डॉ. हर्षदेव माधव आधुनिक संस्कृत साहित्य के महासागर में एक अनमोल रत्न समान है। उनकी प्रसिद्धि धीरे-धीरे गुजरात, भारत और दुनिया भर में फैल गई है।

संदर्भ-ग्रन्थ-सूची:-

(१) निष्क्रान्ताः सर्वे पृ.- ३०७

(२) R.K.Sharma ‘Indian Literature’ March-April 1991, Ever Flowing Stream p.-142

(३) तथास्तु डॉ. हर्षदेव माधव सं. डो. नारायण दास पार्श्व प्रकाशन अहमदाबाद प्र.आ.-२०१२ पृ.-१७८-१८०

(४) भाति ते भारतम्-१८

(५)नमामि-१

(६) वही-२

(७) वही-३

(८) शठस्तोत्रम्-१

(९) रिपुवन्दना कामः-१

(१०) वही-६

(११) वही-९

(१२) रिपुवन्दना क्रोधः-१

(१३) वही-१०

(१४) रिपुवन्दना मोह-२

(१५) रिपुवन्दना मद-८

(१६) चौर्यप्रशंसा-१

(१७) वही-११

(१८) भाति ते भारतम्-२३

(१९) वही-९९

(२०) वही-२१

(२१) तथास्तु-९-१०

हर्षदेवमाधवस्य कतिपयानां कृतीनां समीक्षा

जगदीशनन्दः

शोधकर्ता, राष्ट्रियसंस्कृतविशवविद्यालयः, तिरुपतिः

उपक्रमः

साम्प्रतिके आधुनिकसंस्कृतसाहित्यजगति विद्यमानेषु संस्कृत-साहित्यकारेषु क्रान्तद्रष्टा, सर्वाधिकप्रयोगशीलः, क्रान्तिकारीकविः, सरस्वत्याः वरपुत्रसदृशः कविः भवति हर्षदेवमाधवः। यः स्वकीयासु संस्कृतकवितासु नूतनशैलीं संस्थाप्य प्रतिष्ठामलभत।

अपारे काव्यसंसारे कविरेव प्रजापतिः।
यथास्मै रोचते विश्वं तथेदं परिवर्तते।।

वस्तुतस्तु कवयः क्रान्तद्रष्टारः भवन्ति। ते यथा इच्छन्ति तथा परिवर्तयन्ति। कालिदासादयः कवयः स्वरचनाः विविधैः छन्दोभिः रचितवन्तः परन्तु मुक्तछन्दसा रचना कतिपयैः आधुनिककविभिरेव कृता। तेषु काव्यकारेषु हर्षदेवमाधवः अन्यतमः।

शोधप्रबन्धस्य सारवस्तु:

हर्षदेवमाधवविरचितेषु काव्येषु समाजचेतना तथा साम्प्रतिके समाजे परिदृष्टानां विविधविशृङ्खलितविषयाणां निराकरणोपायः परिलक्षते। काव्यमाध्यमेन सुख-दुःखयोः चित्रणे कवेः विभिन्ना भङ्गी वर्त्तते। कविः हर्षदेवमाधवः स्वकीयं चिन्तनं वैश्वीकं करोति। येन विश्वस्य भिन्न भिन्न विषयेषु कवेः लेखनी परिव्याप्ता भवति। कदाचित् कविः नारीणां विकासविषये चिन्तयति। नारीणां स्वतन्त्रताविषये कवेः लेखनी वारं वारं समाजं प्रोत्साहयति। समाजस्य वर्णवैशम्यभावं दूरीकर्तुं कवेः प्रयासः अभिनन्दनीयः। धनिकः तथा निर्धनाः इति भावः समाजे पीडां जनयति। अतः धनस्याधारेण व्यक्त्वस्य परिकल्पना मा भवतु इति कवेः विचारः।

अयं कविः महान् दार्शनिकः वर्तते। अतः कवेछ वहुषु रचनासु दर्शनतत्त्वं दुर्गोचरं भवति। मानवजन्म दुर्लभं वर्त्तते। अतः मानवः

एतस्मिन् जन्मनि जीवनस्य मूल्यं जानातु इति कविभावना। मानवीयमूल्यवोधस्य विकासाय कविः बहुधा उपदिशति। सेवा तपस्या भवतु इति कवेः विचारः। तपः उत्तमलक्षपूर्णं भवत्विति कवेः भावना। लक्षं शुद्धं भवत्विति कवेः जिज्ञासा। तदनन्तरमेव परमात्मा-प्राप्तिर्भवतीति हर्षदेवमाधवः सहर्षं प्रतिपादयति।

मदीयेऽस्मिन् शोधप्रबन्धे हर्षदेवमाधवकृतस्य पुस्तकचतुष्टयस्य समीक्षात्मकमध्ययनं विधीयते। हर्षदेवमाधवः बहूनाम् उत्तमोत्तमानां ग्रन्थानां रचयिताऽस्ति। तेषु ग्रन्थेषु **बुद्धस्य भिक्षापात्रे, व्रणो रूढग्रन्थिः, क्षणे क्षणे, स्पर्शलज्जाकोमला स्मृतिः** इत्येतेषां चतुर्णां ग्रन्थानां स्वतन्त्रं वैशिष्ट्यं वर्तते। अस्मिन् शोधप्रबन्धे ग्रन्थचतुष्टयानां साहित्यिकं, सामाजिकं, सांस्कृतिकं चाध्यायनं समीक्षात्मकशैल्या विधीयते। शोधप्रबन्धस्यास्य अध्ययनेन समाजस्य विविधानाम् आलोचितविषयाणाम् आलोचनं ज्ञातुं शक्यते।

हर्षदेवमाधवस्य परिचयः

हर्षदेवमाधवस्य सम्पूर्णनाम अस्ति हर्षवदन-मनसुखलाल-जानी। यस्य जन्म 20 अक्टोवर 1954 तमे वर्षे गुजुरातस्य भावनगरजिल्लायां वर्तेज जनपदे अभवत्। तस्य पितुः नाम श्री मनसुखलाल जानी, मातुर्नाम नन्दन बेन जानी चासीत्। किञ्च 29 अप्रेल 1985 मिते सम्बत्सरे श्रीमती-श्रुति-जानीं विवाहं कृतवान्। अनयोः एकः पुत्रः ऋषिराजजानी नामधेयः।

हर्षदेवमाधवस्य कृतयः

विंशशताब्देः अन्तिमभागे संस्कृतसाहित्यजगति नूतनः आस्वादः समुद्भूतः। यः सर्वथा विलक्षणः किञ्च आनन्दमयः। तस्मिन्नेव समये केचन नूतनाः काव्यरसिकाः संस्कृतजगति आगताः। तेषां प्रचेष्टया संस्कृतकविता नूतना दिक् प्राप्ता। तेषु काव्यरसिकेषु हर्षदेवमाधवस्य काव्यकविताः कृतयो वा सर्वजनादृताः।

संस्कृतकवितासंग्रहः- रथ्यासु जम्बुवर्णानां शीराणाम्, अलकानन्दा, मृगया, वृहन्नला(महाकाव्यखण्ड), निष्क्रान्ताः सर्वे, सुषुम्नायां निमग्ना नौका, शब्दानां निर्मक्षिकेषु ध्वंसावशेषेषु, लावारसदिग्धाः स्वप्नमयाः

पर्वताः, आसीच्च मे मनसि, मृत्युशतकम्, कालोस्मि, मनसो नैमिष्यारण्ये, तव स्पर्शे स्पर्शे, ऋषेः क्षुब्धे चेतसि, क्षणे क्षणे, बुद्धस्य भिक्षापात्रे, स्पर्शलज्जाकोमला स्मृतिः, व्रणो रूढग्रन्थिः प्रभृतयः सप्ततिः सन्ति।

संस्कृतनाटकसंग्रहः- कल्पवृक्षः, मृत्युरयं कस्तुरिमृगोस्ति

संस्कृत उपन्यास- मूको रामगिरिभूत्वा

आधुनिक-संस्कृत-आलोचना-ग्रन्थाः- खदर्पणः, महाकवि माघः

एवं प्रकारेण गुजराती भाषायां केचन आलोचनाग्रन्थाः किञ्च अनुवादितकार्य्याणि, कतिपयानि सम्पादितपुस्तकानि, तंन्त्रशास्त्रस्योपरि शोधपुस्तकानि, बालसाहित्यपुस्तकानि विराजन्ते।

एतेषां चतुर्णां ग्रन्थानां स्वतन्त्रपरिचयः

हर्षदेवमाधवस्य विद्यमानासु कृतिषु **क्षणे क्षणे** नवत्वमुत्पादिका रमणीया च कृतिरस्ति। अस्मिन् पुस्तके पञ्चस्तवकाः सन्ति। प्रत्येकस्मिन् स्तवके भिन्नाः भिन्नाः कविताः विद्यन्ते। तत्र प्रथमस्तवकस्य नाम प्रथमवर्षाः। यत्र षट् कविताः विद्यन्ते। परवर्तिस्तवकस्य नाम गृहिणी भवति दीपशीखा। यत्र त्रयो दश कविताः सन्ति। तृतीयस्तवकस्य नाम मकरपृष्ठे शकल्पं सुखम्। यत्र सप्तदशकविताः विद्यन्ते। चतुर्थस्तवकस्य नाम निनादानां क्षेत्रेषु, यत्र एकादशकविताः सन्ति। पञ्चमस्तवकस्य नाम सेतुबन्धः। यत्र ऊनसप्ततिः कविताः सन्ति। सम्भूयः षोडशाधिकमेकशतं संख्यकाः कविताः ग्रन्थेस्मिन् विराजते।

साहित्यिकमध्ययनम्-

विप्रलम्भशृङ्गाररसस्य प्रयोगः- अस्तित्व तले इत्यत्र नायकः अलकनन्दां स्मृत्वा बिलपति...

हे अलकनन्दे !
कतिपया मे श्वासास्ते वक्षसि सन्ति।
मम कानिचिद् अश्रुणि
प्रवणरहितानि

स्वनेत्रपृष्ठे निहितानि सन्ति।[1].....

उपमालङ्कारस्य प्रयोगः- विजने व्योम्नि इति कवितायां राक्षसस्य रोमराजिं तामिस्रेण सह तुलयन् कविः कथयति-अन्धकारस्य निरवधिः प्रवाहः। राक्षसरोमराजिसदृशं तामिस्रम्।[2]... इत्यादयः।

करुणरसप्रयोगः

पद्मकोषे स्थित्वा भृङ्गः करुणविलापं करोति। यथा-

हे पद्म !
मामाकर्षयित्वा त्वया संकुचितानि पत्राणि।
सुगन्धामन्त्रणं दत्वा
त्वया कारागारं रचितम्।
अयं परिमलो मे चरणेषु निगडत्वं प्राप्तः।[3]

अपह्नुति-अलंकारस्य प्रयोगः

इमे न हस्तरेखाः किन्तु
भाग्यव्याघ्रेण
हस्ते प्रसारिता जालतन्तवः सन्ति।।[4]

अनुप्रासालंकारप्रयोगः

हस्तो हस्ताय मृतः।
हस्तो हस्ताय पाशः।
हस्तो हस्तायामृतम्।
हस्तो हस्ताय गुरुः।[5]

सामाजिकमध्ययनम् **- नारी शिक्षा-** बधूः कथं स्वस्य श्वशुरालयस्य दुःखं स्नानागारं गत्वा स्नानागारमेव स्वस्य पित्रालयं मत्वा रोदिति

---

[1] क्षणे क्षणे पृ- 08

[2] क्षणे क्षणे पृ- 36

[3] बुद्धस्य भिक्षापात्रे पृ - 100

[4] स्पर्शलज्जाकोमला स्मृतिः पृ- 54

[5] स्पर्शलज्जाकोमला स्मृतिः पृ- 55

तस्मिन् विषये कविः दुःखं प्रकटी करोति। यदि नारी शिक्षिता भवति चेत् समग्रः परिवारः शिक्षितो भविष्यति। कविः कथयति-

स्नानगृहं गत्वा गृहक्लेशश्रान्ता वधूः
निःशब्दं रोदिति तदा, स्नानगृहं तस्याः पितृगृहं भवति।[1]

वर्णवैषम्यता – कवेः भावना इयमस्ति यत् वर्णवैषम्यता न स्यात्। अहमस्मि तमिस्रा इत्यस्मिन् पद्ये कविः कथयति- अयं व्रणो ब्राह्मणानां कूपाद् जलमानेतुं

गतयोश्चरणोपराधः।.... भाले यो लक्ष्यते
असवर्णजनेन कृतस्य प्रणयस्य लाञ्छनमस्ति।[2]....

परिवेश चिन्तनम्

कालक्रमेण जनाः अरण्यं विनश्य स्वार्थपूरणाय कथं जीवन्ति इति विषये **रेडलाइट एरिया स्थितस्य स्वगतोक्तिः** इति कवितया कविः सुष्ठतया प्रतिपादयति। यथा-

अत्र सन्ति पुष्पाणामामन्त्रणानि

किञ्च सिंहसंख्यायाः विलुप्ततां दृष्ट्वा कविः विषादं जनयति **प्राणिसंग्रहालये बद्धस्य सिंहस्य विषादः** माध्यमेन। यथा-

मम हुंकारमात्रेण वेपते स्म वनम्
किन्तु अधुना मम हुंकारेण
न चलति तृणमपि।[3]

अनेन प्रकारेण क्षणे क्षणे इति पुस्तके कवेः पर्यावरणचिन्तनं वहुत्र दृश्यते

---

[1] क्षणे क्षणे पृ- 12

[2] क्षणे क्षणे पृ-106

[3] क्षणे क्षणे पृ- 120

अभिराज राजेन्द्र मिश्र कृत अभिनवपञ्चतन्त्र में सामाजिक दृष्टि

विनिता, शोधच्छात्रा & प्रो० पूनमलखनपाल
प्रोफेसर एवं अध्यक्षा, संस्कृत विभाग, रघुनाथ गर्ल्स पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, मेरठ

साहित्य समाज का दर्पण होता है। साहित्यकार जो भी अपने काव्य में वर्णन करता है , वह समाज का ही प्रतिबिम्ब होता है। समाज में होने वाली घटनाएं उसके काव्य में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती हैं। अभिराजराजेन्द्र मिश्र एक प्रतिष्ठित आधुनिक ग्रन्थकार हैं, जिन्होंने अपनी अनेकों रचनाओं से संस्कृत साहित्य को समृद्ध किया है उनकी रचनाओं में अभिनवपञ्चतन्त्र एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। जिसमें कवि ने तत्कालीन समाज का उपस्थापन किया है। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में कार्यरत रहते हुए इन्होंने अभिनवपञ्चतन्त्र के तीन तन्त्रों मित्रसम्प्राप्ति (1985), मित्रभेद (1985), काकोलूकीय(1986) की रचना की। उदयन विश्वविद्यालय डेनपसार ,बाली, इन्डोनेशिया में कार्यरत रहते हुए उन्होंने लब्धप्रणाश (1988) एवं अपरीक्षितकारक (1988) नामक तन्त्रों की रचना की। इसलिए इनकी कथाओं में भारतीय एवं इन्डोनेशिया समाज का चित्रण हमें प्राप्त होता हैं। अभिनवपञ्चतन्त्र की कथाएं यद्यपि आकार में लघुकाय है तदपि उनमें व्यापक परिवेश समाहित हैं। इन कथाओं में भारतीय समाज का जो दर्शन हमें प्राप्त होता है वह अत्यन्त यथार्थपरक है। इनमें तत्कालीन समाज में व्याप्त बुराइयां, धनी-निर्धन की स्थिति, आजीविका के स्रोत, जाति व्यवस्था, नारी स्थिति, राजा-प्रजा, स्वार्थभावना, पारस्परिक स्नेह की भावना यत्र-तत्र दिखाई देती हैं।

समाज में धनी-निर्धन की स्थिति में अत्यन्त भेद था। धनी व्यक्ति अभिमानी, ऐश्वर्ययुक्त तथा निम्नवर्गों का अनादर करने वाले थे। वहीं धनहीन व्यक्तियों को कृमितुल्य समझा जाता था। शाकविक्रेतृपुत्रकथा में धन से गर्वित दुरभिमानी दलेल सिंह की दृष्टि में निर्धन व्यक्ति अपने पूर्वजन्मार्जित पाप को भोगते हैं।[1] वह शाक विक्रेता के पुत्र को अपने पुत्र का सहपाठी जानकर अत्यन्त क्रोधित होता है एवं पत्नी से कहता है- भो भूस्वामी अहम्। सम्पूर्णेऽपि ग्रामे ममाधिकारः। ऐश्वर्यप्रतिष्ठामण्डिताऽपि मम प्रतिवेशिनः सङ्कोचवशान्नायान्ति मत्समक्षम्। अयं तावत् शाकविक्रेतुः पुत्र: मम पुत्रस्य मित्रं सञ्जात:? कथमयं सम्भवति?[2] प्रभूत धन होने पर भी धनी व्यक्तियों में सर्वथा धनलालसा दृष्टिगत होती हैं। दुह्दवणिक्कथा में धनाढ्य वणिक् प्रचुर धन होने पर भी केवल मेरा धन कम ना हो इस पर विचार करता रहता था।[3] वहीं दीनानाथ नामक निर्धन ब्राह्मण धनाभाव से दुःखित अधिक धन की इच्छा से वणिक्पत्नी को मिथ्या पाण्डित्य से ठगता है।[4]

निम्न वर्गों को समाज में आदर की दृष्टि से नहीं देखा जाता था। उनका तिरस्कार किया जाता था। उत्कोचकीटाधिकारीकथा में चकबन्दी अधिकारी अपने घरेलू नौकर चमनलाल को अत्यन्त तिरस्कृत करता है और डांट-फटकार कर घर से निकाल देता है।[5]

समाज में अनेकों बुराइयां व्याप्त थी। भ्रष्टाचार, ठगी, डकैती, स्त्रियों से छेड़छाड़ आदि घटनाएं सामान्य रूप से दिखाई देती हैं। धनी व्यक्ति धन से एवं अपने पद के कारण सुविधानुसार भ्रष्टाचार करते थे। उत्कोचकीटाधिकारीकथा में चकबन्दी अधिकारी अपने उच्च अधिकारी को धन देकर अपनी जन्मतिथि परिवर्तित कराता है।[6] निलम्बित हुए चकबन्दी अधिकारी को जब ज्ञात होता है कि उसके निलंबन का कारण बदरीलाल है तो वह अपने पद का लाभ उठाते हुए ऑफिस से रजिस्टर निकलवाता है और निलम्बन पूर्व सेवाकाल में किसी दिन की तारीख में बदरीलाल के सभी खेत गोमती नदी के

तट पर काट देता है जो उर्वरक नहीं है एवं बाढ़ का भय बना रहता है।[7] दस्युप्रणयकथा[8] में प्रेम सिंह अपने दुराचारों के कारण डाकुओं का राजा बन गया था उसके नाम सुन लेने मात्र से लोग भयभीत हो जाते थे। चोरी, डकैती में लिप्त सरदार सिंह नामक दस्यु भी उसका मित्र बन जाता है। वह चोरी, डकैती के अतिरिक्त स्त्रियों से छेड़छाड़ जैसे असभ्य कार्यों में भी संलग्न था। प्रेम सिंह अपनी बहन के साथ अनैतिक हरकतें करने के कारण सरदार सिंह की हत्या कर देता है। पितृवधिकवधकथा[9] में पुरोहित पुत्र उरुक राजा अमिताङ्ग की हत्या कर उसकी अनिन्द्य रूप सौंदर्य वाली पत्नी रानी दिदिशा से विवाह कर लेता है। यद्यपि कथाओं में अनैतिक कार्य करने वाले वालों का विनाश दिखाकर कवि ने एक सभ्य समाज के लिए शिक्षित किया है।

अर्थ संचय के अनेकों साधन प्राप्त होते हैं। जमीदारों[10] के पास विपुल धनसंपत्ति थी, शम्भु नामक निर्धन शाक बेचकर[11] धन कमाता था, निरञ्जन और उसका मित्र व्यवसाय से प्राध्यापक[12] थे, वणिक् मशीनों एवं दवाओं के व्यापार[13] एवं विशाल हवेली के रिक्त कक्षों को किराए पर देकर उनसे आवास शुल्क[14] लेकर धनार्जन करता था, वेतन भोगी[15] सिपाही, लिपिक आदि भी वेतन से आजीविका चलाते थे। वही दीनानाथ वणिक्पत्नी को मिथ्या पाण्डित्य प्रदर्शित करके दक्षिणा[16] रूप में प्राप्त धन से परम समृद्ध हो जाता है।

नारी के नैतिक एवं गर्हित दोनों रूपों का वर्णन प्राप्त होता हैं। शाकविक्रेतृपुत्रकथा में दलेल सिंह की पत्नी स्वभाव से अत्यन्त कोमल, दयालु एवं दानशीला थी। वह धनी-निर्धन में भेद नहीं करती थी अपितु गुणों का सम्मान करती थी। जब धनान्ध हुआ दलेल सिंह अपने पुत्र की मित्रता निर्धन के पुत्र से होने पर अपनी पत्नी को फटकारता है तब सरल स्वभाव वाली सरला कहती है कि मित्रता में

कुल, जाति की अपेक्षा नहीं की जाती।[17] अन्त में दलेल सिंह भी अपनी पत्नी की बात का सम्मान करता है और दुरभिमान से रहित होता है। इन कथाओं में गृहणी को अतिशय दुस्तर नदी के समान मन को संतप्त करने वाली भी कहा गया है।[18] सुहृदवञ्चनाकथा में वैश्यपत्नी अपने पति के मित्र निरञ्जन के प्रतिदिन घर आ जाने से उद्विग्न हो जाती है और निरञ्जन की अवमानना करती है। जिससे वैश्य अत्यन्त लज्जित होता है और और स्त्री के वशीभूत होकर अभद्र आचरण करने से मर जाना श्रेयस्कर समझता है।[19]

पूजा, अर्चना, तंत्र-मंत्र, व्रत आदि का वर्णन भी तत्कालीन समाज में दृष्टिगत होता है जिसमें मिथ्या पाण्डित्य से मनुष्य की धर्मभीरूता का लाभ उठाते थे। दुहृदवणिक्कथा में वणिक्पत्नी को व्रत-उपवास में संलग्न रहना एवं उसकी धर्मभीरूता का लाभ दीनानाथ उठाता है। वह यावच्छक्य पाण्डित्य और हस्तरेखा विचारादि अभिनय से उसे अपनी विनीत शिष्या बना लेता है। वह उसके घर में कभी सत्यनारायण कथा, कभी हरितालिका, कभी हस्तरेखा विचार, कभी छिपकली के गिरने का प्रायश्चित, कभी कौवा बोलने के कारण की व्याख्या करता और दक्षिणा प्राप्त करता था। ताबीज बनाने, मंत्र जाप करने, अमंगल निवारण, काकबलि हेतु, तांत्रिक क्रिया संपन्न करने हेतु प्रतिदिन धन की मांग करता था।[20] इस प्रकार धार्मिक क्रियाएं जन सामान्य का हिस्सा थी।

पारस्परिक स्नेह की भावना भी समाज में विद्यमान थी। लोग अपने पड़ोसियों के प्रति प्रेम भाव से रहते थे। कृतज्ञशल्लकीकथा[21] में सूकर और साही में पड़ोसियों जैसा प्रेम भाव था। जब साही पर प्राण संकट आता है तो सूकर उसकी प्राणरक्षा करता है और जब सूकर पर प्राण संकट उपस्थित होता है तो साही उसकी सहायता करती है। तेङ्गनाननायककथा[22] में तेङ्गनान अपनी

जाति के सदस्यों के प्रति अत्यन्त प्रेम रखता था। जब राजा उसे पुरस्कृत करने के लिए कहता है तब वह अपने विषय में नहीं अपितु अपने कुटुम्बियों के विषय में विचार करता है कि मेरे कुटुम्ब के सदस्य भूमि और निवास से रहित, भूखे एवं सुखे कण्ठ वाले तथा उदरपूर्ति हेतु एक जनपद से दूसरे जनपद भ्रमण करते रहते हैं इसलिए पुरस्कारस्वरूप कृषिनिवास योग्य भूमि की ही प्रार्थना करनी चाहिए। अपने बुद्धिकौशल से अनेक योजन भूमि प्राप्त करके कुटुम्बियों में यथोचित भूमि वितरित कर देता है।

कुछ कुप्रथाएं भी हमें कथाओं में देखने को मिलती हैं। वृद्धबलिनिवारणकथा[23] में इसी प्रकार की कुप्रथा का वर्णन है जिसमें बालीद्वीपीय व्रातन एवं तेङ्गनान जाति के आदिवासियों का विश्वास था कि वृद्धो के मांसभक्षण से पुत्रों, पौत्रों की जीवनशक्ति बढ़ती है। वे पारिवारिक उत्सव का आयोजन कर वृद्धों को मारकर उनके शरीर के मांस को प्रसाद रूप में ग्रहण करते थे। उसी जाति का एक सहृदय, वृद्धजनों की हत्या का विरोधी नवयुवक अपनी बुद्धि चातुर्य से इस कुप्रथा का अंत करता है।

मनोरंजन के साधनों में सपेरों के द्वारा सर्प को नचाना, दर्शकों को उसके विषदन्त दिखाना, बीन की धुन पर सर्प को सभी दिशाओं में मोड़ना आदि थे। कुछ लोग नेवले का करतब दिखाकर मनोरंजन करते थे जिसमें सीटी बजाने पर नेवले का चिल्लाना, पिछले पैरों पर खड़ा होना, मुंह खोलकर दांत दिखाना, स्वामी का सिर खुजलाना आदि थे। इसी प्रकार कोई वानर नचाता था, कोई भालू। नाकुलिकाहितुण्डिककथा[24] में इसी प्रकार की कला दिखाने वालों का वर्णन प्राप्त होता है ये दिनभर शहर में भ्रमण करते और अपना कौशल दिखाते थे।

बालीद्वीप के वर्णन में राजा, प्रजा, सामंत आदि का वर्णन भी इन कथाओं में दिखाई देता है तेङ्गनानननायककथा[25] में शौर्य और पराक्रम संपन्न बेदुलु नामक राजा के शासन का वर्णन है। वह मन से निर्मल, हृदय से करूण, बाहुबल से अजेय, कोष से कुबेर, वाणी से अत्यन्त मधुर था। सद्‌गुणों के कारण प्रजा उसका अत्यन्त आदर करती थी। मृतभूपोज्जीवनकथा[26] में भी इसी प्रकार के धर्मपरायण, पराक्रमी, शौर्यसंपन्न तथा दैवी शक्ति से युक्त राजा का वर्णन किया गया है। इससे विपरीत भेकभुजङ्गकथा[27] में ऐसे राजा का वर्णन भी हमें प्राप्त होता है जो राजैश्वर्य के मद में गर्वित एवं विद्वान ब्राह्मणों का अनादर करने वाला है, किंतु अन्त में प्राणसंकट आने पर वह कुलपुरोहित के चरणों में प्राणरक्षा की भीख मांगता है तत्पश्चात ब्राह्मण सेवा में स्वयं को अर्पित कर देता है।

उपर्युक्त विवरणों से स्पष्ट है कि अभिराजराजेन्द्रमिश्र ने अभिनवपञ्चतन्त्र में भारतीय समाज का स्वाभाविक चित्रण किया है। जिसमें समानता एवं असमानता, उदारतानुदारता, प्रेम एवं सद्भाव, सहयोग एवं हानि पहुंचाना, भ्रष्टाचार एवं ठगी जैसे मानवीय स्वभाव के विविध गुणावगुण दृष्टिगत होते हैं। सृष्टि की विविधता के समान ही मानव निर्मित समाज भी विविध रूपता से सम्पन्न हैं। इसी का स्वाभाविक चित्रण अभिराजराजेन्द्र मिश्र के अभिनवपञ्चतन्त्र में प्राप्त होता है जो कवि की सूक्ष्मावगाही दृष्टि का तथा चित्रण कौशल का द्योतक है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची:-

1. अभिनवपञ्चतन्त्र, मित्रसम्प्राप्ति, पृष्ठ 20
2. वहीं पृष्ठ 21
3. अभिनवपञ्चतन्त्र, मित्रभेद, पृष्ठ 39
4. वहीं पृष्ठ 40

5. अभिनवपञ्चतन्त्र, काकोलूकीय, पृष्ठ 40
6. वहीं पृष्ठ 54
7. वहीं पृष्ठ 59
8. अभि. प., मि.भे., पृष्ठ 44
9. अभि. प., अपरीक्षितकारक , पृष्ठ 89
10. अभि. प. , मि. स., पृष्ठ 20
11. वहीं पृष्ठ 20
12. अभि. प. , मि.भे., पृष्ठ 32
13. वहीं पृष्ठ 39
14. वहीं पृष्ठ 40
15. वहीं पृष्ठ 40
16. वहीं पृष्ठ 41
17. अभि. प., मि. स., पृष्ठ 22
18. अभि. प., मि. भे., श्लोक 1
19. अभि. प., मि. भे., श्लोक 5
20. अभि.प., मि. भे., पृष्ठ 42
21. अभि.प., मि.स. , पृष्ठ 16
22. अभि. प., ल. प्र., पृष्ठ 64
23. वहीं पृष्ठ 70
24. अभि. प., काक., पृष्ठ 61
25. अभि. प., ल.प्र., पृष्ठ 64
26. वहीं पृष्ठ 74
27. अभि. प., अ., पृष्ठ 83

प्रो. भागीरथि नन्द का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्त्व

विनिता पारस, शोधच्छात्रा & प्रो. पूनम लखनपाल
प्रोफेसर एवं अध्यक्षा
संस्कृत विभाग, रघुनाथ गर्ल्स पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, मेरठ

संस्कृतभाषा की ज्ञानपरम्परा का प्रवाह वैदिककाल से आरम्भ होकर वर्तमानकाल तक अक्षुण्ण रहा है। इस ज्ञान परम्परा में सांस्कृतिक-सामाजिक-धार्मिक-आध्यात्मिक साहित्य के तत्त्वों का उल्लेख प्रत्येक पद पर दृष्टिगत होता है। आधुनिक साहित्यकार प्रो. भागीथिनन्द का योगदान इसमें अमूल्य है।

व्यक्तित्व:

प्रो. भागीरथिनन्द का जन्म उड़ीसा राज्य के क्योंझर जिले के अन्तर्गत मरुआ गांव में 13 अप्रैल 1966 को हुआ। इनके पिता स्व.श्री बाइधर नन्द तथा माता श्रीमती हेमलता देवी है। नन्द जी अपने माता-पिता की 9 संतानों में मध्यम संतान है। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा बी.सी. उच्च विद्यालय बाहारिपुर, उड़ीसा में हुई। साहित्याचार्य की परीक्षा 1990 में सदाशिव विश्वविद्यालय, उड़ीसा से उत्तीर्ण की। 1991 में शिक्षाशास्त्री की उपाधि भी सदाशिव विश्वविद्यालय, उड़ीसा से प्राप्त की। विद्यावारिधि की उपाधि 1996 में श्रीहरिसिंहगौरविश्वविद्यालय से प्राप्त की तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से 1991 में जे.आर.एफ. की परीक्षा में सफलता प्राप्त की।

आधुनिक कविवर भागीरथिनन्द महोदय का साहित्य समाज में अमूल्य योगदान है जिसके लिए महोदय को अनेक पुरस्कार एवं सम्मान से अलङ्कृत किया गया है। उनमें अनुवाद पुरस्कार 2012

साहित्य अकादमी, दिल्ली से, व्यासश्री सम्मान-वेदव्यासअनुसंधानसंस्थान, राऊरकेला से, युवाविपश्चित् सम्मान-श्रीलालबहादुरशास्त्री राष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालय, नई दिल्ली से, संस्कृतभूषणसम्मान-अखिलभारतीयसंस्कृतसम्मेलन, नई दिल्ली से, नाल्कोकालिदास पुरस्कार 2019 में नाल्को, इंडिया से तथा प्रतिभा सम्मान 2019 में प्रतिभा फाउण्डेशन, भुवनेश्वर से प्राप्त किए हैं।

कविवर प्रो. भागीरथिनन्द वर्तमान समय में श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालय में शैक्षणिक पीठाध्यक्ष तथा आचार्य, संस्कृत विभाग में कार्यरत है एवं उनके निर्देशन में अनेक शोधच्छात्र शोधकार्य पूर्ण कर चुके हैं तथा अनेक छात्र शोधरत हैं। प्रो .भागीरथिनन्द ने अनूदित रचनाओं के साथ-साथ मौलिक रचनाओं का भी सृजन किया है। उन्होंने अन्य भाषा में रचित ग्रन्थ का संस्कृतानुवाद करके संस्कृतानुरागियों को उपकृत किया है। उनके द्वारा किए गए अनुवाद से एक ओर संस्कृत साहित्य की समृद्धि हुई है, दूसरी ओर संस्कृतज्ञों के लिए संस्कृतानुवाद लेखन की नवीन दिशा भी विकसित एवं समृद्ध होगी।

कर्तृत्त्व:

प्रो.भागीरथिनन्द ने मौलिक रचना, कथासंग्रह, अनूदित ग्रन्थ, सम्पादित ग्रन्थ, छात्रोपयोगी पुस्तकों तथा अनेक शोध पत्र-पत्रिकाओं का लेखन कार्य किया है। उनके वर्तमान समय में 25 ग्रन्थ तथा 75 से अधिक शोध पत्रों का प्रकाशन हो चुका है। उनकी रचनाओं को निम्न श्रेणियां में विभक्त किया जा सकता है।

मौलिक, अनूदित, सम्पादित, शोध पत्र-पत्रिकाएं, छात्रोपयोगी प्रतियोगी पुस्तकें, कक्षा 5 से कक्षा 8 तक के लिए पुस्तकें इत्यादि।

*** मौलिक रचनाएं**

(1.) साहित्यरत्नाकरमीमांसा- इस ग्रन्थ में संस्कृत साहित्य के काव्यशास्त्रीय सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। इस ग्रन्थ का विभाजन 10 तरङ्गों में किया गया है। इसमें साहित्य रत्नाकर प्रणेता श्रीधर्मसूरि के रसाभिव्यक्ति सिद्धान्त का वर्णन किया गया है। ग्रन्थ की भूमिका में लिखा गया है- आकीटब्रह्मपर्यन्तं चेतनेषु सर्वेषु व्यापकतमं वस्तु रसो नाम।[1] रस को काव्यशास्त्रीय षट्सम्प्रदायों में सबसे मुख्य माना गया है। काव्यशास्त्रीय ज्ञानपरम्परा में मम्म्ट-विश्वनाथ-हेमचन्द्र-विद्यानाथ-विद्याधर आदि मुख्य हैं इसी परम्परा को धर्मसूरि ने भी स्थापित किया है।[2] रसवादी अलङ्कारिक धर्मसूरि के ग्रन्थ साहित्यरत्नाकर पर प्रो. भागीरथिनन्द का शोध कार्य है जिसे उन्होंने प्रकाशित कर संस्कृतसाहित्यशास्त्र की परम्परा को आगे बढ़ाया है।

(2.) श्रीगुरुभक्तिकुसुमाञ्जलिशतकम्- यह ग्रन्थ 104 छन्दों में निबद्ध है तथा इसके प्रणेता प्रो. भागीरथिनन्द हैं। इसमें गुरुभक्तिविषयक श्लोक लिखे गए हैं। इसमें गुरुभक्तिविषय में लिखा गया है -

योऽहमस्मि च यत्रास्मि यथास्मि च यतोऽस्मि च।
तत्सर्वं भवतां नाथ! करुणया हि केवलम्।।[3]

अन्य भी जैसे-

गुरु सम्पूर्ण दु:खो को हरते हैं समस्त सुख प्रदान करते हैं स्वयं ही हरण करते हैं तथा स्वयं ही प्रदान करते हैं। हे गुरुवर! आप ही मेरे सबसे प्रियतम हो।[4]

(3.) तस्मिन् दिने- यह प्रो. भागीरथिनन्द का मौलिक ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में विविध शीर्षकों के नाम से 14 लघु कथाओं का सङ्ग्रह किया गया है। सर्वप्रथम तस्मिन् दिने नाम की कथा में लेखक ने अपनी ही कथा को निबद्ध किया है कि माता-पिता सन्तान का पालन- पोषण कितने दुखों एवं कष्टों से करते हैं। लेखक ने इन कथाओं में समाज का मार्मिक व हृदयस्पर्शी सजीव चित्रण किया है।
मातुर्जीवनस्य शैशवात् कष्टानि वीक्ष्य ग्रावाऽपि रूदेत्।परन्तु तदर्थ रोदितं तन्माता जीविता नासीत्। पिता कथमपालयत् सन्ततिद्वयमिति स्वयमेव वेदितव्यं पारिवारिककर्त्तव्यवेदिभिः सामाजिकै:।[5]

पुत्री विषयक पितामह की चिन्ता दर्शनीय है
पितामह एकदा विचारयामास -यदि कन्याया अस्याः परिणयःक्रियेत् तर्हि सदस्यसङ्ख्यावृद्धया सहास्या अपि मनस्यानन्द सञ्चरेत् दीनायाः।[6]

*** अनूदित-ग्रन्थ:**

(1.) भारतवर्षम्- उड़िया भाषा में रचित इस ग्रन्थ के मूल रचनाकार श्रीसीताकान्तमहापात्र हैं। इस अनूदित ग्रन्थ में भारतवर्ष के नवनूतनगुम्फित विषयों की वर्तमान समय में उपयोगिता विषय पर समालोचित विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ को 9 सर्गों में निबद्ध किया गया है। इसके मंगलाचरण में सर्वप्रथम मातृशक्ति तथा देवीशक्ति का स्मरण किया गया है।

उपदिदेश माता
भूमेरस्यानिखिलमेव पवित्रमस्यभ्यम्
प्रत्येकंदेवदारुपत्रम्, प्रत्येकं सिकताप्रान्तरोपकूलम्;
घनारण्यस्य सकला कुज्झटिका
सर्वाऽधित्यका, गुञ्जन्तः समस्ताः पतङ्गाश्च
देवोपमाः स्मृतौ किला स्मज्जनानाम्।[7]

(2.) सृष्टितत्त्वानुचिन्तनम्- इस ग्रन्थ के मूल रचनाकार डॉ. श्रीचन्द्रभानुशतपथी हैं। इसके 34 अध्यायों में सृष्टितत्त्व के रहस्यात्मक विषयों का वर्णन किया गया है तथा इसमें सृष्टि सन्दर्भित मौलिक विषयों को प्रतिपादित किया गया है।

प्रथम अध्याय में अनन्त पुरुष का आध्यात्मिक एवं दार्शनिक वर्णन किया गया है इसकी पुष्टि ये श्लोक निम्नवत् करते हैं।

अनादि काले त्वमेवासीरनन्त। तु नहीतरः।
क्षुद्राक्षुद्राणुरूपेण स्वात्मग्रस्सदाऽभवः।।[8]
योगावेशे भवान् किं वा निश्चिन्तः खलु सुप्तवान्।
दृश्यादृश्यं जगत्सर्वं गोपयित्वा निजान्तरे।।[9]

द्वितीय अध्याय में कहा गया है कि उस हिरण्यगर्भ का मुख व शरीर विस्तृत तेज वाला था उसका प्रकाश कोटि सूर्यो के समान था।[10]

(3.) याज्ञसेनी- डॉ. प्रतिभा राय प्रणीत 'याज्ञसेनी-कहानी द्रौपदी की' उपन्यास मूल रूप से उड़िया भाषा में रचित है। इसका लेखक ने संस्कृतानुवाद 'याज्ञसेनी' नाम से ही किया है इसमें द्रौपदी ने कृष्ण के प्रति पत्र रूप में अपनी जीवनगाथा लिखी है।

कुतः श्रीगणेशं करोमि मे जीवनगाथायाः ? किं मे जन्मन:। मम जन्माप्येको व्यतिक्रमः। युवतिकलेवरेणाहमुत्पन्ना। यज्ञवेदी हि मे जननी। याज्ञसेनश्च मे पिता। अतोऽहं याज्ञसेनी।अहं पाञ्चालराजकन्या द्रुपदनन्दिनी द्रौपदी।[11]

(4.) उल्लङ्घनम् - यह 21 कथाओं का सङ्ग्रह है जिसे मूल रूपेण डॉ. प्रतिभा राय ने उड़िया भाषा में लिखा है यह ग्रन्थ साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित है। इस ग्रन्थ का भी संस्कृतानुवाद प्रो. भागीरथिनन्द ने ही किया है। उल्लङ्घन कथा शीर्षक में विविध कथाओं का सङ्ग्रह है। उल्लङ्घन शीर्षक में

भवनाथ की कथा है भवनाथ की पत्नी सावित्री थी जिसकी मृत्यु को 40 वर्ष हो गए हैं।[12] भवनाथ का पुत्र श्रीनाथ है तथा श्रीनाथ की पत्नी मञ्जुला है मञ्जुला 70 वर्षीय भवनाथ को बीमार छोड़कर अपने पितृगृह चली जाती है।[13] श्रीनाथ एवं मञ्जुला की पुत्री सरला है। मञ्जुला पूर्व जन्म में भवनाथ की माता थी ऐसा लोग उसे देखकर कहते हैं।[14] इस कथा के द्वारा पुत्रवधू धर्म के उल्लङ्घन का चित्रण है और आज के समय की वृद्धजनसम्बद्ध समस्या का उल्लेख है।

(5.)श्रीगुरूभागवतम्- इस ग्रन्थ के मूल लेखक डॉ. श्रीचन्द्रभानुशतपथी संस्कृतसाहित्य के मूर्धन्य विद्वान हैं। यह ग्रन्थ पञ्च खण्ड़ो में है। इस ग्रन्थ की मूल भाषा उड़िया है। इसके प्रथम खण्ड का संस्कृतानुवाद प्रो. भागीरथिनन्द के द्वारा किया गया है। गुरु को पूर्ण रूप से समर्पित इस ग्रन्थ में गुरु का स्वरूप, गुरुओं के प्रकार, संन्यासियों के प्रकार, शुद्ध योगी की परिभाषा, प्रभु में लीन पञ्चसंन्यासी, गुरू मण्डली तथा श्रीगुरुभक्त आदि अनेक विषयों को 19 अध्यायों में वर्णित किया गया है। गुरु यदि भगवान है तो उनके भक्त भागवत कहलाएंगे। गुरु का महत्त्व सर्वाधिक है इस विषय में एक प्राचीन श्लोक उद्धृत है।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुर्साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरुवे नमः।।

इस ग्रन्थ में बताया है की पञ्च प्रकार के अनेक योगी और ऋषि ईश्वर को प्राप्त करने के प्रयासी होते हैं। ये महामना आत्मोन्नति के लिए योग साधना में लीन रहते हैं।[15]

निष्कर्ष: रूप में कहा जा सकता है कि प्रो. भागीरथिनन्द आधुनिक संस्कृत युग के हस्ताक्षर हैं जो मौलिक एवं अनूदित दोनों ही विधाओं में निपुण है। नन्द जी संस्कृतभाषा के उज्ज्वल भविष्य हैं और आने वाले संस्कृतज्ञों के दिग्दर्शक हैं।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची:-

1. साहित्यरत्नाकर भूमिका पृष्ठ.स. 1
2. वहीं पृष्ठ.स. 2
3. श्रीगुरुभक्तिकुसुमाञ्जलिशतकम् श्लोक स. 2
4. वहीं पृष्ठ.स. 9
5. तस्मिन् दिने पृष्ठ. स. 2
6. वहीं पृष्ठ.स. 2-3
7. भारतवर्षम् - पृष्ठ.स. 3
8. सृष्टित्त्वानुचिन्तनम् प्र.अ. श्लोक स.1
9. वहीं प्र. अ. श्लोक स. 4
10. वहीं द्वि. अ. श्लोक स. 8
11. याज्ञसेनी पृष्ठ स. 5
12. उल्लङ्घनम् पृष्ठ स. 9
13. वहीं पृष्ठ स. 9
14. वहीं पृष्ठ स. 10
15. श्रीगुरुभागवतम् श्लोक स. 162

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी का जीवन परिचय एवं कर्तृत्व

निशी, शोधच्छात्रा & प्रो० पूनम लखनपाल
प्रोफेसर एवं अध्यक्षा
संस्कृत विभागए रघुनाथ गर्ल्स पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेजए मेरठ

सभी भारतीय भाषाओं की मूल संस्कृत भाषा विश्व की सभी परिष्कृत भाषाओं में प्राचीनतम है। संस्कृत भाषा में ही वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक, उपनिषद्, स्मृतिग्रन्थ, व्याकरण, साहित्य तथा साहित्यशास्त्रीय ग्रन्थों की रचना हुई। साहित्यशास्त्र के वृन्द में संस्कृत साहित्य की काव्य-विधि तथा व्यवस्थाओं का विवेचन व समीक्षा करने वाला शास्त्र काव्यशास्त्र कहलाता है। इस साहित्यशास्त्रीय परम्परा के अर्न्तगत भरतमुनि, भामह, दण्डी, वामन, रुद्रट, आनन्दवर्द्धन, राजशेखर, कुन्तक, अभिनवगुप्त, क्षेमेन्द्र और मम्मट आदि आचार्यों ने अपने-अपने ग्रन्थों के द्वारा अपने मत को प्रस्तुत एवं पुष्ट किया तथा काव्यशास्त्र की परम्परा को विकसित किया।

इसी परम्परा में डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी एक काव्यशास्त्री होने के साथ-साथ कवि, लेखक, आलोचक, साहित्यप्रेमी और देशभक्त भी हैं। राधावल्लभ त्रिपाठी जी ने संस्कृत को आधुनिकता से जोड़कर अपने ग्रन्थों की रचना की है चाहे वो काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ हों या काव्य ग्रन्थ। आधुनिक संस्कृत साहित्य के शिरोमणि क्रान्तिकारी कवि डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी ने संस्कृत रूपी पुरातन वृक्ष में

आधुनिकता की नवीन शाखाओं को प्रस्फुटित किया है। इन्होंने संस्कृत साहित्य को आधुनिक वैश्विक सन्दर्भों से जोड़कर नई दिशा प्रदान कर अनेक अभिनव, अप्रतिम तथा अद्‌भूत रचनाएँ की है। डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी ने न केवल संस्कृत अपितु हिन्दी व अंग्रेजी दोनों भाषाओं में भी अनेक ग्रन्थों की रचना की। डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी के विषय में अभिराजराजेन्द्र मिश्र का कथन है, "आचार्य राधावल्लभ न ही पंक्तिपाण्डित्य के हिमायती हैं न ही उसके लिए प्रयत्नशील है। उनका अध्ययन विपुल एवं विविध है। वे समूची परम्परा का गम्भीर ज्ञान रखते हैं।" आचार्य त्रिपाठी ने काव्य की सभी विधाओं का नवीनता के साथ मौलिक सृजन किया तथा उनकी समीक्षा करके और समीक्षक के रूप में भी प्रसिद्ध हुए। इसी को लक्षित करते हुए अभिराजराजेन्द्र मिश्र लिखते हैं- काव्य मर्मज्ञ डॉ. त्रिपाठी काव्यतत्व के मधुबिन्दु के पान में लीन वह मधुप हैं, जिन्होंने आधुनिक व पौराणिक शास्त्रों को प्रगाढ़ अनुशीलन किया है। डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी ने अपनी सशक्त पैनी लेखनी से नवीन एवं प्राचीन शैलियों में अनेक काव्य, काव्यशास्त्रीय तथा आलोचना ग्रन्थ लिखकर संस्कृत साहित्य जगत् में अपना विशेष स्थान बनाया है। संस्कृत को परम्परागत प्राचीन शैलियों के जाल में मुक्त कर स्वच्छन्द प्रवाहित होने वाले जल का रूप प्रदान करने वालों में डॉ. त्रिपाठी का विशेष स्थान है।

जीवन परिचय:

संस्कृत साहित्य जगत् के आधुनिक संस्कृत विद्वानों में अर्ग्रगण्य डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं। वे कवि, समीक्षक, लेखक, कथाकार, गद्यकार, नाट्यकार, सम्पादक,

विवेचक, नवीन काव्यशास्त्रीय अवधारणाओं के प्रतिष्ठापक, वग्मिता के अधिष्ठानभूत हैं। डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी का जन्म फाल्गुन कृष्णपक्ष तृतीय, संवत् 2005 विक्रमी तदनुसार 15 फरवरी 1949 को मध्यप्रदेश राज्य के राजगढ़ (व्यावरा) नामक मण्डल में हुआ था। इनके पिता का नाम पं. गोकुलप्रसाद त्रिपाठी तथा माता का नाम श्रीमती गोकुलबाई था। पं. गोकुलप्रसाद त्रिपाठी मध्यप्रदेश शासन में उच्चतर शिक्षा विभाग में कार्यरत थे तथा वहीं से सन् 1979 में छतरपुर शासकीय महाविद्यालय से सेवानिवृत्त हुए। मात्र तीन वर्ष की अल्पायु में इनकी माता गोकुलबाई का देहावसान हो गया। माता का असामयिक निधन राधावल्लभ त्रिपाठी जी के लिए कष्टकारी था और शासकीय सेवारत् पिता के स्थानान्तरणों से बालक राधावल्लभ त्रिपाठी को कष्ट का अनुभव करना पड़ रहा था। इसे देखते हुए पं. गोकुलप्रसाद त्रिपाठी ने अपनी जीवनचर्चा सुचारू रूप से व्यव्यस्थित करने के लिए श्रीमती शकुन्तला देवी के साथ विवाह किया, जिनसे पांच पुत्र प्राप्त हुए। इस प्रकार पं. गोकुलप्रसाद त्रिपाठी की आठ सन्तानें थीं जिनमें डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी ज्येष्ठ से छोटे अर्थात् दूसरे क्रम में हैं।

डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी का विवाह 27 मई 1974 को मध्यप्रदेश के राजगढ़ निवासी श्री शिवदत्त भारद्वाज की पुत्री डॉ॰ सत्यवती के साथ हुआ जिन्होंने 20 वर्ष तक डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय में और तदुपरान्त श्रीलाल बहादुरशास्त्री संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली के हिन्दी विभाग में अध्यापन कार्य किया। डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी जी को तीन पुत्री रत्न प्राप्त हुए जो अपने-अपने क्षेत्र में पारंगत हैं और कार्यरत हैं।

शिक्षा एवं अध्यापन:

इनके पिता पं. गोकुलप्रसाद त्रिपाठी हिन्दी तथा संस्कृत के मूर्धन्य विद्वान, कवि तथा समीक्षक थे। पिता की साहित्यिक अभिरूचि से डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी अत्यन्त प्रभावित हुए तथा उनके सान्निध्य में राधावल्लभ के मस्तिष्क में 8-10 वर्ष की आयु से ही लेखन व अध्ययन का बीज अंकुरित हो गया था जो विकसित होकर आज एक विशालकाय कल्पवृक्ष के समान संस्कृत जगत् के समक्ष उपस्थित है।

यद्यपि डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी प्रारम्भ में विज्ञान विषय के विद्यार्थी थे परन्तु संस्कृत से प्रभावित होने के कारण व संस्कृत में रूचि होने के कारण डॉ. त्रिपाठी विज्ञान से विमुख हो कला क्षेत्र की ओर अभिमुख हुए व संस्कृत में गतिशील हुए। डॉ. त्रिपाठी ने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा राजगढ़ में की। बी.ए. की परीक्षा संस्कृत विषय के साथ महाराज महाविद्यालय, छतरपुर, सागर (म.प्र.) से प्रथम स्थान के साथ उत्तीर्ण की तथा 1970 में संस्कृत में एम.ए. की परीक्षा संस्कृताध्ययन के लिए विख्यात सागर विश्वविद्यालय से 82 प्रतिशत अंकों के साथ उत्तीर्ण की। सन् 1971 में सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय से भाषाविज्ञान में प्रमाणपत्रोपाधि प्राप्त की। 1972 में प्रो. रामजी उपाध्याय के शोधनिर्देशन में "संस्कृत कवियों के व्यक्तित्व का विकास" विषय पर पीएच्.डी. की तथा 1981 में डी.लिट् की उपाधि प्राप्त की।

डॉ. त्रिपाठी ने सर्वप्रथम 1971 की जनवरी से जुलाई तक डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय में यू.जी.सी. शोध अध्येता के रूप में शिक्षण कार्य किया। 1971 से 1973 तक इसी विद्यालय में संस्कृत

के सहायकाचार्य पद पर नियुक्त हुए। पुनः इसी विश्वविद्यालय में 1983 तक उपाचार्य पद पर हैं।

डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी 1980 से 2001 तक तथा 2005 से 2008 तक उसी विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष पद पर कार्यरत रहे। इस अन्तराल में सन् 2002 से 2005 तक रचनाक्रम में संलग्न रहे तथा शिल्पकार्न विश्वविद्यालय, बैंकाक के संस्कृत अध्ययन केन्द्र में अतिथि आचार्य के रूप में कार्‌य किया। सन् 2008 से 2013 तक क्रमशः राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली में उपकुलपति के पद पर तथा श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ मानित विश्वविद्यालय के कुलपति के पद पर सुशोभित हुए।

आचार्य त्रिपाठी ने न केवल भारत में अपितु विश्व में अनेक स्थानों पर शोध पत्र व व्याख्यान प्रस्तुत किये हैं। 1978 में बर्लिन हुम्बोल्स विश्वविद्यालय के भारतीय विद्या विभाग में भारत-जर्मनी सांस्कृतिक योजना के अन्तर्गत व्याख्यान तथा 1987 में लाइडन (हॉलैण्ड) में आयोजित सप्तम विश्वसंस्कृत सम्मेलन में शोध पत्र प्रस्तुत किया। सन् 2005 में दक्षिण पूर्व एशियाई देशों द्वारा आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय संस्कृत सम्मेलन में सन् 2006 में एडिनबरा में आयोजित तेरहवें संस्कृत सम्मेलन में, क्योटो जापान में आयोजित चौदहवें विश्व संस्कृत सम्मेलन में सन् 2011 में जर्मनी के ई.सी.ए.एफ.ई. के वार्षिक सम्मेलन में, सन् 2012 में आई.सी.सी.आर. द्वारा जर्मनी के लीपजिंग में पंचतंत्र पर आयोजित अन्ताराष्ट्रीय सम्मेलन में शोध पत्र प्रस्तुत कर सहभागिता की।

कर्तृत्व:

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी बहुआयामी प्रतिभा के धनी हैं और अनेक भाषाओं में व सर्जना में नैपुण्य रखते हैं। इन्होंने लगभग 16 वर्ष की आयु में ही काव्य रचना प्रारम्भ कर दी थी। 'अमृतलता' तथा 'संस्कृतप्रतिभा' में इनकी प्रारम्भिक रचनाएँ प्रकाशित हुईं जिनमें 'अभिस्मरणीयास्मृतिः' तथा 'कादम्बरी' जैसी कथा अग्रणी हैं। सन् 1965-1978 के कालखण्ड में आचार्य त्रिपाठी की रचनाएँ अन्य पत्रिकाओं में भी प्रकाशित हुईं। इन्होंने प्राच्य तथा पाश्चात्य साहित्य दोनों का ही गहन अध्ययन किया है, जिसका महत् प्रभाव इनकी रचनाओं में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। उन्होंने अपने काव्य में आधुनिक एवं पारम्परिक विधाओं का मिश्रण कर अपना लेखन कार्य किया तथा सभी क्षेत्रों में नये-नये परिवेश, मापदण्ड, रीति, शैली आदि के अनुरूप मौलिक काव्य सृजन किया।

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी ने अनेक अनुसंधान ग्रन्थ, प्राचीन ग्रन्थ, आधुनिक संस्कृत काव्यों का सम्पादन किया व मौलिक रचनाएँ भी कीं। इन्होंने अनेक संस्कृत ग्रन्थों का हिन्दी व अंग्रेजी में अनुवाद एवं सम्पादन कार्य भी किया। इनकी रचनाओं का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है।

मौलिक-रचनाएँ:

1. प्रेमपीयूषम, 1970, संस्कृत परिषद्, सागर (नाटक)
2. महाकवि कण्टकः, 1971, संस्कृत परिषद्, सागर (आख्यायिका)
3. प्रेक्षणकसप्तकम्, 1979, प्रतिभा प्रकाशन दिल्ली, (एकांकी)
4. नाट्यमण्डपम्, 1980, संस्कृत परिषद्, सागर,

5. सन्धानम्, 1986, संस्कृत परिषद्, सागर (संस्कृत काव्य संग्रह)
6. लहरीदशकम्, 1992, संस्कृत परिषद्, सागर (संस्कृत काव्य संग्रह)
7. गीतधीवरम्, 1995, संस्कृत परिषद्, सागर (गीतिकाव्य)
8. उपाख्यानमालिका, 1998, प्रतिभा प्रकाशन दिल्ली, (कथा साहित्य)
9. तण्डुलप्रस्थीयम्, 1999, प्रतिभा प्रकाशन दिल्ली, (नाटक)
10. सम्प्लवः, 2000, प्रतिभा प्रकाशन दिल्ली, (कविता संग्रह)
11. अभिनवकाव्यालारसूत्रम्, 2005, सम्पूर्णानन्द संस्कृत वाराणसी विश्वविद्यालय (काव्यशास्त्र)
12. थाईदेशस्य इतिहास संस्कृतिश्च, 2005, प्रतिभा प्रकाशन दिल्ली, (इतिहास ग्रन्थ)
13. समष्टिः, 2010, देववाणी परिषद् दिल्ली, (कविता संग्रह)

अनुदित-रचनाएँ:

1. वेदान्तसार, 1977, प्रतिभा प्रकाशन दिल्ली,
2. कुन्दमाला, 1982, संस्कृत परिषद्, सागर
3. कुमारसम्भवम्, 1983, कालिदास प्रकाशन, उज्जैन
4. प्रबुद्धरौहिणेय, 1983, प्रतिभा प्रकाशन दिल्ली, सागर
5. मेघदूत, 1986
6. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 1986, कालिदास प्रकाशन, उज्जैन
7. संक्षिप्तनाट्यशास्त्रम्, 1988, अक्षयवट प्रकाशन, इलाहाबाद
8. वेणीसंहार, 2000, सागर

9. स्वप्नवासवदत्तम्, 2000, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
10. रघुवंशम्, 2000, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
11. कादम्बरी, 2000, रामकृष्ण प्रकाशन, विदिशा
12. उत्तररामचरितम्, 2003, रामकृष्ण प्रकाशन, विदिशा
13. संस्कृत कथा की लोकधर्मी परम्परा, प्रगतिशील लेखक संघ, अम्बिकापुर।

इन्होंने मेघदूत को रोला, हिन्दी एवं सोनेट, अंग्रेजी छन्द में अनुदित कर नवीन प्रयोग किया।

सम्पादित-ग्रन्थ:

1. मुकुन्द विलास महाकाव्यम् (1980)
2. नवस्पन्दः (1988)
3. आयाति (1989)
4. प्रख्या (1989)
5. प्रेम सम्पुटम् (1995)
6. इतिहास पुराणाख्यान संग्रह (1999)
7. संस्कृत महासूक्ति संग्रह (2004)
8. कवि द्वादशी (2006)

सम्पादित पत्रिकाएँ:

1. सागरिका, सागर (त्रैमासिक संस्कृत शोध पत्रिका)
2. नाट्यम्, सागर (त्रैमासिक हिन्दी नाट्य पत्रिका)
3. मध्यभारती, सागर (विश्वविद्यालय शोध पत्रिका)
4. दूर्वा, मध्यप्रदेश (त्रैमासिक साहित्यक पत्रिका)
5. संस्कृत विमर्श, नई दिल्ली, (नई श्रृंखला)

प्रकाशित-ग्रन्थ:

1. भारतीय धर्म और संस्कृति (1972)
2. संस्कृत कवियों के व्यक्तित्व का विकास (1976)
3. आदिकवि वाल्मीकि (1980)
4. काव्यशास्त्र और काव्य (1982)
5. न्यायसत्रम् (1984)
6. संस्कृति कविता की लोकधर्मी परम्परा (1986)
7. कालिदास परिशीलन (1987)
8. भारतीय नाट्य स्वरूप और परम्परा (1987)
9. नाट्यशास्त्र विश्वकोष (1999)
10. संस्कृत साहित्य-बीसवीं शताब्दी (1999)
11. साहित्यशास्त्र परिचय (2003)
12. संस्कृत काव्यशास्त्र और काव्य परम्परा (2004)
13. भारतीय काव्यशास्त्र की आचार्य परम्परा (2007)

उपर्युक्त पुस्तको के अतिरिक्त आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी की अन्य रचनाएँ भी प्रकाशित हुई हैं जिनकी संख्या कुल 108 हैं। विभिन्न शोध पत्रिकाओं में इनके लगभग 183 शोधपत्र व 50 से अधिक समीक्षात्मक ग्रन्थ भी प्रकाशित हुए हैं। डॉ. त्रिपाठी गत 42 वर्षों से निरन्तर संस्कृत तथा हिन्दी में अपने लेखन कार्य से हिन्दी संस्कृत साहित्य को समृद्ध कर रहे हैं। अद्वितीय प्रतिभा सम्पन्न आचार्य त्रिपाठी वर्तमान कालिक संस्कृत साहित्य के श्रेष्ठ साहित्यकार हैं। डॉ. त्रिपाठी की कृतियों में उनकी मौलिकता सरस व सुबोध रूप में परिलक्षित होती है।

सम्मान एवं पुरस्कार:

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी को उनकी नैसर्गिक तथा विलक्षण प्रतिभा तथा सरस्वती की साधना के लिए उन्हें राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित किया गया जिनमें से कुछ पुरस्कार प्रस्तुत हैं-

1. ''संस्कृत कवियों के व्यक्तित्व का विकास'' ग्रन्थ पर उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी पुरस्कार, 1976
2. 'वाल्मीकिविमर्श' पर संस्कृत अकादमी पुरस्कार, 1979
3. 'कुन्दमाला' के अनुवाद पर राजशेखर पुरस्कार, 1982
4. 'भाटकाद्वात्रिंशिका' पर मध्य प्रदेश संस्कृत अकादमी का व्यास पुरस्कार, 1987
5. 'दमयन्ती' हिन्दी नाटक पर वागीश्वरी पुरस्कार, 1990
6. 'लहरीदशकम्' पर उ.प्र. संस्कृत अकादमी का कालिदास पुरस्कार, 1991
7. 'सन्धानम्' पर साहित्य अकादमी, नई दिल्ली पुरस्कार 1994
8. 'गीतधीवरम्' पर म.प्र. संस्कृत अकादमी का कालिदास पुरस्कार, 1996
9. कनाडा का रामकृष्ण संस्कृत पुरस्कार 1998
10. 'सम्प्लवः' पर म.प्र. संस्कृति परिषद् का कालिदास पुरस्कार 2002
11. हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा संस्कृत महामहोपाध्याय सम्मान, 2006
12. नाट्ययन, ग्वालियर का भवभूति सम्मान, 2006

13. अखिल भारतीय वेदव्यास सम्मान, 2006
14. लोकसभा प्रचार समिति द्वारा जयदेव सरस्वती सम्मान, 2009
15. कांची शंकराचार्य द्वारा संस्कृत शिरोमणि सम्मान, 2009
16. डक्कन कॉलेज पूना द्वारा मादन डी. लिट् उपाधि, 2010
17. कुन्जनी राजा ट्रस्ट द्वारा राजप्रभा पुरस्कार, 2010
18. देवाणी परिषद् नई दिल्ली द्वारा पंडितराज जगन्नाथ सम्मान, 2011
19. मीरा सम्मान, 2012
20. कुन्दकुंद सम्मान, 2012

इनके अतिरिक्त भी डॉ. त्रिपाठी को अनेक सम्मानों से सम्मानित किया गया है।

इस प्रकार उन्होंने संस्कृत साहित्य में वृद्धि की है। बहुविध साहित्य का सृजन कर न केवल संस्कृत भाषा को समृद्ध किया है अपितु संस्कृत भाषा एवं संस्कृत साहित्य के अनुरागियों को भी उपकृत किया है।

आधुनिक संस्कृत साहित्य का कालखण्ड तथा तत्कालीन सामाजिक परिवर्तन: एक दृष्टिक्षेप

प्रोफेसर शुचिता लालचंद दलाल
विभागाध्यक्ष, स्नातकोततर संस्कृत विभाग
राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज नागपूर विद्यापीठ, नागपूर (महाराष्ट्र)

'नूतन काल' यह अर्वाचीन काल का अर्थ है। आधुनिक याने अभी का या सद्या का। यही काल अर्वाचीन है। जब काल का वर्णन किया जाता है, तो इस शब्द के विविध पैलू विद्यमान होते है। जिसप्रकार 'काल' याने एक सामान्य समय। तथा दूसरे पैलू में 'संवत्सर' भी होता है। अतः आधुनिक काल में कौन सी शताब्दीयाँ समाविष्ट है, यह देखने आवश्यक है। यास्तव आधुनिक काल के विचार तथ्ज्ञा प्राचीन काल के विचार भी यहॉ समाविष्ट करना जरूरी है। अतः विविध विद्वानों के मत यहाँ प्रकट करने का प्रयास है।

कालखण्ड:

नागपूरस्थ कै. डॉ. श्री. भा. वर्णेकर 17वें शताब्दी को अर्वाचीन काल मानते है। क्यों की ब्रिटीशों का भारतवर्ष में आगमन होने के कारण भारतमाता का 'राज्यकाल' लुप्त होने लगा। विविध विचार तथा परिवर्तन में हालहल हो गयी। इसी कारण प्राचीन काल की राजसत्ता में परिवर्तन का प्रारम्भ हुआ। अतः डॉ. वर्णेकर 17वें शतक से अर्वाचीन काल मानते है।

आधुनिक साहित्य के शिरोमणि डॉ. हिरालाल शुक्ला जीने 1784 से 1919 तक अर्वाचीन काल माना है। आधुनिक सस्कृत

साहित्य के स्वयिता डॉ. हिरालाल शुक्लाजीने अपने ग्रन्थ में नवजागृती का विद्रोह 1784 में आरम्भ हुआ, यह उल्लेखित करते है। तथा उनके मतानुसार 1919 तक ही यहाँ अर्वाचीन कालकी मर्यादा थी।

महाराष्ट्र शब्दाकोष में 1818 से 1845 तक अर्वाचीन कालसमय उल्लेखित किया है। तथा संशोधन की दृष्टि से अभिप्रेत काल 1857 से 1991 तक का मानते है। 1857 का 'उठाव' याने ब्रिटिशों के विरूद्ध का काल तथा राजीव गांधीजी के निधन के उपरानत काल अर्वाचीन मानते है।

इस प्रकार विविध विद्वानों के विविध मत कालखण्ड का विचार करते है।

अर्वाचीन काल के तीन खण्ड:

देशभक्तीओंपर संस्कृत कवियों ने अनेक ग्रंथों की रचना की। संस्कृत साहित्य में नाटक तथा महाकाव्य की रचना देशहितार्थ कवी करने लगे। अतः तत्कालीन परिस्थिति देखते हुए अर्वाचीन काल तीन खण्डों में विभाजित होता है।

प्रथम- तिलक युग- इ.स.1857-1920

द्वितीय- गांधी युग- इ.स.1920- 1947

तृतीय-स्वतंत्र भारत: इ.स.1947- 2019

यहा तिसरा काल ब्रिटिशों के विरूद्ध असंतोष होने का काल है।

तिलक युग में स्वातंत्र्य प्राप्यर्थ 'केसरी' जैसे वर्तमान पत्र से ब्रिटिशों से लड़ाई करने का, उन्हे भारत से बहार निकालने का कार्य करने हेतु जन समाज को उत्साहित किया।

बाल गंगाधर तिलक के इस कार्य के कारण जनसामान्य में देश के प्रती जागृकता हुई। विविध राजनेताओं ने पुढाकार लिया। ई..स. 1757 से 1857 इस कालावधी में संस्थानिक, जमीनदार, जहाँगीरदास, शेतकरी, कारागीर शोषित समाज ने 'उठाव' किया। अंग्रेजी सत्ता मानो स्तब्ध हो गई।

तिलकजी ने अपने 'कलम' से समाज में अपने देश के प्रती भक्ति निर्मित की। ब्रिटिश विरूद्ध लेखनी से समाज जागृत हुआ। स्वातंत्र्यप्राप्ती केले जनमानसमे आक्रोश हुआ।

एक तरफ समाज के जो विचार थे, उसमे बदलाव लाना जरूरी था। आगरकर जी ने प्रथम सामाजिक विचार में तथा उनके विचार को आधुनिक में परिवर्तन करना था। लेकिन तिलक इत्यादिने प्रथम स्वातंत्र्य तथा बाद में विचार परिवर्तन ऐसे अलग अलग मत थे। फिर भी एक सामान्य दृष्टिसे देखा जाए तो अधिक प्रतिष्ठत लोगों ने प्रथम स्वातंत्र्य का मत था।

राजा राममोहन राय ने नारी के प्रति उनकी भावना श्रेष्ठता हेतू समाज के परंपरागत मत को विरोध किया। पती के मृत्यु होने के बाद पत्नी 'सती' के रूप में अपना जीवन समर्पित करती थी। राजा राममोहन राय उन्हे ये 'प्रथा' बिलकुल ही मान्य नही थी। उन्होने इस परम्परा में परिवर्तन हेतु कार्यरत थे। वे सफल हुए और ये सती परम्परा बंद हुई ।

नारी के प्रती भी समाज में परिवर्तन हुआ। और अनेक महिलाओं का जीवन जीवीत रहा। तथा महिलाओं के पुनर्विवाह को भी मान्यता प्राप्त हुई। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में नारी का पुनर्विवाह

मान्यता है। उसके के नियम के अनुसार अगर सात साल तक पती घर में वापस नही आता तो पत्नी दुसरी शादी कर सकती है।

छोटी आयु में बालिका का विवाह करना उसमे में भी समाज का परिवर्तन हुआ तथा वेदों में जैसे नारी की शिक्षा होती थी, उसी प्रकार आधुनिक विभूतिओं ने भी ज्योतिबा फुले - सावित्रीबाई फुले ने नारी की शिक्षा का अनुरोधन किया। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने भी महिलाओं के लिए पाठशालाए शुरू कि।

इस प्रकार आधुनिक काल की जो स्थिति थी वह मध्यमकालखण्ड में थी। अनेक संत, विभूति, महर्षि तथा नेताओं ने समाज परिवर्तन विचारों में कार्यरत थ।

जातपात के प्रति स्वातंत्र्यवीर सावरकर जी ने विरोध कर एकसाथ भोजन करके के प्रयोग किए। उसमे वे सफल हुए।

स्वामी विवेकानंद जी ने समाज के क्षीण लोगों के लिए तथा स्वास्थ के लिए 'रामकृष्ण मठ' की स्थापना की गरीब लोगों के लिएँ तथा रूग्णों के लिए अपना जीवन समर्पित किया ही तथापि आध्यात्मिक दृष्टिसे मठों की स्थापना कर जनता में अपने विचार व्याख्यानद्वारा प्रकट किए।

स्वास्थ हेतू 'राजयोग' की उन्नती उन्होंने की। इस प्रकार आधुनिक काल में तत्कालिन समाज के विचारों में परिवर्तन करने में सफलता प्राप्त हुई।

संदर्भ- अर्वाचीन संस्कृत विभूतिकाले- लेखक- डॉ. शुचिता ला. दलाल, विश्वभारती प्रकाशन, सीताबर्डी, नागपूर

अनन्तलालठाकुरमहोदयस्य व्यक्तित्वं कृतित्वञ्च

सुफलमोदकः (अनुसन्धाता)
सीतारामवैदिकादर्शसंस्कृतमहाविद्यालयः
७/२a ॐकारनाथसरणि, कोलकाता

ध्यानमूलं गुरर्मूर्ति पूजामूलं गुरोः पदम्।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा।।

वैदिककालादारभ्य अद्यावधि पर्यन्तं शाखस्य अवधारणम् तस्य संरक्षणं गुरुमुखेन श्रुतिपरम्परारूपेण एव प्रचल्यमाना अस्ति। वेदसाहित्ये यथा श्वेतकेतु जाबालेरुपाख्यानम्, यम-नचिकेतासंवादः स्तः, तथैव लौकिके जनमेजयादि शिष्यान् महाभारतस्य कथनम् नैव दुर्लभम्। पतञ्जलिरपि पश्पशह्निके भणति- **"चतुर्भिश्च प्रकारैर्विद्योपयुक्ता भवति। आगमकालेन, स्वाध्यायकालेन, प्रवचनकालेन, व्यवहारकालेनेति।"** आप्तपुरुषस्य अर्थात् गुरुवचनं खलु प्रमाणभूतं विद्यते। कालदृष्ट्या समाजदृष्ट्या विद्यावंशस्य परम्परा आचार्यपुरुषैः सुरभिताभिनन्दिताश्च। तस्यां प्रवाहधारायां वहवः कृतिवैभवाः अवगाहन्तः संस्कृतरवभाण्डारं पौनःपुण्येन अलंकुर्वन्तश्चासन्। तेषु कृतसंकल्पेषु डॉ.: अनन्तलालठाकुरमहोदयः अन्यतमः। १३२३ सने कार्तिकमासि बंगलादेशस्य फरिदपुरमण्डले कोटालिपल्ल्यां एषः क्षणजन्माः जनिमलभत। अनन्तलालगुरुपादाः यथा न्याय वैशेषिकदर्शने निष्णाताः तथा च साहित्ये, आर्यकाव्ये, अभिलेखशाखे, पुरातत्वे सर्वत्र तस्य विचरणम् आसीत्।

विद्यालयशिक्षणम् समतिक्रम्य गुरुपादाः गणेषकरूपेण स्वकीय मेधया सर्वान् आकृष्टवन्तः। तत्र महमहोपाध्यायविधुशेखरशाखिणः परामर्शन भारतीयदर्शनशास्त्रे तथा पाण्डुलिपिविषये गहनं शोधकार्य कृतवन्तः। तस्मिन्नेव समये तिव्वतदेशीयराहुलसंकृत्यायनस्य भारतदेशे समागमनम् अभूत्।

तत्रस्थितानां तिव्वतदेशीयानां पाण्डुग्रन्थानां सम्पादने प्रकाशने आचार्याणां महती भूमिका आसीत्। **Bihar research society** मध्ये संस्कृतानुवादं ज्ञानश्रीमित्रनिवन्धावली (१९५६), अशोकनिवन्धयः (१९५९), रखाकीर्तिनिवन्धावली (१९७४) नाम्ना दुर्लभपाण्डुलिपिनां प्रकाशनामाध्यमेन भारतीयन्यायशास्त्रस्य पुनरुज्जीवनं विहितवन्तः।

सुदीर्घकर्मजीवने गुरुपादाः भारतस्य विविधेषु प्रदेशेषु प्रसिद्धपदम् अलंकुर्वन्नासन्। तत्र वङ्गदेशस्य कृष्णनगरे अध्यापनाकार्यं प्रारभ्य विहारप्रदेशे पाण्डुलिपिविभागे **Research fellow** रुपेण, पुनश्च कात्रसगढ़प्रसन्नचौधरीमहाविद्यालये पार्श्वशिक्षकपदे आसन्। एवञ्च द्वारभङ्गमण्डले भारतीयप्राच्यविद्यासम्मेलने व्ही राघवन्, सुनीतिकुमारचट्टोपाध्यायः, बेलवेलकर, दिनेशचन्द्रभट्टाचार्यः प्रमुख्यैः सह अनन्तलालगुरुपादाः भारतीयदर्शनशास्त्रीयपाण्डुलिपिविषये महती चर्चा कृत्वा मुद्रणकाकार्यं सुसम्पन्नम् कृतवन्तः।

अथ "**Mithila institute of post graduate studies and research in Sanskrit learning**" इत्यत्र विहारसर्वकारस्य आमन्त्रणम् स्वीकुर्वन्तः लुप्तप्रायपाण्डुलिपिग्रन्थानां सम्पादने निपुणतां प्रकटयति स्म।[१] एवञ्च बाचस्पतिमिश्रोदयनाचार्ययोः कालखण्डयोः सेतुरूपेण **"ज्ञानश्रीनिवन्धावली"[२] k.p Jaiswal research institute** (१९५९) इत्यतः पञ्चमग्रन्थमाला नाम्ना गुरुचरणानां निर्देशेन प्रकाशितः। वैयक्तिकोद्यगे भारतीयप्रधानभूतानां न्यायग्रन्थानां यथा वात्स्यायनस्यन्यायभाष्यम्, उद्योत्कारस्य न्यायवार्तिकम्, वाचस्पतिमिश्रस्य तात्पर्यटीका, उदायानाचार्यस्य तात्पर्यपरिशुद्धिटीका प्रभृतान् ग्रन्थान् प्राप्ताप्राप्तपाण्डुलिपिसकलान् समेत्य पूर्णाङ्गरूपेण सर्वसमक्षम् अनीतवन्तः। इतोपि अभयतिलकस्य न्यायालंकारः, श्रीकण्ठमिवस्य टिप्पणकम् सुदुरजयशलमीरप्रदेशात् संगृह्य प्रकाशितवन्तः।

विहारप्रदेशे सुदीर्घ त्रयोविंशतिवर्ष समतिक्रम्य १९७६ ईशवीयाब्दे अवसरम् गृहीत्वा गौतमाक्षपादः मैत्रेयनाथपदस्य योगाचारविज्ञानवादयोः तुलनात्मकम् समीक्षात्मकम् अध्ययने स्वकीयं जीवनं नियोजितवन्तः। एतेषां प्रचेष्टया एव "अशोकनिवन्धावली", "गङ्गावंशानुचरितम्" प्रभृतयः प्रसिद्धाः ग्रन्याः मुद्रितरूपम् प्राप्तवन्तः। कर्मजीवनस्य द्वितीयचरणे ठाकुरपादाः कामेश्वरसिंगद्वारभाङ्गाविश्वविद्यालये (१९७७) विभागाध्यक्षपदमलंकुर्वन्नासन्।३ तत्र भट्टवादीन्द्रस्य वैशेषिकवार्तिकम् सम्पादितवन्तः। वर्धमानविश्वविद्यालयस्य अध्यक्षरूपेणापि वहुमौलिकन्यायग्रन्थान् आचार्यपादाः प्रकाशितवन्तः।

वङ्गदेशे कतिपयः सौभाग्यशालिनः छात्राः यथा-डः विवेकानन्दवन्धोपाध्यायः (Seniour research advisor, The Asiatic society of Bengal), भास्करनायभट्टाचार्यः (Rabindra Bharati University) प्रवालकुमारसेनः (Calcutta University) सत्यवतीवन्धोपाध्यायः (Burdwan University) गुरुचरणस्य सुयोग्य शिष्यतुल्याच आसन्। इतोपि Professor किशोरनाबला (lal bahadur shastri Sanskrit University). सुखेश्वरक्षा (Tilak Majhi University Bhagalpur), उमाचरणना (president awarded) प्रभृतयः संस्कृतजगति प्रसिद्धश्चासन्।४ पुत्रकल्पः सञ्जितकुमारसाधुखां "**scientist aspects of Mahabharata**" विषये पुनश्च डः विवेकानन्दवन्दोपाध्यायः "**competitive study in between Ramayana and Mahabharata**" विषयेएतेषां सन्निधौ Ph.D. उपाधिं लब्धवन्तौ।

न केवलं शिक्षकरुपेण अनन्तग्रन्थानां श्रष्टारूपेणापि एतेषां विश्वप्रतिष्ठा आसीत्। मुख्यतया आचार्याणां न्यायवैशेषिकग्रन्थान् फारसीजर्मनाङ्ङ्गलभाषाविदाः तासु भाषासु अनुवादनचक्रुः यथा D.E.A. Solomon, Dr.Y.Kaziama, Dr. Mae Dermott, Dr. Gudrun Biehnman प्रभृतयः। तेषां शोधपत्राणि भियेनामेरिकानाडादेशेषु वहुश्रुतं आसन्।

गुरुचरणानां सम्पादितग्रन्थानां सूची:

<u>न्यायग्रन्थाः</u>

- ज्ञानषीमित्रनिवन्धावली (Jaiswal institute, Patna)[५]
- सौगतसूत्रव्याख्यानकारिका (Mithila institute, Dwarbhanga Bihar)
- न्यायचतुर्वन्थिका (प्रथमखण्डः, Mithila institute, Patna)
- न्यायभाष्यवार्तिकतात्पर्य विवरण पद्धिका (Mithila institute, Patna)
- अशोकनिवन्धौ (K.p Jaiswal research institute)
- श्रीकण्ठटिप्पणकम् (Asiatic society of Bengal)
- गङ्गावंशानुचरितम् (K.p Jaiswal institute)
- मध्यान्तविभागकारिकाभाष्यम् (k.p Jaiswal research institute)

<u>आङ्गलशोधपत्राणि:</u>

- Origin and development of baishasik philosophy (ICPR new Delhi)[६]
- Gautam founders of philosophy (Ministry of information and broadcasting, 1975, 1981)
- The Mahabharata and the Nyayadarshana (proceedings, AIOC 1974)
- Perception in philosophy (Benaras, bharat Manisha, 1975) Members of an Indian syllogism (Ritam, Lucknow, 1979)
- Textual studies in the Nyaybartika (1968)
- Chal jati, nigrahasthan and the Buddhist philosophers (I.N. Mishra volume, Patna, 1987)
- Some lost Nyaya works and authors (All india Oriental conference, 1953)
- Members of परार्थानुमानम् later phase a Corpus of Indian studies (Kolkata, 1980)
- Studies in वाचस्पतिमिच (1865)
- लक्षणमाला of Udayan (Munshi Indological volume)

- उदयनाचार्य and his contribution (charadeb shastri volume, delhi, 1974)
- चत्रिभट्ट and the authorship of the सर्वदर्शनसंग्रहः (Adyar library series, 1974)

<u>वङ्गीयशोधपत्राणि:</u>

- ন্যায়শাস্ত্রের রূপরেখা (নিবন্ধাবলি)[৭]
- বঙ্গেনব্যন্যায়চর্চা (নিউ এজ পাবলিশিং)
- গুর - শিষ্য সংবাদ (নিবন্ধাবলি)
- প্রৌঢ়গৌড়নৈয়ায়িক সনাতনী (নিউ এজ পাবলিশিং)

<u>वैशेषिकदर्शनविषयकम् शोधपत्राणि</u>:

- कणाद founders of philosophy[৮]
- कणाद अस्तिकनास्तिको वा?
- The problem of the वैशेषिक (Bulletin institute of Prakrit)
- Textual problems of the Vaisakhi sutras (The seminar of manuscript ology and textual criticism)
- The textual,exasejetical and historical problems of the Vaisakhi philosophy (Kolkata, 1984)
- Byatsyan and the Vaisakhi system (viswswaranand indological journal)
- Shaliknath the Vaisakhik (All India oriental conference)

<u>बौद्धधर्मदर्शनविषयकम् शोधपत्राणि:</u>

- Buddhist religion, philosophy and literature 600 B.C to 325 B.C(Patna, 1958)
- Influence of Buddhist logic on alamkarshastra (Baroda, 1958)
- अतीशदीपङ्करश्रीज्ञानम् (साहित्यपरिषद्)
- रखकीर्तिः and his works(Bihar research society, Patna)

<u>पाण्डुलिपिविषयकशोधपत्राणि:</u>

- Manuscript ology from Indian sources read in the seminar on manuscript ology (Kurukshetra University, 1985)
- Manuscript in Bengal and their utilisation (Burdwan University)
- Manuscript in Bihar and their utilisation (Indian nation, Patna, 1976)
- History of Gorakhpur from a M.S of the Jay madhab man sollasa preserved in the Asiatic society of Bengal

<u>साहित्यसंस्कृतिविषयकप्रवन्धाः</u>

- Contribution of Bihar to Sanskrit literature, comprehensive history of Bihar (k.p Jaiswal research institute)
- महाभारतस्य मूलदर्शनम् (Bengal, 1983 University publication burdwan)
- गौडमिथिलयोः सारस्वतसमन्धः (रमानाथ आ वोलुमे, 1968)
- शङ्करमण्डणयोः विवादः (पाटलश्री, पटना)
- उत्तरकुरुदेशः (द्वारभङ्गा, 1978)
- भारतस्य शक्तेरूपासना (वर्धमान, 1982)
- श्रीमद्भगवद्गीता महाभारतश्च (संघसाथी, आश्विन, 1406 वङ्गाब्द)
- ऋक्छेदः देवीसुक्तद्ध (निवन्धावली)
- राम शृन्वन्तु (कोलकाता)

<u>जीवनालेख्यविषयकम् रचनादय</u>:

- पण्डितपञ्चाननतर्कारक्षः
- कालिपदतकचािर्यः
- राहुलसंकृत्यायनः
- कालिदासविद्याविनोदः प्रभूतयः।
- प्राप्तोपाधयः पुरस्काराश्च-

- विद्यावारिधिः (नालंदामहाविहार)

<u>राष्ट्रपतिपुरस्कारः (1991)</u>

- महामहोपाध्यायः (लालवाहादुरशास्त्री, देहली, 1996)[१]
- प्रज्ञाभारती (सत्यानन्ददेवायतनम्)
- पण्डितईश्वरचन्द्रविद्यासागरस्वर्णपदकम् (Asiatic society of Bengal)
- न्यायलङ्कारः (सुरभारतीपरिषद्)
- सारस्वतरवः (कोलकाता)
- General president award (Chennai)
- यामिनीरानिस्मृतिपदकम् (Kolkata)
- उयेमेनशर्मा award of distinction (मन्दाकिनीसंस्कृतविद्वतपरिषद्)
- कोलकाता, 1997) पञ्चाननशास्त्रीमेमोरियल फलकम् (यादवपुरविश्वविद्यालयः, क
- नवद्वीपविबुधजनीसभासम्मानना (नवद्वीपः, पश्चिमवङ्गः)
- श्रीअरविन्दपुरस्कारः (अरविन्द समितिः, कोलकाता)
- पूर्वसैनिकसेवापरिषदकृतसम्मानना (पश्चिमवङ्गः) इत्यादयः।

प्राच्यदेशस्य धारकवाहककल्पाः ऋषिसदृशाः एते गुरुचरणाः आजीवनं संस्कृतमातुः सेवायां स्वयमेव नियोजितवन्तः। "विद्या ददाति विनयम्" इत्यस्य साक्षात् प्रतिमूर्तिः आसीत् अनन्तलालठाकुरपादाः। निवन्धावलीग्रन्थे तस्यैव प्रतिफलम् दृश्यते। भारतीयसंस्कृतेः शक्तिस्वरूपिणी वाग्देव्याः वर्णनम्, हिन्दूधर्मे नारीसंस्कारः, देवीसुक्ते अम्भृणीदेव्याः स्वरूपम् वा भवतु सर्वत्रापि तस्य निपुणतायाः विचरणम् सुलभं अस्ति।

महाभारतस्य समाजदर्शनम्, डिण्डिकरागः, चतुर्वर्गविचारः, पतितजनस्य प्रायश्चित्तविधानम् गणशासनम् तस्यैव वर्णनया मुर्तरूपेण समक्षम् आयाति। इतोपि चतुवर्गेषु किं नाम धर्मः ? को वा हिन्दूः? तेषां भौगोलिक वासस्थानम् कुत्र आसीत् ? एते प्रत्राः तस्य

मौलिकशोधकार्य भूयो भूयः दृश्यते। वस्तुतः प्रादेशिक साहित्ये, लोकगाथायाम्, पितृकल्पे, स्थापत्ये असमुद्रजनजीवने तस्य विचक्षणता दृक्पथमेति। पण्डितप्रवराः अनन्तलालगुरुपादाः समग्र जीवने वहुधा प्रशंसिताः पूजिताश्च वर्तन्ते। तेषु अभिज्ञानेषु अभिनन्दनपत्रमिदम् उल्लिख्य विरमामि विस्तरात्-

श्रीगोविन्दकुमारठाकुरसुधीस्तातः पदाध्यापकः।[१०]
माता पुण्यवती महागुणवती सव्रता ।।
भारद्वाजकुलोद्भवो गुणनिधिः सम्प्राप्य पित्रोर्महः।
शिष्यः श्रीफणिभूषणस्य सुधियः श्रीमानन्तो गुरुः।।
न्याये गौतमपादतुल्यमतिमान् वैशषिके काश्यपः।
धत्ते यः प्रतिभां विचित्रविविधां सञ्चिनन्ते सर्वदा।
ग्रन्वग्रन्थिनिवारणे कृतमतिः वौद्धशास्त्रेध्वपि।
तस्मै मान्यवराय पूज्यगुरवे भूयो नमः सादरम्।।
नानाग्रन्थनिबन्धलेखेनपटुर्वक्ता विपश्चिद्वरः।
धन्यः श्रीमदनन्तलाल विवुवधो
वन्धः सदा भूतले।।

मार्गशीर्षस्य दशमे दिनाङ्के १५१६ सने बङ्गदेशे एते महात्मनः लौकिकजीवनं गोविन्दलोकं सम्प्राप्तवान्।

<u>अवधेयग्रन्थाः -</u>

१. निवन्धावली(पत्रसंख्या ३८)

२. अनन्तश्रद्धाञ्जलि :(पत्रसंख्या ३४)

३. निवन्धावली(पत्रसंख्या १२४)

४. Indological Epistemology of Bengal (A review,1996,page no.142)

५. अनन्तश्रद्धाञ्जलि:(पत्रसंख्या ३८)

६. Philosophical Essays – Prof.Ananatalal Thakur Felicitation, volume 1,Sanskrit pustak bhander (Calcutta,1978)

७.अनन्तश्रद्धाञ्जलि: (पत्रसंख्या ६७)

८. Philosophical Essays- Prof.Ananatalal Thakur Felicitation, volume 2,Sanskrit pustak bhander (Calcutta,1985)

९. अनन्तपरिचयः(राज्यपुस्तकपर्षत्, पत्रसंख्या ६७,१९९८)

१०. प्राच्यविद्वांसः (Kolkata New age publishers pvt.ltd,2003,page56)

जयतु संस्कृतम् जयतु भारतम्।

आधुनिक संस्कृत साहित्य में श्रीईशत्त शास्त्री कृत प्रताप विजय

कुसुमलता टेलर
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग
जनार्दन राम नगर राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर

भारत में पृथ्वीराज चौहान के शासन के पश्चात बारहवीं शताब्दी में मुस्लिम शासन और सत्ता के स्थापित हो जाने के पश्चात राज दरबारों में अरबी व फारसी का ही वर्चस्व रहा जिसके कारण आसफविलास, जहाँगीरचरितम् शेकशुमोदयम्, पारसीकप्रकाश, चिमनीचरितम् जैसी रचनाएँ इस काल में लिखी गयी।

इस कारण कुछ विद्वान् पण्डित जगन्नाथ को ही संस्कृत का अन्तिम कवि, अलंकारशास्त्री व आचार्य मानते है। सत्रहवीं शताब्दी में ही संस्कृत रखना का युग भी समाप्त मानते हैं। किन्तु स्वातंत्र्योत्तर काल में भी सन् 1901-2000 ई. तक संस्कृत में 350 महाकाव्यों की रचना हुए ऐसा विद्वानों ने स्वीकार किया। यही नहीं इस काल में ही संस्कृत की अनेक विधाए नाटक, गीतिकाव्य, गद्यकाव्य, उपन्यास, एकाकी व सानेट (कविताओं) की रचना भी हुई।

पडित अम्बिकादत्त व्यास ने उन्नीसवीं शताब्दी में ही अपना प्रसिद्ध उपन्यास शिवराजविजय की रचना की। हरिदास सिद्वान्तवागीश, मूलशंकर माणिक्यलाल याज्ञिक तथा मथुरानाथ दीक्षित के नाटकों की रचना भी अगले चरण में हुई। उमापत्ति दिवेदी, काशीनाथ तथा हरिदास सिद्धान्त वागीश के महाकाव्य(पारिजातहरण, रुक्मिणीहरण) भी इस काल की रचनाएँ है। अतः कुछ विद्वान व इतिहासकार अम्बिकादत्त व्यास से ही आधुनिककाल का श्रीगणेश मानते हैं।[1] इतिहासकार व सस्कृतवेता आधुनिक संस्कृत साहित्य का अर्थ बताते है अतीत, अनागत तथा वर्तमान। ये सभी काल के धर्म है। अत: आधुनिक सस्कृत साहित्य का अर्थ हुआ-आधुनिक काल से जुड़ा हुआ साहित्य। पण्डित बलदेव

उपाध्याय, नागेश भट्ट के काशी में आगमन को आधुनिककाल का अवतरण मानते हैं।[2]

प्रोफेसर राजेन्द्र मिश्र व डॉ. जगन्नाथ पाठक एवं प्रो. राधावल्लग त्रिपाठी भी आधुनिक संस्कृत साहित्य का काल क्रम 17 वीं शताब्दी से मानते है। 1785 ई. में चार्ल्स वेल्किस ने भगवत गीता का अग्रेजी अनुवाद प्रकाशित किया यह किसी भी यूरोपीय विद्वान के द्वारा मूल संस्कृत ग्रंथ का अध्ययन करके किया जाने वाला पहला अंग्रेजी अनुवाद था। इसके दो वर्ष पश्चात् ही सर विलियम जोन्स ने कालिदास के अभिज्ञान शाकुतलम का संपादन तथा अंग्रेजी अनुवाद आरंभ किया। जॉन्स के द्वारा तैयार किया गया कालिदास के नाटक का मूल संस्करण अग्रेजी अनुवाद के साथ 1789 में प्रकाशित हुआ। यह साहित्यिक व सांस्कृतिक जगत में यह एक युगान्तकारी घटना थी अत: संस्कृत साहित्य के आधुनिक साहित्य का कालक्रम 17वीं शताब्दी माना जा सकता है।[3]

ऐसे ही आधुनिक साहित्य के एक कवि, लेखक एवं सम्पादक श्रीईशदत्त शास्त्री का नाम भी है। ईशदत्तशास्त्री पूर्वी उत्तर प्रदेश की महान विभूतियों में से एक हैं। ये अपनी लेखनी व वाणी दोनो के धनी रहे हैं जिसके कारण आधुनिक कवियों में इनका नाम बड़े ही आदर व सम्मान के साथ लिया जाता है।

श्रीईशदत्त शास्त्री का जन्म मार्गशीर्ष कृष्ण अष्टमी मंगलवार को सन् 1915 में उत्तर प्रदेश के आजमगढ जिले के मूंगमास, गाँव में हुआ।[4] ये कवि नरेश शाण्डियाल वंश के थे व पाण्डे की उपाधि धारण करते थे। ये सनातन धर्म के अनुयायी थे। इनके दादा वैधना नामक एक महान विद्वान थे। पिता श्री पण्डित अम्बिकादत्त पाण्डे व्याकरण के ज्ञाता थे। और लखीमपुर खीरी जिले में सनातन धर्म कॉलेज में प्राध्यापक थे।[5] आपकी माता एक परमपवित्रा महिला थी जिनका समाज में उसका बहुत ही आदर व सम्मान था। ईशदत्त शास्त्री ने राजकीय संस्कृत महाविद्यालय जो वर्तमान में सम्पूर्णानन्द विश्वविद्यालय कहलाता है वहाँ से साहित्याचार्य की उपाधि प्राप्त की। अपनी प्रतिभा के बल पर भारतश्री का सम्पादन किया। कुशल सम्पादक होने के कारण साहित्यगौरव की तथा श्रीश की पदवी प्राप्त

की।[6] श्रीकाशी पण्डित सभा वाराणसी ने सन् 1934 में सुकविशिरोरत्नम् की उपाधि से विभूषित किया। संस्कृत प्रचारक समिति प्रज्ञा ने इन्हें 1938 ईस्वी में अभिनंदन पत्र समर्पित कर गौरवान्वित हुई।[7]

श्रीईशदत्त शास्त्री ने अपनी प्रतिभा के बल पर काव्यतीर्थ व साहित्यरत्न की उपाधियां भी प्राप्त की। ये अत्यन्त ज्ञानी व विद्वान होने के कारण इनकी हिन्दी व संस्कृत पर अच्छी पकड़ थी। जिसके कारण हिन्दी में विद्रोही , झाँसी की रानी (काव्य), कालिदास, सम्राट विक्रमादित्य और नवरत्न नामक शोधकृति की रचना व प्रताप विजय नामक खण्डकाव्य की रचना जिससे इन्हें अत्यन्त प्रसिद्धि प्राप्त हुई।[8]

प्रताप-विजय एक ऐतिहासिक खण्डकाव्य के रूप में प्रसिद्ध है। प्रताप विजय पद्य में रचित है। काव्य का प्रधान रस वीर है। इस काव्य में कवि ने प्रताप के जीवन के विविध प्रसगों को कुशलता पूर्वक उपस्थित किया है। इस खंडकाव्य के द्वारा मेवाड़ नरेश महाराणा प्रताप के शौर्य और चरित्र का गान किया है। महाराणा प्रताप अपनी स्वतंत्रता की प्राप्ति एवं राष्ट्र गौरव के लिए अपनी स्त्री व पुत्र सहित कई वर्षों तक पर्वतों में भटकते रहे वे अपनी दुखों को अपने में ही समाहित करने वाले आर्य जाति के रक्षक होने के साथ भारतीय धर्म व संस्कृति के पालक थे। इस खंडकाव्य में कवि ने तत्कालीन समय में देश की स्थिति को मध्ये नजर रखते हुए और विशेषकर युवाओं को प्रेरित करने के लिए इस काव्य की रचना की। इस काव्य में कुल 175 पद्य है। जो कुल 11 खण्डों में विभाजित है।[9]

प्रतापविजय काव्य के माध्यम से राष्ट्रिय संस्कृति के वाहक महाराणा प्रताप का गौरवगान किया है। कवि ने सर्वप्रथम सस्कृत काव्य परम्परा के अनुसार सरस्वती माता का मंगलाचरण किया है। इस काव्य के द्वारा जब देश में समस्त जनमानस जर्जर के समान हो गया था ऐसे समय में कवि ने अपनी वाणी से जनमानस को जागृत करने के लिए प्रताप विजय काव्य के माध्यम से शखनाद किया-

सदैव गगा-यमुना-सरस्वती नदी-तरगाऽऽलुलितो महामहाः
जगत्त्रयेश-प्रिय वेषवान् हि यः, स एषः देशः किल कस्य न प्रियः।। [10]

कवि ने अपने काव्य के माध्यम से महाराणा प्रताप के चरित का वर्णन करते हुए कहा कि-

अभूत्पुरा भारत-भा-विभासकः
स एकलिङ्गस्य सवडधन्युपासकः।
महाबली दुर्गचित्तौर -पासकः
प्रतापसिंहः परताप नाषकः।।[11]

कवि ने अपने काव्य के माध्यम से महाराणा प्रताप ने जो प्रतिज्ञा ली थी उसका वर्णन करते हुए कहा कि जब मेरा यह चिन्ह प्रभाव भारतवर्ष पुन: अपनी पूर्ण गरिमा को नहीं प्राप्त कर लेगा तब तक में श्रेष्ठ नगरी अर्थात अपनी जन्मभूमि चित्तौड तक नहीं जाऊगा। [12]

महाराणा जैसे वीर योद्धा थे वैसे ही उनका घोडा चेतक भी था। जब वह युद्ध भूमि में आता था तो मानो शत्रुओं के हृदयों को कंपा देता था-

खुराग्रभागेन विदारयन् भुवं, निषामयंष्चाप्रियभैरवं रवम्।
क्षणप्रभोत्पातनिपातचञ्चला न कं चकाराऽऽर्ततरं स चेतकः।।[13]

ऐसे श्रेष्ठ घोडे से युक्त वीर प्रतापी एवं प्रतिज्ञा करने वाला एक सामान्य व्यक्ति नही हो सकता। यही नहीं ऐसी कई प्रतिज्ञाएं महाराणा प्रताप ने की थी जिसकी गौरव गाथा आज भी मेंवाड़ सहित संपूर्ण देश में गाई जाती है। प्रताप विजय में महाराणा प्रताप की वीरता का वर्णन करते हुए कहा है कि-

खड्गेन खंडयति कोऽपि विपक्षिपक्ष
कश्चित् करोति कुटिलच्छूरिकाप्रहारम्।
कश्चिद् भिनत्ति किल सिंहनखेन कश्चित्,
कश्चित् कृपाणफलकेन खलान् छिनत्ति।।[14]

श्री ईशदत्त शास्त्री ने अपने प्रताप विजय नामक ग्रंथ में महाराणा प्रताप ने जहां मानसिंह के साथ युदध किया उस हल्दीघाटी का ऐसा वर्णन किया है मानो वह सहस्त्रधारी गंगा हो-

अत्रैव वीरजनशोणितशोणगगा
भूत्वा सहस्त्रपथगा गतिमाततान।
यदर्शनेन रसनेन च मज्जनेन

दैवेः सहैव ऋषयः पितरोऽपि तृप्ताः।।[15]

अर्थात् हल्दीघाटी में ही वीसे के रक्त से समुद्रभूत लाल गंगा हजार धाराओं से बह चली। जिसके दर्शन पान और मंजन से देवता ऋषि तथा पितृगण तृप्त होते हैं।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्रताप विजय नामक खंडकाव्य के माध्यम से ईशदत्त शास्त्री जी ने युवाओं को प्रेरित किया है कि आगे बढ़ो अपने स्वाभिमान को मत त्यागो राहों में मुश्किले अवश्य आएगी किंतु उनसे डरना नहीं है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची:

1 प्राचीन भारत का साहित्यिक एवं सास्कृतिक इतिहास, प्रो. निरजन सिंह योगनणि, पृष्ठ संख्या 104

2 संस्कृत वाङमय का वृहत् इतिहास, पण्डित बलदेव उपाध्याय, सप्तम खण्ठ भूमिका पृष्ठ संख्या 4

3. सस्कृत साहित्य के समय इतिहास, राधावल्लभ त्रिपाठी, चतुर्थ खण्ड, आधुनिककाल (1801-2017) प्रकाशक न्यू भारतीय बुक कॉरपोरेशन दिल्ली भारत, प्रथम संस्करण , अध्याय 1 पृष्ठ सख्या 1704

4 प्रताप-विजय : प्रणेता ईशदत्तशास्त्री, सम्पादक आचार्य प्रभात शास्त्री , साहित्याचार्य , कवि एवं काव्य परिचय, प्रकाशक - देवभाषा प्रकाशन दारागंज प्रयाग प्रकाशन वर्ष -1980, पृष्ठ संख्या 7

5 वही, पृष्ठ संख्या 7

6. वहीं पृष्ठ संख्या 8

7 वहीं, पृष्ठ संख्या 9

8 वहीं, पृष्ठ संख्या 9

9 प्रतापविजय प्रणेता-ईशदत्तशास्त्री व्याख्याकार आचार्य शिवप्रसाद द्विवेदी , प्रकाशक -चौखम्बा

सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी संस्करण 2007.

10 वही , उपक्रम , श्लोक न. 27

11 वही प्रतापी प्रताथ श्लोक न. 34

12 यावत्प्रभाहतमदो मम भारतं मा। भूयः प्रभारतमल भुवने भवेन्न। तावत्कदापि कथमप्यपि नैव नूनं यास्यामि जन्मनगरं नगरं गरीय:।।

वही , प्रताप प्रतिज्ञा श्लोक न, 51

13 वही चेतक चंडक्रमण श्लोक न. 128

14 यही प्रतापविजय श्लोक न. 138

15 वही हल्दीघाटीपरिचय श्लोक न. 165

भाषा : एक सांस्कृतिक वातायन

डॉ. एकता वर्मा
सहायक प्राध्यापक
स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग
मगध विश्वविद्यालय ,बोधगया बिहार

शोधसार------मनुष्य सम्प्रेषण एवं समन्वयसूत्र मौखिक साधन भाषारूपी अद्वितीय विशिष्टता के कारण ही इस लौकिक संसार में सर्वोत्तम जीव के रूप में जाना जाता है। ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा मनुष्य विचाराभिव्यक्ति कर ज्ञान-विज्ञान के सभी क्षेत्रों में अपना प्रभुत्व स्थापित किए हुए है। भाषा शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के भाष् धातु भ्वादिगणीय से हुई है। भाष् धातु का अर्थ है- भाषा व्यक्तायां वाचि अर्थात् व्यक्त वाणी। "भाष्यते व्यक्तवाग् रूपेण अभिव्यज्यते इति भाषा" अर्थात् व्यक्त वाणी के रूप में जिसकी अभिव्यक्ति की जाती है,उसे भाषा कहते हैं। निरुक्तकार महर्षि यास्क ने और अष्टाध्यायी के रचयिता महावैयाकरण पाणिनी ने स्वतंत्र रूप से भाषा पर कोई टिप्पणी नहीं दी है,परंतु दोनों ने संस्कृत के लिए भाषा शब्द प्रयुक्त किया है। महर्षि पतंजलि ने लिखा है कि -"व्यक्ता वाचि वर्णा येषां तं इमे व्यक्त वाच:"। अमरकोश में भी भाषा को वाणी का पर्यायवाची बताया गया है- ब्राह्मी तु भारती भाषा गीर वाग् वाणी सरस्वती भाषा वाक् शक्ति का समाजीकरण है। भाषा यादृच्छिक वाचिक ध्वनि-संकेतों की वह पद्धति है, जिसके द्वारा मानव परस्पर विचारों का आदान-प्रदान करता है। इसके द्वारा किसी भी काल की संस्कृति की विशिष्टता का सम्यक् प्रकार से अवबोध हो पाता है। सांस्कृतिक पद संस्कृति का विशेषण है। वातायन संज्ञा शब्द है जिसका अर्थ गवाक्ष, खिड़की, झरोखा आदि होता है।

शब्द संकेत- सम्प्रेषण, ध्वन्यात्मक, यादृच्छिक, संस्कृति, सांस्कृतिक, वातायन, गवाक्ष आदि।।

मनुष्य जीवन के लिए भाषा एक महत्वपूर्ण साधन है। भाषा के अभाव में मनुष्य अपूर्ण है और अपने गौरवशाली इतिहास और परंपरा से विच्छिन्न है। वस्तुत: भाषा और लिपि, भावाभिव्यक्ति के दो पहलू है। सामान्य रूप से भाषा को वैचारिक आदान-प्रदान का सशक्त माध्यम स्वीकृत किया जाता है। भाषा हमारे व्यक्तित्व के आभ्यंतर अभिव्यक्ति का सबसे अधिक विश्वसनीय, प्रभावशाली माध्यम है, जो हमारे अंतस निर्माण, समग्र व्यक्तित्व-विकास, सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान का भी शक्तिशाली साधन है। वैदिककाल से ही हमारी और हमारे संस्कृति की पहचान भाषा से व्यक्त की जाती रही है, जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण वर्तमान की भाषा में परिलक्षित होता है। मानव अपने चिंतन एवं संप्रेषण को भाषा के द्वारा ही हस्तांतरित करने में सक्षम होता है। भाषा साहित्य ,संस्कृति एवं सामाजिक क्रियाकलाप की नींव है। हमारी बौद्धिक, मानसिक, संवेगात्मक एवं सामाजिक विकास भाषा से ही संभव हो पाते हैं। "भाषा से मनुष्य का विकास हुआ है" इस कथन में कोई अतिशयोक्ति नहीं है। इस बात की पुष्टि इस तथ्य से हो जाती है कि इस संसार में मनुष्य के अलावा अन्य भी जीव-जंतु है,परंतु वे अपने विकास एवं चिंतन का संप्रेषण उस तरह से नहीं कर पाते, जिस तरह से मनुष्य करने में समर्थशाली है। फलस्वरुप, भाषा सांस्कृतिक पहचान के लिए एक प्रमुख कारक है- परिवार, समाज, देश, विदेश–सर्वत्र पारस्परिक संपर्क स्थापित करने का सशक्त माध्यम भाषा ही है, जो कि भाषा की व्यापकता को भी द्योतित करता है। भाषा के अभाव में मनुष्य की वैयक्तिक अथवा सामाजिक स्थिति भी निरुपयोगी बन जाती है। स्वयं की वैयक्तिक एवं सामाजिक स्थिति को उपयोगी बनाने हेतु मानव भाषा के किसी न किसी रूप की सहायता अवश्य लेता है। इस संदर्भ में आचार्य दण्डी महोदय ने अपने “काव्यादर्श” में स्पष्ट कहा है कि-

इदमन्धन्तम: कृत्स्नं जायते भुवनत्रयम्।।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसार न दीप्यते।।[1]

भाषा का हमारे जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। बहुधा व्यावहारिक दृष्टिकोण से कम ही लोग इस पर ध्यान देते हैं,कुछ तो इसे सामान्य गुण मानकर सहजता से स्वीकार कर लेते हैं। जबकि ऐसी बात नहीं है, क्योंकि भाषा स्वयं में असाधारण विशिष्टता को आत्मसात किए हुए है। ऋग्वेद के एक मंत्र में वाग्देवी(वाणी)को देवों ने उत्पन्न किया और सभी प्राणी उसे बोलते हैं। वह दिव्य वाक्तत्त्व ऐश्वर्य और बल दोनों को देनेवाला है। वाक् कामधेनु है सब कामनाओं को पूर्ण करनेवाली है-

देवी वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपा: पशवो वदन्ति।।[2]

ऋग्वेद में ही (१०.११४.८) वाक् तत्त्व सहस्त्र प्रकार से व्याप्त है। जितनी और जहां तक द्युलोक और पृथिवी प्रतिष्ठित है, उतनी और वहाँ तक वाक् शक्ति प्रतिष्ठित है। आचार्य भर्तृहरि ने भाषा को विश्वनिबंधनी (विश्व को मिलानेवाली या जोड़नेवाली) की संज्ञा से अभिहित किया है। संसार की प्रत्येक भाषा स्वभाषा-भाषी को एकता के सूत्र में बांधने का अद्वितीय कार्य करती है। सांस्कृतिक पद संस्कृति का विशेषण है। संस्कृति किसी भी समाज के मूल में व्याप्त गुणों एवं अवगुणों के समवेत स्वरूप का अभिधान है। भाषा सांस्कृतिक पहचान के लिए एक प्रमुख घटक के रूप में मानी जाती रही है। लोगों के जीवन में सांस्कृतिक पहचान को द्योतित करने के लिए भाषा बड़ी भूमिका निभाती है, यथा- अंग्रेजी कई देशों में मुख्य भाषा के रूप में बोली जाती है तथा चीन देश में चीनी भाषा भी बोली जाती है अर्थात् भाषा संचार के लिए एक शक्तिशाली उपकरण है। संस्कृति का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण पहलू भाषा है, किसी की पहचान को व्यक्त करने का सबसे सरल एवं सहज साधन भाषा ही

---

[1] काव्यादर्श (१ -४)

[2] ऋग्वेद (८ -१०० -११)

है, क्योंकि यह संचार का सबसे परिष्कृत रूप है, जो एक लंबे समय से प्रवाहित होता आ रहा है। किसी क्षेत्र की संस्कृति, उसका इतिहास और उसका वर्तमान स्वरूप- उस क्षेत्र के लोगों के द्वारा बोले जानेवाली भाषा से स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। भाषा भी संस्कृति के सबसे महत्वपूर्ण पहलू में से एक है, क्योंकि यह संस्कृति का सबसे महत्त्वपूर्ण और प्रभावोत्पादक पहलू है। अमरकोश में भाषा को वाणी का पर्यायवाची बताया गया है। ब्राह्मी तु भारती भाषा गीर वाग् वाणी सरस्वती।

भाषा वाक् शक्ति का समाजीकरण है। वाक्यपदीय में भर्तृहरि ने वाक् शब्द तत्त्व सांकर्य के विषय में कहा है-

अनादिनिधनं ब्रह्म शब्दतत्त्वम यदक्षरम्।
विवर्तते अर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यत:।।[1]

सामान्यतः उत्पत्ति और नाश से रहित शब्द तत्त्वात्मक ब्रह्म जो अक्षर या ओड़्कार के नाम से जाना जाता है, जिससे जगत की प्रक्रिया या विकार अर्थ के रूप में परिणत होते हैं। सामान्यतः उत्पत्ति और नाश से रहित शब्द तत्त्वात्मक ब्रह्म जो अक्षर या ओड़्कार के नाम से जाना जाता है, जिससे जगत की प्रक्रिया या विकार अर्थ के रूप में परिणत होते हैं। जिस प्रकार चूर्ण, पिंड, कपाल, घट आदि विकार मिट्टी रूप प्रकृति से अन्वित देखे जाते हैं, वैसे ही गो, घटादि विविध रूपों में अभिमत संपूर्ण शब्दात्मक और अर्थात्मक विकारों के ब्रह्मरूप प्रकृति से अन्वित होने के कारण तथा यह विकार शब्द ही विविध विकारों में परिणत हो रहा है। अतः इन विकारों में शब्द स्वरूप की स्वीकृति से और शब्द ही ज्ञान, ज्ञाता होने के कारण ब्रह्मशब्द तत्त्व के नाम से जाना जाता है। प्रारंभ से ही भाषा में संस्कृति का भावोन्मेष और समाज के युगानुरूप जो प्रत्यक्षीकृत होता है यह सदा से स्पष्ट होता रहा है।

---

[1] वाक्यपदीय, ब्रहकाण्ड-१

सरितामिव प्रवाहा: तुच्छा: प्रथमं यथोत्तरं विपुला:।
ये शास्त्रसमारम्भा भवन्ति लोकस्य ते वन्द्या।।

अर्थात् नदी के प्रवाह के समान शास्त्र का भी प्रवाह प्रारंभ में छोटा होता है। बढ़ते बढ़ते कालांतर में वह विशाल बन जाता है। ऐसे ही लोक प्रसिद्ध शास्त्र आदर के भाजन होते हैं। भाषा एक प्रकार का चिह्न है, जिसे हम उन प्रतीकों के रूप में समझ सकते हैं, जिनके द्वारा मनुष्य अपना विचार दूसरों पर प्रकट करता है। ये प्रतीक भी कई प्रकार के होते है। मानव-सभ्यता के क्रमशः विकास में भाषा को ईश्वरप्रदत्त माना जाता रहा, परंतु, अठारहवीं सदी में विद्वानों ने भाषा को ईश्वरप्रदत्त वरदान मानना अस्वीकार कर दिया और वे उसकी उत्पत्ति के संबंध में विभिन्नवाद प्रस्तुत करने लगे। चूँकि भाषा सांस्कृतिक वातायन का एक विशिष्ट पहलू है, जिससे परस्पर वाणिज्य और यात्रा की वृद्धि के कारण भाषाओं के व्याकरण में आदान-प्रदान का खेल प्रारंभ से ही होता रहा, जिसके परिणामस्वरूप परस्पर ज्ञान-प्राचुर्य से मानव प्रभावित होते रहे। उत्तरोत्तर भाषा के विषय में एक विशिष्ट बात ये है कि सभी भाषाएँ अपने पूरे इतिहास में सदैव ऐसे लोगों के द्वारा भी बोली जाती रही है जिन्हें पढ़ना-लिखना भी नहीं आता था। ऐसे लोगों की भाषा भी उतनी ही स्थायी, नियमित एवम् समृद्ध होती रही है, जितने कि लेखन को जाननेवालों की भाषा। अर्थात् ऐसे वाहक के द्वारा भाषा का सांस्कृतिक प्रचार-प्रसार पर्याप्त रूप से होता रहा है। भाषा ही एक ऐसा साधन है जो ज्ञान को प्रकाशित करती है। इसके बिना मानव की अत्यंत दयनीय स्थिति होती। वाक्यपदीय में कहा गया है-

वाग् रूपता चेदुत्क्रामदेवबोधस्य शाश्वती।
न प्रकाश: प्रकशेत सा हि प्रत्यवमर्शिनी।।[1]

भर्तृहरि के कहने का तात्पर्य है कि ज्ञान की नित्य वर्तमान रहने वाली स्वाभाविक वाग् रूपता यदि कदाचित नष्ट हो जाए या

[1] वाक्यपदीय १ -११५

ना मानी जाए तो प्रकाश अर्थात ज्ञान ज्ञान ही नहीं रह जाएगा, प्रकाश का जो स्वकीय प्रकाशताख्य व्यापार है ,वह वाग् रूपता के ना रहने पर नहीं होगा, क्योंकि वह वाग् रूपता वस्तु का निरूपण करनेवाली है। अभिव्यक्ति के सर्वाधिक विश्वसनीय माध्यम के रूप में इसने हमारे पहचान एवम् अस्तित्व को स्थापित करने में मानव-जाति का बहुत ही सहयोग किया है। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो, भाषा का संस्कृति के साथ संश्लिष्ट संबंध है क्योंकि यह मानवीय अभिव्यक्ति का अद्वितीय माध्यम होने के कारण संस्कृति का मुख्य अंग है और उसे निरूपित भी करती है।

ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में भाषाविज्ञान के महोपाध्याय प्रो. सईस ने “साइंस ऑफ लैन्ग्वेज” के भाग १ ,पृष्ठ १ में स्पष्ट किया है कि ऋग्वेद के एक सूक्त में वैदिक-ऋषियों का वाक्-तत्त्व के विषय में जो वक्तव्य है, वह अत्यंत गंभीर, विचारपूर्ण तथा दूरदर्शितापूर्ण है।[1] मनुष्य की आदिम अवस्था के अव्यक्त नाद से अधुना भाषा का भी विकास हो रहा है और इसी कारण भाषाओं में परिवर्तन होता रहता है। चूँकि, भाषा की भूमिका सर्वत्र है और ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में मनुष्य का संपर्क नित्य एक-दूसरे के साथ होता ही रहता है। अतः भाषा का व्यवहार भी सभी क्षेत्रों में आवश्यक है। भाषा, संसार के विकास सोपानों में से एक महत्त्वपूर्ण अंग है। यह सर्वविदित है कि भाषा धरोहर के रूप में हमें संरक्षित और परिष्कृत करने की आवश्यकता प्रारंभ से ही रही है। सामान्यतः भाषा की विविध विधाओं में क्षेत्र विशेष के परिवेश का सांगोपांग-चित्रण प्रस्तुत होता है। भाषा का परिवेश वास्तविक रूप से बहुभाषिक होता है। अत्यधिक बोलचाल में आनेवाले शब्दों को भी भाषा की बात करते हुए अन्य भाषा की बहुप्रचलित शब्दों की तरह ही लिया जाता है। स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, भाषिक-कौशलता और

---

[1] अर्थविज्ञान और व्याकरण दर्शन , भूमिका पृष्ठ २०

वास्तविक रूप से तार्किकता को विकसित करने में भाषा का महत्वपूर्ण योगदान होता है। मानवीय व्यवहार से संबंधित कोई भी रीति रिवाज या पद्धति यदि पीढ़ी दर पीढ़ी चलती चली आती है या हस्तांतरित होती रहती है, तो उसे सरल शब्दों में संस्कृति कहा जाता है। संपूर्ण चराचर जगत में मनुष्य ही एक ऐसा विशिष्ट प्राणी है, जो भाषा के कारण एक ही समय में कई सामाजिक संबंधों की जटिल परिधि को अपने साथ लेकर चलता है और हर एक व्यक्तिगत, सामाजिक संबंधों के लिए अलग-अलग रूप से अपने व्यक्तित्व को स्थापित करता है। सामाजिक संबंध मानव के व्यवहार में अत्यंत गहराई से समाहित है। चूँकि वह अपने प्रत्येक भूमिकाओं के लिए सचेत और सजग रहता है। भाषा और संस्कृति का आपस में बहुत ही सुंदर संबंध है, क्योंकि हम भाषा सीखे बिना संस्कृति को आत्मसात् नहीं कर पाएंगे। किसी भी भाषा को सीखते समय उस भाषा की संस्कृति को समझना महत्वपूर्ण होता है क्योंकि भाषा की जड़े संस्कृति में गहराई तक समाहित होती है। भाषा की विविधता की तरह हर किसी की अपनी अलग-अलग संस्कृति होती है। एक सामाजिक समूह के अंतर्गत संस्कृति और भाषा मानवीय विश्वासों, वास्तविकताओं और कार्यों को परिभाषित करती है, अर्थात् संस्कृति और भाषा के बीच एक अटूट संबंध है। प्राप्त तथ्यों के आधार पर सामान्यतः भाषा में होनेवाले परिवर्तन संस्कृति के बदलते मूल्य का भी प्रतिनिधित्व करते हैं। वस्तुतः एक को जानने के लिए दूसरे का ज्ञान आवश्यक है। अपने जीवन में हम जिस भाषा और संस्कृति का अनुभव करते हैं, उसका हमारे व्यक्तित्व पर अमिट प्रभाव पड़ता है। संस्कृति हमें दूसरों के साथ किस तरह व्यवहार करना है, यह तो बतलाती ही है तथा विश्वासों और नैतिकता को भी परिमार्जित करती है। हम अपने समान विचारवाले लोगों के साथ संपर्क भी स्थापित कर पाते हैं। फलस्वरूप, समाज में हमारी भावना सभी के प्रति मजबूत, सार्थक एवम् समर्थ होती है। दूसरे दृष्टिकोण से यदि

हम देखे तो, भाषा एक ऐसा संसाधन है जो हमें अपनी संस्कृति को संप्रेषित करने की अनुमति देता है। भाषा का उपयोग विचारों और विश्वासों को व्यक्त करने के लिए किया जाता है। अतः भाषा संस्कृति के वातायन का एक समर्थशाली माध्यम है। लोक में जितने भी कार्य करने के नियम है उन सब के मूल में शब्द है, बिना शब्द के उच्चारण के कोई कार्य नहीं हो सकता है। बालक भी पूर्व जन्म के शब्द भावना नामक संस्कार के द्वारा ही अपना कार्य करता है, हमारे व्यवहारों की तरह बालकों के भी व्यवहार शब्द भावना के रूप में स्थिर जन्मांतरीय शब्द से ही होते रहते हैं।[1] संसार में ऐसा कोई भी ज्ञान नहीं है, जो बिना शब्द के संगम के होता हो। अतः सब ज्ञान शब्द से ही प्रतिभाषित होते हैं अर्थात् यह समझना चाहिए कि प्राणी के समस्त ज्ञान में शब्दरूपता होती है, जैसा कि भर्तृहरि ने वाक्यपदीय में वर्णित किया है।[2] शब्द ब्रह्म की आध्यात्मिक धारणा समस्त जैविक के अस्तित्व के एकत्व को भाषायी रूप से निर्दिष्ट कर सभी व्यक्तिगत घटनाओं के आधार पर स्थापित है। संसार की प्राचीनतम एवं प्रथम भाषा के रूप में संस्कृत का महत्त्व ऐतिहासिकता एवं समृद्धि के कारण कल भी था, आज भी है और कल भी रहेगा। ऐतिहासिकता की यदि बात करें तो उस दृष्टि से यह संसार की सभी भाषाओं के जननी है। भारतीय आर्ष ग्रंथों का समस्त ज्ञान इसी विशिष्ट एवं गौरवशाली भाषा में निबद्ध है। वास्तविकता के आधार पर ब्रह्म को बिना आरंभ और अंत के माना गया है। एक अवधारणा के रूप में जो घटनाओं के लौकिक अनुक्रमों की विशेषताओं के अधीन नहीं है, चाहे वह ब्रह्म बाह्य रूप से हो अथवा मानसिक घटनाओं के रूप में अनुभूत हो, संज्ञान में भी हो, शब्द-सिद्धांत शब्द ब्रह्म-हमारी संज्ञानात्मक अवस्थाओं की लौकिक प्रकृति के संदर्भ में परिभाषित

---

[1] (ब्रह्मकाण्ड १२२)

[2] (वही १२३)

नहीं की गई है। आगे भी भर्तृहरि ने श्लोक संख्या १२४ में बताया है कि जैसे अग्नि का प्रकाशकत्व उसका स्वरूप है, आत्मा का स्वरूप चैतन्य है, ठीक उसी प्रकार अवबोध अर्थात् ज्ञान का वाग्रूप होना भी नित्य स्वरूप ही है। इसके अभाव में तो वह उत्पन्न प्रकाश भी न प्रकाशित हो पाएगा। अर्थात् वह फिर निरर्थक हो जाएगा। अतएव,सब व्यवहारों के मूल में वाणी है क्योंकि भर्तृहरि का कहना है कि "सा सर्व विद्या शिल्पानाम कलानां चोप बंधनी"। भाषा सूक्ष्म एवं भावात्मक वस्तु के रूप में समाज में जानी जाती है, जिसमें से वाक्य स्थूल और भौतिक वस्तु है। भाषा को हम स्थायी समझ सकते हैं,परंतु वाक् अस्थायी रूप में व्यवहृत होता है! आम बोलचाल की भाषा में हम जो कुछ बोलते हैं और सुनते हैं वह वाक् का ही रूप है! भाषा के आदान-प्रदान ,दूसरे के द्वारा बोलने और सुनने की गणना सामान्यरूपेण वाक् के अंतर्गत होती है! ज्ञान-वर्धन में इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। साथ ही साथ सूक्ष्मतिसूक्ष्म और गंभीर भावों की अभिव्यक्ति में परिमार्जन भी होता है। एक व्यक्ति ज्ञात और अज्ञात अनेक भाषाओं के वाक्यों का सम्यक रीति से उच्चारण करता है, श्रोता उसे सुनकर आत्मसात भी कर लेता है और समझ भी लेता है। इससे ज्ञानी वक्ता के ज्ञान का प्रचार होता है! अर्थात् वह ज्ञान क्रमशः बढता जाता है। ऐसा नहीं है कि मानवीय भाषा केवल भाव, अभाव, मूर्त, अमूर्त के लिए ही प्रयुक्त होते है, प्रत्युत सभी प्रकारों के अर्थों की अभिव्यक्ति हेतु ये संप्रेषित किया जाते हैं। छान्दोग्योपनिषद् के सप्तम अध्याय के द्वितीय खंड में वाक् की ब्रह्म रूप में उपासना की गई है। वर्णन के क्रम में बताया गया है कि वेद, इतिहास-पुराण, तर्कशास्त्र, नीति, निरुक्त,वेद विद्या, भूतविद्या, धनुर्वेद, ज्योतिष, गरुड़, सङ्गीतशास्त्र, द्युलोक, पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, तेज, मनुष्य, पशु-पक्षी, तृण-वनस्पति, श्वापद, कीट-पतंग,पिपीलिका इत्यादि पर्यंतप्राणी धर्म और अधर्म, सत्य और असत्य, साधु और

असाधु, मनोज्ञ और अमनोज्ञ, जो कुछ भी है- उन सबको वाक् ही विज्ञापित करता है। यदि वाणी न होती तो धर्म, अधर्म, ज्ञान, अज्ञान, सत्य, असत्य, साधु, असाधु, मनोज्ञ, अमनोज्ञ का ज्ञान न हो सकता। वाणी ही सबका ज्ञान कराती है। एतदर्थ, वाक् की उपासना करनी चाहिए।[1] यास्कमुनि ने निरुक्त (१३.२३-२४) में अक्षर ब्रह्मणस्पति आदि नामों से संबोधित करते हुए उसको आत्मा, ब्रह्म आदि कहा है। हम कह सकते हैं कि मानवीय भाषा किसी भी परंपरा के साथ-साथ ही नहीं, अपितु शिक्षा के द्वारा समाज में सुस्पष्ट एवम् परिष्कृत रूप में एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक उसके अधिगम-स्तर के आधार पर संक्रमित एवं हस्तांतरित होती है! बाल्यावस्था में परिवार के अपने बड़ों तथा परिवेश के लोगों का अनुकरण करके भाषा सीखते है। यही कारण है कि पूर्व से चली आ रही भाषा का स्वरूप, प्रकृति, विशेषता, कालक्रम से निरंतर परिवर्तित, परिष्कृत और परिमार्जित होता रहा है। फलस्वरूप, उसे हम अपने भावी पीढ़ी को हस्तांतरित कर निरंतरता का क्रम बनाये रखने में अपना पूरा योगदान देते है। वेद में भी कहा गया है कि भाषा राष्ट्री राष्ट्र निर्मात्री और संगमनी- समन्वित करनेवाली शक्ति है-

“अहं राष्ट्री संगमनी वसूनाम्”।[2]

मेरे विचार से भाव-संप्रेषण हेतु समाज यदि किसी का सर्वाधिक ऋणी है तो वह भाषा है। इसी आदान-प्रदान के महत्त्व को यजुर्वेद में इस प्रकार वर्णित किया गया है-

"देहि मे ददामि ते नि मे धेहि नि ते दधे।
निहारं च हरासि मे निहारं निहराणि ते स्वाहा॥[3]

---

[1] छान्दोग्योपनिषद्

[2] (ऋग्वेद 10 - 125 - 3)

[3] (यजु० ३- ५०)

अर्थात् तुम मुझे दो, मैं तुम्हें दूँ, तुम मेरे लिए सुरक्षित रखो, मैं तुम्हारे लिए सुरक्षित रखूं ,तुम मुझे अर्पित करो और मैं तुम्हें समर्पित करूं। बिना पारस्परिक आदान-प्रदान के भाषा का विस्तार ,प्रचार ,परिष्कार कदापि संभव नहीं है।

अपने शोध-पत्र का अंत, मैं काव्यप्रकाशकार आचार्य मम्मट की इस उक्ति से करना चाहूंगी-

अपारे काव्यसंसारे कविरेकः प्रजापति:।
यथास्मै रोचते विश्वं तथेदं परिवर्त्तते।।[1]

निष्कर्ष- मेरे विचार से भाषा के प्रयोग करने समय वक्ता पूर्णतःब्रह्मा सदृश स्वातंत्र्य का ही भाव रखता है,जिस प्रकार एक कवि अपनी रचना के चयन में प्रतिपादित विषय-वस्तु हेतु स्वतंत्र होता है। कवि अपनी विशिष्ट कल्पना एवम् अलौकिक उद्भावना से किसी भी घटना की योजना करने में, जीवंतता प्रदान करने में स्वच्छन्द होता है। इसी प्रकार, वक्ता भी अपने मनोनुकूल जब चाहे जिस भी प्रकार की भाषा का प्रयोग कर सकता है। अतः भाषा मानव-समाज के सामाजिक दक्षता, आत्मगत विकास, अस्मिता और सांस्कृतिक पहचान हेतु सार्थक वातायन है। हमारे समाज में भाषा की व्यापकता ने संप्रेषणीयता के फलस्वरूप ही आज के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक संदर्भों और नूतन उद्देश्यों को साकार करने का अप्रतिम उदाहरण स्थापित किया है। भाषा एक मनोवैज्ञानिक संरचना है जिसे हम मानव ध्वनियों के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं। हमारी संस्कृति, संस्कार का उतरोत्तर हस्तांतरण भाषा के द्वारा होता है। विश्व-शांति, विश्व-बंधुत्व, विश्व-धर्म, विश्व-संस्कृति एवम् विश्व को ही अखंड और निरवयव तथा अनिवर्चनीय शब्द-ब्रह्म का एकमात्र

[1] काव्यप्रकाश

प्रतिनिधि समझना चाहिए। एक शब्दतत्त्व जो कि प्रतिभारूप से सर्वव्यापक है और जिसका सर्वदा अस्तित्व है, उस एक सत्, नित्य और अक्षर तत्त्व का नाम देकर अनेक रूपों में वेद और समस्त शास्त्रों में वर्णन गया है। केनोपनिषद में वर्णित है कि "चेतन प्राणियों में जो वाक् शक्ति है तथा जो वर्णों में स्थित है तथा जिसके द्वारा जीव स्वप्न में बोलता है वह भी वाक् है वक्ता की वह वाचन शक्ति ही चैतन्य ज्योति स्वरूपा है वही ब्रह्म है"।[1]

संदर्भ-ग्रंथ-सूची:

- वाक्यपदीयम्- डॉ. शिवशंकर अवस्थी, चौखंबा विद्याभवन, वाराणसी
- काव्यादर्श- आचार्य रामचन्द्र मिश्रा, चौखम्बा विद्या भवन वाराणसी
- ऋग्वेद- डॉ. गंगा सहाय शर्मा, संस्कृत साहित्य प्रकाशन, संस्करण २०१६
- यजुर्वेद- डॉ. रेखा व्यास- संस्कृत साहित्य प्रकाशन ,संस्करण २०१५
- अष्टाध्यायी-पदानुक्रम कोश- अवनीन्द्र कुमार ,परिमल पब्लिकैशन ,दिल्ली,प्रथम संस्करण १९९६
- भाषा-विज्ञान- डॉ. रमेश रावत,पंचशील प्रकाशन ,जयपुर,प्रथम संस्करण २००५
- भाषा-विज्ञान एवम् भाषाशास्त्र- डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, त्रयोदश संस्करण २०१२

[1] केनोपनिषद –स्वामी प्रखर प्रज्ञानन्द सरस्वती, प्रथम खंड ४ मंत्र ,पृष्ठ ७

- भाषिकी और संस्कृत भाषा- डॉ. देवीदत्त शर्मा, हरियाणा साहित्य अकादमी ,चंडीगढ़ , प्रकाशन वर्ष १९९०
- काव्यप्रकाश- आचार्य विश्वेश्वर सिद्धांतशिरोमणि, ज्ञानमंडल लिमिटेड ,वाराणसी, षष्ठम् संस्करण
- वृहद्-अनुवाद-चंद्रिका- चक्रधर नौटियाल "हंस" शास्त्री, मोतीलाल बनारसीदास
- छान्दोग्योपनिषद्, कल्याण उपनिषद-अंक 5
- अर्थविज्ञान और व्याकरण दर्शन, डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
- केनोपनिषद्- स्वामी प्रखर प्रज्ञानन्द सरस्वती, चौखंभा संस्कृत संस्थान, वाराणसी

बीसवीं शताब्दी के लघुकथाकारों की कृतियों में वर्णित स्त्री दशा एवं दिशा : एक अवलोकन

डॉ. उपासना सिंह
असि. प्रोफे., संस्कृत विभाग
आर.जी. (पी.जी.) कॉलिज, मेरठ
चौ.च.सिंह.यूनिवर्सिटी, मेरठ

महिलाओं की सुदृढ़ व सम्मानजनक स्थिति एक अनन्त, समृद्ध एवं मजबूत समाज की ताकत होती हैं। बीसवीं शताब्दी में भारत में स्त्रियों की स्थिति में अभूतपूर्व परिवर्तन हुए हैं। पिछले कई दशकों से सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक भेदभाव झेल रही महिलाओं की समस्याओं को दूर करने तथा उनके पक्षों में सार्थक वातावरण तैयार करने में 20वीं सदी के संस्कृत साहित्य का महनीय योगदान है। बीसवीं सदी के लघुकथा साहित्य में तत्कालीन जीवन के विविध आयामों का अवलम्बन कर उन्हें कथाओं में पिरोया गया है, जिसमें मुख्य रूप से समाज की धुरी कहीं जाने वाली स्त्रियों तथा उनकी समस्याओं से सम्बन्धित कथाओं की बहुलता है। इन समस्याओं में मुख्यतः पारिवारिक विघटन, दाम्पत्य सम्बन्ध का टूटना, विवाह के प्रति परिवर्तित दृष्टिकोण, पुरुष प्रधान समाज, सपत्नीक सम्बन्ध, दहेज प्रथा, पुत्र की अपेक्षा एवं पुत्री की उपेक्षा का भाव, प्रणय सम्बन्ध, कामकाजी महिलाओं की समस्या तथा उनकी सन्तानों का परिस्थितियों से समझौता, बन्ध्या नारी की स्थिति, अन्तर्जातीय विवाह, विधवा विवाह पाश्चात्य संस्कृति का अन्धाकर्षण अनेक स्त्री विषयक समस्याओं को लघुकथाओं के माध्यम से उकेर कर समाज के सम्मुख युक्तियुक्त समाधान सहित प्रस्तुत किया गया है।

20वीं सदी के कहानीकारों में पं. क्षमाराव की 'कथामुक्तावली' जिसमें "प्रेम रसोद्रेक", "परीत्यक्ता", "तापसस्यपारितोषकम्", विधवोद्वाहसंकटम्", "मत्स्यजीवी केवलम्" आदि कथाएँ तत्कालीन समाज में महिलाओं की दशा एवं दिशा का मार्मिक एवं सजीव प्रस्तुतीकरण करता है। इसी तरह डॉ. केशवदास की "ऊर्मिचूड़ा" एवं "विदिशा संग्रह", डॉ. नारायण शास्त्री काँकर की "राजकथाकु´~जम् संग्रह" की "पितामही मिलिता", डॉ. वीणापाणि पाटनी की "अपराजिता संग्रह", डॉ. इच्छाराम द्विवेदी की "पश्चात्तापः एकादशी संग्रह", डॉ. नलिनी शुक्ला के "कथासप्तकम्", श्री गणेशराम शर्मा का "संस्कृत कथाकु´~जम् संग्रह",

डॉ. राजेन्द्र मिश्र की "अरण्यनी" एवं "इक्षुगन्धा", श्री द्वारका प्रसाद शास्त्री की "सिद्धेश्वरी वैभवम्", श्री द्विजेन्द्र नाथ मिश्र की "अभिनव कथानिकु´~ज" ,पं. श्री सूर्यनारायण की "राजकथाकु´~जम्",श्री जवाहर लाल शर्मा की "राजकथाकु´~जम्", श्री बटुकनाथ शास्त्री का "अभिनवकथा निकु´~जम्", श्री गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी की "अभिवनकथा निकु´~ज", पं. पन्नवल किशोर काँकर की "राजकथा कु´~जम्" इत्यादि अनेक आधुनिक कथाकारों ने वर्तमान समाज में व्याप्त स्त्रियों की विभिन्न समस्याओं को अपनी लेखनी से संजोकर समाज को यथार्थ स्थिति से अवगत कराया है।

1. पारिवारिक विघटन की समस्या -

डॉ. केशवदास की "ऊर्मिचूड़ा" नामक कथा में कामकाजी बहू श्वश्रु की अपेक्षाओं पर खरी नहीं उतरती जो गृहकलह का कारण

बनता है।1 ''पितामही मिलिता'' में शिक्षण कार्य, शिशुपालन श्वश्रुसेवा इत्यादि कार्यों में सामंजस्य नहीं कर पाती हैं।2

आज की नारी शिक्षित एवं स्वाभिमानी है अपने अधिकारों को जानने एवं प्राप्त करने के प्रति सजग है। ''अपराजिता'' में दहेज न मिलने पर जब विजया के श्वश्रु उसे पिता घर जाने को कहते हैं तो वह कहती है - ''परिणयानन्तरमहमत्र समायाता। इदं मम गृहमहं चानेन गृहेण गहिणी। कोऽस्ति यो मां मद्गृहाभिस्यारचति। परन्तु नाहमत्र वसितुं वाच्छामि। नापि पितृगृहं गमिष्यामि। सद्यः राकेशाभिमुखं परिवृत्य सावदत् विवाहे भवता मम हस्तो गृहीत आसीत् तयिस्य पवित्रबन्धनस्य शपथं कृत्वा पृच्छामि, भवान् मया सह पृथग वत्स्यति?3

''कलरवश्चिन्ता'' कथा में अपनी सास के उत्पीड़न से दुखी नन्दिनी और सुधीर संयुक्त परिवार की मर्यादा का अतिक्रमण नहीं करते किन्तु वह कहती है- ''संयुक्त परिवारप्रथां कः स्वीकुर्यात्? मातापितरौ सेवितुं कः कामयेत्।।4

2. दाम्पत्य सम्बन्ध में विघटन की समस्या-

'भातृस्नेह'' नामक कथा में श्रीकान्त जब लम्बे अन्तराल के पश्चात् घर आता है तो गौरी उसके चले जाने के बाद होने वाले कष्टों को भूलकर सुख का अनुभव करती है- **''गौरी गौरीव तपस्यन्ती पत्युः प्राप्तेः किमत्यनिर्वचनीयं मनोवाचामगोचरं सुखमन्वभूत्।''5**

परिवार को चलाने के लिए स्त्री की विशाल हृदयता, सहनशीलता, संयम, त्याग, प्रौढ़ता अनिवार्य है, स्त्री की भूमिका परिवार को चलाने के संदर्भ में, पुरुष से कहीं अधिक है एवं महत्वपूर्ण है। परिवार के बिखरने और नष्ट होने में भी किसी स्त्री का उथला और संकीर्ण आचरण ही कारण होता है।

दाम्पत्य जीवन में बिखराव का एक कारण नारी चेतना भी है आज भी शिक्षित नारी पुरुष के अत्याचारों को सहन नहीं कर सकती तथा उसके विरुद्ध आवाज उठाती है। ''शंखनाद'' की नायिका भागीरथी भी अपने पति के द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों को सहन करते हुए एक दिन, उसके विरुद्ध आवाज उठाती है-

''अहं यदा उत्थातुं तथा प्रायते अ³~गkनां पीड~या जर्जरिता संवृत्त...........अस्मिन्नेव क्षणेऽस्य जीवनस्य गतिः परिवर्तनीया अन्यथा प्रगाढ़ान्धकारे निलीना भविष्यामि।.....सायंकाले पत्युरागमनात् प्रागेवाहं पतिकुलं परितज्य जम्मूनगरं सम्प्राप्ता।''6

इसी प्रकार ''विजया'' नामक कथा में लीला पति के द्वारा किये गये अपने परिवार के प्रति अपमान को भूल नहीं पाती और अन्त में दोनों परिवारों को छोड़कर चली जाती है।7

शहरी चमक दमक भी दाम्पत्य जीवन में दरार का एक कारण है। शहरीय वातावरण में पली कन्या का विवाह ग्रामीण परिवेश में करना उसके दाम्पत्य सम्बन्ध को प्रभावित करता है। ''पश्चात्ताप'' कथा में शिवा भी ग्रामीण परिवेश में सामंजस्य नहीं कर पाती तथा पति से कलह के कारण आत्महत्या कर लेती है।8

3. सपत्नी सम्बन्ध-

''पोतविहगौ'' नामक कथा में निहाल की पत्नी महुली को निहाल के साथ देखकर सिंहनी के समान व्यवहार करती है। **''महुलीं दृष्टवैव निहालभार्या पजरवद्धा व्याघ्रीव नृशंस प्रकृति संजाता। नारी न कथमपि नार्यन्तरं सहते।''9**

इसी प्रकार ''चम्पा'', ''पन्थाः'', ''कुलीनाः'', ''वातायनम्'' इत्यादि लघु-कथाओं के माध्यम से नारी की मनःस्थिति को प्रभावी एवं मनोवैज्ञानिक ढंग से अभिव्यक्त किया है।

4. परिवार में पुरुष की प्रधानता -

'अपराजिता' कथा संग्रह में पितृसत्तात्मक परिवार का ही एकरूप दृष्टिगोचर होता है, माता सर्वसामर्थ्यवान होते हुए भी घर के महत्वपूर्ण कार्यों में वह सम्मानजनक स्थान नहीं पाती है। इसी प्रकार ''अरण्यनी'', वातायनम्, अधर्मण इत्यादि कथा संग्रहों में भी सक्षम स्त्री की अपेक्षा पुरुष को ही श्रेष्ठ माना गया है।

5. पुत्र तथा पुत्री में मतभेद का भाव-

माता-पिता भविष्य में पुत्र को ही अधिकारी मानकर उससे अपेक्षाएँ करते हैं। ''निष्क्रान्ति'' एवं ''वासन्ती'' नामक कथाओं में ऐसी ही कहानी है।10

परिवार में पुत्री को संवैधानिक अधिकार दिये जाने के पश्चात् भी पुत्र को ही सर्वेसर्वा माना जाता है। इसी प्रकार ''मूढचिकित्सा'', ''गुंजा'', ''कुलीना'', "अनुग्रहीता", ''अपराजिता'' इत्यादि कथाओं में पुत्र एवं पुत्री में मतभेद की कथा वर्णित है। "असहाया वराकी किशोरी" नामक कथा में कन्या की पशुओं से भी हीन स्थिति को दिखाया गया है।11

वर्तमान युग में प्रगति पथ पर अग्रसर भारतीय नारी अपनी कार्य कुशलता एवं बुद्धि कौशल से समाज में जितना भी सम्मान प्राप्त कर ले किन्तु परिवार में पुत्री के रूप में वह आज भी उपेक्षित है।

6. प्रणय-सम्बन्ध-

वर्तमान समय में प्रेम का जो स्वरूप आधुनिक संस्कृत कथाकारों ने प्रस्तुत किया है वह तत्कालिन समाज में प्रत्यक्ष दृष्टिगत होता है आज का प्रेम खरीदा भी जा सकता है और बेचा भी जा सकता है कथा साहित्य में इसके नैसर्गिक शुद्ध रूप के साथ-साथ वासनाजन्य प्रेम का भी वर्णन किया है।

"कपटस्य नियति", ''जया'', "नुपुरम्", "सकहायनी", ''वीराना पल्लवी'', "पङ्गु", ''उपवीथिः'', ''मूल्यान्यमूल्यानि'' एवं

''मनोरमा'' नामक कथाओं में प्रेम के वर्तमानकालिक स्वरूप में स्त्री की स्थिति को दर्शाया गया है।

7. परिवार एवं समाज में नारी की स्थिति-

भारतीय नारी पति के अन्याय एवं दुराचार को चुपचाप सहकर भी पति को परमेश्वर का नाम देती है। ''परम दैवतः पतिः'' भी ऐसी ही नारी की कथा है। ''गृहाद्बहिः अर्धरात्रिं अतिवाह्य सुरां संसेव्य अर्थविक्षप्तरूपेण................... सा तारुणी सर्वमपि अन्यायं दुराचारं च मौनमवलम्ब्य असहत्।''12

ऐसी ही ''वासन्ती'' नामक कथा में नारी का चरित्र देखने को मिलता है। पति के अत्याचारों को सहकर मन, वचन, कर्म से पति की सेवा करती है।13

''प्रत्याहार'' नामक कथा में भी नारी की वर्तमान दयनीय स्थिति को दर्शाया गया है- गृहकर्मं करोमि। बहिः कार्यं निभालयामि। साधु व असाधु सर्वं च सहे। वक्तुमपि मम अधिकारो नास्ति?''14

वर्तमान में पढ़ी लिखी नारी को भी स्वतन्त्र निर्णय लेने का अधिकार नहीं है। ''अपराजिता'' नामक कथा में विजया के पूछने पर उसकी माँ कहती है- ''मम को निर्णयः? कदाचित् बाल्यादेव नार्यो निर्णयस्सावसरमपि न लभन्ते तात! सर्वे महत्वपूर्णा सामान्याश्च निर्णयाः पुरुषैरेव क्रियन्ते।15

इसी प्रकार की कथा ''शंखनाद'', ''च´~चा'', ''वातायनम्'', ''सुषमाया पत्रम्'' इत्यादि कथाओं में वर्तमान में नारी की स्थिति को दर्शाया गया है।

स्वाभिमानी नारी परिस्थितियों से समझौता करके कभी हार नहीं मानती तथा धैर्यपूर्वक अपने स्वाभिमान की रक्षा करती है। ''श्रमदेवी'' नामक कथा में ऐसा ही वर्णन है।

8. कामकाजी महिलाओं की समस्या-

''अपराजिता'' में विजया घर की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बनाने के लिए नौकरी करने का निर्णय लेती है इस पर उसकी सास घर के कामों को करने की बात कहती है, तब वो कहती है- मातः! अलं चिन्तया प्रातःकाले सर्वगृहकर्म सम्पद्याहं कार्यालयं गमिष्यामि। सायंकाले षड्वादनवेलायाः पुरतः पुनः गृहकार्य समाचरितष्यामि। अपि सन्तुष्टा त्वम्?16

घर और बाहर मशीनी दिनचर्या वाली नारी चाहकर भी परिवार के सभी सदस्यों को खुश नहीं रख सकती।

"कलरवश्चिन्ता'' कथा में नन्दिनी के सम्पूर्ण कर्म करने पर भी उसे सास से प्रताड़ना ही सुनने को मिलती है।

इसी प्रकार कार्यक्षेत्र में भी होने वाले विभिन्न समस्याओं को कथाकारों ने मनोरम रूप में उपस्थित किया है।

कामकाजी माँ के बालक हर प्रकार की परिस्थितियों में समझौता करना सीख जाते हैं। हर सुबह रोजी की चिन्ता और हर शाम अगले भोर की प्रतीक्षा में खोता हुआ इनका बचपन समाज के लिए एक प्रश्न चिन्ह छोड़ जाता है। ''कलरवश्चिन्ता'' कथा में नन्दिनी के कामकाजी होने से पुत्री शोभा को स्कूल से लौटने पर स्वयं ही अनमने मन से खाना परोस कर खाना पड़ता है।

''भग्नमनोरथ'' नामक कथा में पति द्वारा बन्ध्या स्त्री को मन्दभाग्य कहा गया है। ''परित्यक्ता'' नामक कथा में बन्ध्या स्त्री के बन्धु बान्धव सभी के द्वारा तिरस्कृत किया जाता है।

''कुलीना'' कथा की नायिका विवाह के पश्चात् पति द्वारा किये गये अत्याचारों को चुपचाप सहती है तथा कहती है कि ''सा कुलीना कुलवधूः च या सर्वदुःखजातं निपीथापि मुखेन न कदापि तदभिव्यक्तम्''।17

इस प्रकार प्रेम विवाह, अन्तर्जातीय विवाह, विधवा विवाह, बाल विवाह, वेश्या वृत्ति की समस्या, पाश्चात्य संस्कृति के प्रति आकर्षण इत्यादि ऐसे अनेकानेक विषम विषय है जिन पर संस्कृत के आधुनिक कथाकारों ने अपनी लेखनी चलाकर समाज का मार्गप्रशस्त किया है साहित्य के माध्यम से।

समाज में दो प्रकार की नारियाँ मिलती हैं- एक वह है जो अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों को मौन भाव से सहन कर हँसती रहती है और दूसरी वह है जो अपने अधिकारों के प्रति जागरुक हैं तथा समाज के सम्मुख सिर उठाकर लड़ती है परन्तु अत्याचारों के सम्मुख नहीं झुकती। संस्कृत के आधुनिक लघुकथाकारों ने अपनी कथाओं में दोनों प्रकार की स्त्रियों का स्वरूप प्रस्तुत कर समाज की एक सुन्दर दिशा प्रदान करने का प्रयास किया है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची:-

1. ऊमिचूड़ा, डॉ. केशवदाश, पृष्ठ 60
2. पितामही मिलिता: राजकथा कुजम्, डॉ. नारायण शास्त्री काँकर, पृष्ठ 130
3. अपराजिता, डॉ. वीणापाणि पाटनी, पृष्ठ 19
4. कलरवश्चिन्ता चः कथासप्तकम्, डॉ. नलिनी शुक्ला, पृष्ठ 74
5. भातृस्नेहकथा: संस्कृत-कथा-कुजम्, गणेशराम शर्मा, पृष्ठ 60
6. शंखनाद: अपराजिता, डॉ. वीणापाणि पाटनी, पृष्ठ 44-45
7. विजया: सिद्धेश्री वैभवम्, श्री द्वारका प्रसाद शास्त्री, पृ. 11-12
8. पश्चात्तपः एकादशी, डॉ. इच्छाराम द्विवेदी, पृष्ठ 8
9. पोतविहगौ: राग, डॉ. राजेन्द्र मिश्र, पृष्ठ 71

10. निस्क्रान्ति, राजकथा कुजम्, श्री जवाहर लाल शर्मा, पृष्ठ 94
11. असहाया बराकी किशोरी, पं. पभवल किशोर काँकर, पृष्ठ 96
12. परम दैवतः पतिः राज कथा कुजम्, राजेश्वरी भट्ट, पृष्ठ 47
13. वासन्ती पति कथाः अभिनवकथा निकु□ज, श्री बटुक नाथ शास्त्री, पृष्ठ 52
14. प्रत्याहार कथाः दिशा-विदिशा, डॉ. केशव दास, पृष्ठ 150
15. अपराजिताः, डॉ. वीणापाणि पाटनी
16. अपराजिताः, डॉ. वीणापाणि पाटनी
17. कुलीनाः अपराजिताः, डॉ. वीणापाणि पाटनी, पृष्ठ 34

सहायक ग्रन्थ-सूची -

1. संस्कृत साहित्यः बीसवीं शताब्दी, लेखक - राधावल्लभ त्रिपाठी, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, 1999
2. आधुनिक संस्कृत महिला नाटककार, कृति - डॉ0 मीरा द्विवेदी, परिमल पब्लिकेशन्स, दिल्ली
3. अर्वाचीन संस्कृत साहित्य: दशा एवं दिशा, सम्पादक - डॉ0 मंजुलता शर्मा, परिमल पब्लिकेशन्स, दिल्ली
4. आधुनिक संस्कृत नाटक, लेखक - रामजी उपाध्याय, चौखम्ब विद्याभवन, वाराणसी

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

श्री मुकेश कुमार शर्मा
सहायक आचार्य
शिक्षा विभाग
जगन्नाथ विश्वविद्यालय,
जयपुर, (राजस्थान)

श्रीमती रूकमणी शर्मा
सहायक आचार्य व शोधार्थी
शिक्षा विभाग
जगन्नाथ विश्वविद्यालय, जयपुर,
(राजस्थान)

सारांश-

हमारे सभी शास्त्र और उनसे प्राप्त होने वाला ज्ञान भाषा का ही परिणाम है। भाषा मानव की प्रगति में सहायता प्रदान करती है। हमारे पूर्वजों के अनुभव हमें भाषा के माध्यम से ही प्राप्त हुए है। साहित्य शब्द व अर्थ के सामंजस्य का प्रतीक है। कहा गया है कि- 'सहितस्य भावः साहित्यम्।' वस्तुतः यह कहना उपयुक्त है कि साहित्य ही किसी देश की संस्कृति रूपी कमर को कसने वाली कसौटी है। संस्कृत वाङ्मय का क्षेत्र बहुत विशाल है। यह क्षेत्र मुख्यतया गद्य व पद्य दो भागां में विभाजित है। पद्य काव्य प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, किन्तु गद्य साहित्य में भी अनेकों गरिमामय कृतियों का सृजन हुआ है। आधुनिक संस्कृत साहित्यकार गद्य साहित्य

के सागर में अपनी लेखनी से नीत नूतन वृद्धि कर रहे हैं। इसी शृंखला में आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी का नाम सर्व विख्यात है। बहुआयामी व्यक्तित्व एवं कृतित्व से धनी आचार्य प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी जी अनेक भाशाओं में निपुण होने के साथ ही सृजन कार्य के प्रति समर्पित रहते है। त्रिपाठी जी ने जहाँ संस्कृत के नूतन काव्य संवर्धन में उल्लेखनीय योगदान दिया है, वही अनेक प्राच्य विधाओं में काव्य का प्रणयन कर संस्कृत काव्य को एक नया आयाम प्रदान किया है। आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी ने आधुनिक संस्कृत साहित्य को अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व से विश्व के साहित्यों में सिरमौर बना दिया है। प्रस्तुत लेख में आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। व्यक्तित्व एवं कृतित्व की धारा में आचार्य त्रिपाठी का जी के संक्षिप्त जीवन परिचय, शिक्षा, अध्यापन एवं प्रशासनिक कार्य, मान-सम्मान, पुरस्कार तथा उनकी रचनाओं का समावेश किया गया है।

मुख्य शब्दावली- आधुनिक संस्कृत साहित्य, आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी, व्यक्तित्व एवं कृतित्व।

प्रस्तावना-

साहित्य समाज का दर्पण है। इस बात में कोई दो राय नहीं है कि संस्कृत भाषा ही हमारी संस्कृति एवं सभ्यता का मूल स्रोत्र है। संस्कृत भाषा का साहित्य भारत ही नहीं सम्पूर्ण विश्व का प्राचीनतम् साहित्य है। संस्कृत साहित्य की व्यापकता इतनी अधिक है कि इसमें निहित सामाजिक व मानवीय मूल्यों की पवित्र नदियाँ प्राचिन काल से आधुनिक काल तक अविरल गति से प्रवाहित हो रही है। आधुनिक

संस्कृत साहित्याकारों का इसके प्रवाह को अविराम गति से प्रवाहित रखने में विशिष्ट योगदान रहा है।

आधुनिक संस्कृत साहित्य के प्रचण्ड़ क्रांतिकारी कवि आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी भारतीय सांस्कृतिक चेतना के पुनर्जागरण के ऐसे कवि हैं, जिनकी रचनाओं से संस्कृत-संस्कृति की अनन्त रश्मियाँ समाज को प्रकाशित कर रही है। नूतनता व सृजनशीलता की चमक से त्रिपाठी जी ने संपूर्ण संस्कृत साहित्य संसार को प्रदीप्त किया है। 'संस्कृत' अर्थात् एक विशाल वृक्ष जिसकी शाखाएँ एक ओर उस अनन्त आकाश को छूती है तो दूसरी ओर जड़ें धरती के अन्तिम छोर तक पहुँचती हैं। आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी ने इसी संस्कृत रूपी वृक्ष को नई आधुनिकता के साथ सजाकर परम्पराबद्ध संस्कृत साहित्य को आधुनिक वैश्विक सन्दर्भों से जोड़ने का अभिनव, व अद्भुत प्रयत्न किया है। संस्कृत साहित्य के शोध ज्ञाता, सुधी समीक्षक एवं सुपरिचित कवि आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी को न केवल संस्कृत पर अपितु अंग्रजी व हिन्दी भाषा पर भी समानाधिकार प्राप्त है। आधुनिक संस्कृत साहित्य में आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी का योगदान केवल अविस्मरणीय ही नहीं है, अपितु मानव समुदाय को सदैव परिश्रम एवं श्रेष्ठता की ओर प्रेरित भी करता रहेगा।

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व-

- **जीवन परिचय-**

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी अभूतपूर्व प्रतिभा के धनी रहे है। राधावल्लभ त्रिपाठी जी का जन्म 15 फरवरी, 1949 (फाल्गुन

कृष्ण पक्ष तृतीया, विक्रम संवत् 2005) को मध्यप्रदेश के राजगढ़ जिले में प. गोकुल प्रसाद त्रिपाठी एवं श्रीमती गोकुलबाई के द्वितीय पुत्र के रूप में हुआ। इनके पितामह का नाम पं. राम प्रसाद त्रिपाठी था। इनके पिता पं. गोकुल प्रसाद त्रिपाठी जी संस्कृत एवं हिन्दी साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान कवि तथा समीक्षक थे। पिता की साहित्यिक अभिरूचि की प्रबल छाप बालक राधावल्लभ पर पड़ी। इनके पिताजी डॉ. गोकुल प्रसाद त्रिपाठी जी मध्यप्रदेश शासन में उच्चतर शिक्षा विभाग में कार्यरत रहते हुए सन् 1979 में शासकीय महाविद्यालय, छतरपुर से सेवानिवृत्त हुए। शिशु राधावल्लभ की आयु मात्र तीन वर्ष ही थी तभी उनकी माता का देहावसान हो गया। माता गोकुलबाई का असामयिक निधन तथा शासकीय सेवा में होने से पिता का बार-बार स्थानान्तरण शिशु राधावल्लभ के लिए कष्टकारी था। पिता के साथ रहते हुए बालक राधावल्लभ ने आठ से दस वर्श की आयु से ही लेखन एवं अध्ययन को अपना आधार बनाना शुरू कर दिया। उनकी यह साधना विकसित होकर आज विशाल कल्पवृक्ष के रूप में हम सबके सामने है। डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी का विवाह 27 मई 1974 को मध्यप्रदेश के राजगढ़ निवासी सेवानिवृत्त प्राचार्य श्री शिवदत्त भारद्वाज की पुत्री डॉ. सत्यवती जी के साथ हुआ। सत्यवती जी के परिवार में माता-पिता, दो बहनें एवं एक भाई हैं। पिता श्री शिवदत्त भारद्वाज सेवानिवृत्त प्राचार्य हैं। माता श्रीमती गीतादेवी का देहावसान हो चुका है। भाई डॉ. अरविन्द भारद्वाज ब्यावरा महाविद्यालय में भौतिकशास्त्र के प्राध्यापक है। सत्यवती जी के पिता एवं श्वसुर परस्पर गुरुभाई थे। डॉ. सत्यवती त्रिपाठी ने लगभग बीस वर्ष तक डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर में

हिन्दी विभाग में अध्यापन, सृजन एवं शोध करने के बाद वर्तमान में श्री लाल बहादुर शास्त्री संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली जो कि वर्तमान में केन्द्रीय विश्वविद्यालय के रूप में संचालित है, के हिन्दी विभाग में अध्यापन कर रही है। सागर विश्वविद्यालय में आदर्श दम्पत्ति के रूप में बहु सम्मान्य डॉ. त्रिपाठी के प्रियवंदा, मालविका, चिन्मयी ये तीन पुत्री रत्न हैं।

- **शिक्षा-**

अभूतपूर्व प्रतिभा के धनी डॉ. त्रिपाठी की शिक्षा-दीक्षा अलग-अलग स्थानों पर हुई। अपने ज्येष्ठ भ्राता हरिवल्लभ के साथ राधावल्लभ भी विज्ञान एवं गणित आदि की शिक्षा की ओर अग्रसर हुए। प्रखर मेधा एवं अध्ययन प्रवणता के लिए आसपास के क्षेत्र में ख्यात त्रिपाठी ने सन् 1965 में मध्यप्रदेश की माध्यमिक शिक्षा परीक्षा में विज्ञान विषय के साथ 82.70 प्रतिशत अंक अर्जित कर प्रदेश में प्रथम स्थान प्राप्त किया था। इनके पिता अध्ययन गति को देखते हुए वैज्ञानिक होने की कल्पना करने लगे थे, किन्तु राधावल्लभ का मन गणित एवं विज्ञान विषयों के अध्ययन में नहीं रमा। उनका मन विज्ञान से विमुख होकर संस्कृत अध्ययन के लिए उन्मुख हो उठा। स्नातक कक्षा में संस्कृत विषय के साथ महाराज महाविद्यालय, छतरपुर, सागर (म.प्र) में विश्वविद्यालय की वरीयता सूची में प्रथम स्थान प्राप्त किया। तदोपरांत उच्चतर एवं उच्चतम शिक्षा की लालसा से राधावल्लभ त्रिपाठी जी सागर आ गये। स्नातक की परीक्षा सन् 1968 में महाराज महाविद्यालय, छतरपुर से 1966 में 67.80 प्रतिशत अंकों के साथ उत्तीर्ण की। उस समय प्रो. रामजी उपाध्याय, डॉ. वनमाला भवालकर, डॉ. विश्वनाथ भट्टाचार्य जैसे मूर्धन्य

विद्वानों के सानिध्य के कारण संस्कृताध्ययन के लिए विख्यात सागर विश्वविद्यालय में अध्ययन करते हुए आपने यहाँ से 1970 में संस्कृत विषय में आचार्य की परीक्षा 82 प्रतिशत अंकों के साथ न केवल संस्कृत विषय अपितु पूरे कला संकाय में प्रथम स्थान प्राप्त करते हुए उत्तीर्ण की। इसी विश्वविद्यालय से 1970 में योग विज्ञान में डिप्लोमा, 1971 में जर्मन भाषा में तथा सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी से भाषा विज्ञान में प्रमाणपात्रोपाधि प्राप्त की। सागर विश्वविद्यालय से 1972 में प्रो. रामजी उपाध्याय के शोध निर्देशन में “संस्कृत कवियों के व्यक्तित्व का विकास“ विषय पर पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की तथा इसी विश्वविद्यालय से 1981 में डी.लिट्. की उपाधि प्राप्त की। प्रो. त्रिपाठी ज्ञान पिपासु रहे है। वास्तव में स्वाध्याय ही प्रो. त्रिपाठी की सबसे बड़ी गुरु परम्परा रही है। गद्य विधा से लेखन कार्य प्रारम्भ करने वाले डॉ. त्रिपाठी ने 15-16 वर्ष की अवस्था से ही कविता, कथा, नाटक के साथ-साथ समीक्षा एवं इतिहास लेखन की दिशा में अनोखा कार्य किया है। प्रो. त्रिपाठी जी की यह लेखन प्रवृत्ति गद्य, पद्य, नाटक, कथा, उपाख्यान, उपन्यास, रागकाव्य, अलंकारशास्त्र आदि के रूप में प्रतिफलित होने के साथ, समीक्षा और अनुसंधान के क्षेत्र में भी विकसित हुई।

अध्यापन व प्रशासनिक कार्य-

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी ने 7 जनवरी, 1970 से 17 जुलाई, 1971 तक सागर में डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग में यू.जी.सी. शोध अध्येता के रूप में अध्यापन किया। श्री मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर के संस्कृत विभाग में 18 जुलाई, 1971 से 3 दिसम्बर, 1973 तक प्रवक्ता के पद पर

नियुक्त रहे। 1 मई, 1973 से 31 दिसम्बर, 1978 तक सागर में डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग में सहायकाचार्य पद पर नियुक्त हुए। इसी विश्वविद्यालय में 1 जनवरी, 1979 से 21 जनवरी, 1983 तक उपाचार्य पद पर रहें। इसी विभाग में 22 अप्रैल, 1983 को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए। बीच बीच में आपने विश्वविद्यालय में दो बार (1985-86 तथा 1996-98) कला संकाय के अधिष्ठाता पद को सुशोभित किया। 1980 से 2001 तक तथा जनवरी 2005 से 2008 तक इसी विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष पद पर कार्य करते हुए आपने अपने जीवन के अमूल्य वर्ष प्रदान किये। 14 अगस्त, 2008 से अगस्त, 2013 तक आप राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली में उपकुलपति के पद पर सुशोभित रहे। इस अवधि में श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ के कुलपति का अतिरिक्त प्रभार भी आपने वहन किया। अध्यापन के अतिरिक्त डॉ. त्रिपाठी जी को सुदीर्घ प्रशासकीय अनुभव है। आचार्य त्रिपाठी को संस्कृत विभाग के अतिरिक्त पत्रकारिता विभाग, भाषा विज्ञान विभाग, दृश्य-श्रव्य एवं प्रदर्शनकारी कला विभाग आदि का भी समय-समय पर अध्यक्ष नियुक्त किया गया। 1985-1987 तथा 1995-1998 तक विश्वविद्यालय कार्यपरिषद् के सदस्य, मध्यप्रदेश केन्द्रीय संस्कृत बोर्ड की 20 वर्ष तक अध्यक्षता, तीन वर्ष तक बैंकाक के भारतीय दूतावास में सलाहकार का दायित्व वहन किया। आपको अनेक बार प्रभारी कुलपति, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान के कुलपति आदि गरिमामय दायित्वों का प्रशासकीय अनुभव प्राप्त है।

- **पुरस्कार एवं सम्मान-**

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी को प्राप्त कतिपय प्रमुख पुरस्कार व सम्मान निम्नांकित हैं-

(1) 'संस्कृत कवियों के व्यक्तित्व का विकास' नामक ग्रंथ पर उत्तरप्रदेश संस्कृत अकादमी पुरस्कार (1976)।

(2) अखिल भारतीय प्राच्य विद्या सम्मेलन द्वारा उत्कृष्ट शोध पत्र लेखन हेतु (1978)।

(3) 'वाल्मीकि विमर्श' पर संस्कृत अकादमी पुरस्कार (1979)।

(4) संस्कृत नाटक 'कुन्दमाला' के अनुवाद पर म.प्र. साहित्य परिषद् का 'राजशेखर पुरस्कार' (1982)।

(5) 'दमयन्ती' हिन्दी नाटक पर साहित्य कला परिषद्, दिल्ली का पुरस्कार (1989)।

(6) एशियाटिक सोसायटी बम्बई का म.प्र.पी.वी. काणे स्वर्णपदक (1989)।

(7) अखिल भारतीय प्राच्य विद्या सम्मेलन पुरस्कार (1972) तथा (1988)।

(8) 'कालिदास की समीक्षा परम्परा' पुस्तक के लिए म.प्र. संस्कृत अकादमी का भोज पुरस्कार (1992), इसी

कृति पर भारतीय प्राच्य परिषद्, पूना द्वारा हरिद्वार में 1990 में पुरस्कार।

(9) 'भाटकद्वात्रिंशिका' पर म. प्र. संस्कृत अकादमी का व्यास पुरस्कार (1987)।

(10) प्रो. पी.वी. काणे स्मृति स्वर्ण पदक, 1989।

(11) म.प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा दमयन्ती हिन्दी नाटक के लिए वागीश्वरी पुरस्कार (1990)।

(12) 'लहरीदशकम्' के लिए उ.प्र. संस्कृत अकादमी का कालिदास पुरस्कार (1991)।

(13) 'सन्धानम्' संस्कृत काव्य संग्रह के लिए साहित्य अकादमी, नई दिल्ली पुरस्कार (1994)।

(14) हिन्दी अकादमी कलकत्ता का राष्ट्रीय हिन्दी रत्न सम्मान (1994)।

(15) 'गीतधीवरम्' के लिए म.प्र. संस्कृत अकादमी का कालिदास पुरस्कार (1996)।

(16) कनाडा का रामकृष्ण संस्कृत पुरस्कार (1998)।

(17) म.प्र. कालिदास पुरस्कार (1999)।

(18) के.के. बिड़ला फाउण्डेशन का शंकर पुरस्कार (2000)।

(19) 'सम्प्लवः' के लिए म.प्र. संस्कृति परिषद् का कालिदास पुरस्कार (2002)।

(20) हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा संस्कृत महामहोपाध्याय का सम्मान (2006)।

(21) नाट्टायन, ग्वालियर का भवभूति सम्मान, (2006)।

(22) अखिल भारतीय वेदव्यास सम्मान (2006)।

(23) म.प्र्र. संस्कृत बोर्ड का संस्कृत गौरव सम्मान (2007)।

(24) नारायण शास्त्री कांकर सम्मान, जयपुर (2007)।

(25) राधाकृष्ण स्मृति सम्मान (2008)।

(26) पूर्वांचल संस्कृत प्रचार परिषद् कलकत्ता का विद्यालंकार सम्मान।

(27) लोकसभा प्रचार समिति का जयदेव सरस्वती सम्मान (2009)।

(28) कालिदास संस्कृत विश्वविद्यालय नागपुर का कालिदास जीवनवृत्ति राष्ट्रीय सम्मान (2009)।

(29) कांची शंकराचार्य द्वारा संस्कृत शिरोमणि सम्मान 2009।

(30) राजीव गाँधी सद्भावना सम्मान (2009)।

(31) डक्कन कॉलेज पूना द्वारा मादन डी.लिट् उपाधि (2010)।

(32) महाराष्ट्र सरकार का जीवनवृत्ति सम्मान (2010)।

(33) कुंजनी राजा ट्रस्ट का राज प्रभा पुरस्कार (2010)।

(34) देवाणी परिषद् नई दिल्ली का पंडितराज जगन्नाथ सम्मान (2011)।

(35) सुत संवर्धन पुरस्कार (2011)।

(36) मीरा सम्मान (2012)।

(37) कुन्दकुंद सम्मान (2012)।

इसके अतिरिक्त अन्य अनेक पुरस्कार भी आचार्य त्रिपाठी जी को प्राप्त हुए हैं। इन्होंने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली की अनेक शोध योजनाओं को पूर्ण किया है। उनके निर्देशन में आज भी अनेक शोध योजनाएँ चल रही हैं।

- **साहित्य सृजन व सम्पादन-**

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी एक अद्वितीय प्रतिभा सम्पन्न आधुनिक युग में संस्कृत साहित्य में श्रेष्ठ साहित्यकार हैं। इनके द्वारा किये गये अनुसंधान, प्राचीन संस्कृत ग्रंथों, आधुनिक संस्कृत काव्यों का सम्पादन, मौलिक रचनाएँ, संस्कृत गं्रन्थां के हिन्दी व अंग्रेजी अनुवाद, सम्पादित कार्‌य आदि का कुछ विवरण निम्नानुसार है-

❖ **मौलिक रचनाएँ-**

(1) प्रेमपीयूषम् (मौलिक नाटक), 1970 संस्कृत परिषद्, सागर।

(2) प्रेक्षणकसप्तकम् (1979), मौलिक एकांकी संग्रह, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली।

(3) तण्डुलप्रस्थीयम् (1999), मौलिक नाटक, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली।

(4) सुशीला प्रेक्षणकम्, मौलिक एकांकी, 2002, संस्कृत परिषद्, सागर।

(5) महाकवि कण्टकः (आख्यायिका) 1971, संस्कृत परिषद्, सागर।

(6) आदिकवि वाल्मीकिः, (1971) संस्कृत परिषद्, सागर।

(7) नाट्यमण्डपम् (1980), संस्कृत परिषद् सागर।

(8) भारतीय र समुन्वेषः (1981), संस्कृत परिषद् सागर।

(9) सन्धानम्-मौलिक संस्कृत काव्य संग्रह, (1986), संस्कृत परिषद्, सागर।

(10) लहरीदशकम् संस्कृत काव्य संग्रह, (द्वितीय सं. 2003) (मौलिक राग काव्य)।

(11) गीतधीवरम् (1995), गीतिकाव्य, सागर।

(12) सम्प्लवः (2000), मौलिक संस्कृत कविता संग्रह, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली।

(13) पंचवटी (1998), मैथिलीशरण गुप्त के काव्य का अनुवाद, सागर।

(14) संसरणम्, लाल बहादुर राष्ट्रीय संस्कृत विद्यालय।

(15) उपाख्यानमालिका (1998), प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली।

(16) विक्रमचरितम् (2000), प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली।

(17) अभिनवशुकसारिका, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी।

(18) अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी।

(19) थाईदेशस्य इतिहासः संस्कृतिश्च 2005, प्रतिभा प्रकाशन, नई दिल्ली।

(20) समष्टि : कविता संग्रह देववाणी परिषद्, दिल्ली, 2010

❖ **प्रकाशित पुस्तकें-**

(1) भारतीय धर्म और संस्कृति (1972), लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद।

(2) संस्कृत कवियों के व्यक्तित्व का विकास (परु स्कृत), 1976, संस्कृत परिषद्, सागर।

(3) आदिकवि वाल्मीकि, 1980, संस्कृत परिषद्, सागर।

(4) काव्यशास्त्र और काव्य (1982), मैकमिलन इण्डिया द्वारा राष्ट्रीय हिन्दी कार्यक्रम में प्रकाशित।

(5) न्यायसत्रम् (1984), न्यायदर्शन पर परिसंवाद (सम्पादन), संस्कृत परिषद्, सागर।

(6) संस्कृत साहित्य को इस्लाम परम्परा का योगदान, (सम्पादन), 1986, संस्कृत परिषद्, सागर।

(7) संस्कृत कविता की लोकधर्मी परम्परा, 1986, संस्कृत परिषद्, सागर।

(8) नाट्यशास्त्र के बीज शब्द, भाग-1, (1986), संस्कृत परिषद्, सागर।

(9) अप्राप्य नाट्यशास्त्रीय ग्रंथ, (1987), संस्कृत परिषद्, सागर।

(10) महाकवि भवभूति और उनका नाट्यलोक (1986), भास्कराचार्य त्रिपाठी के सहसंपादन मे।

(11) कालिदास परिशीलन (1987), संस्कृत परिषद् सागर।

(12) नाट्यशास्त्र संदर्भ सूची (1987), संस्कृत परिषद् सागर।

(13) कालिदास की समीक्षा परम्परा, (1987), संस्कृत परिषद् सागर।

(14) भारतीय नाट्य स्वरूप और परम्परा (1987), संस्कृत परिषद् सागर।

(15) नाट्यशास्त्र के बीज शब्द भाग 2, (1998), संस्कृत परिषद् सागर।

(16) नाट्यशास्त्र और विश्व रंगमंच (1989), संस्कृत परिषद् सागर।

(17) सूत्रधार वृत्त (सहलेखन), (1989), संस्कृत परिषद् सागर।

(18) संस्कृत रूपकों में प्रहसन (1989), अक्षयवट प्रकाशन, इलाहाबाद।

(19) दूसरी परम्परा के नाटककार भवभूति (1995), साम्य पुस्तिका -11, प्रगतिशील लेखक संघ, अम्बिकापुर।

(20) नाट्यशास्त्र विश्वकोश (चार खण्ड), 1999, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली

(21) संस्कृत साहित्य परिचय, (1998), प्रतिभा प्रकाशन दिल्ली।

(22) संस्कृत साहित्य-बीसवीं शताब्दी (1999), राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली

(23) संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास (2001), विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।

(24) आधुनिक संस्कृत साहित्य संदर्भ सूची, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, दिल्ली, 2002।

(25) Lectures on Natyasastra (1981) Pune University, Pune.

(26) Artha Shastra and Modern World (Ed. 1996) Pratibha Prakashan, Delhi.

(27) Indian Tradition in Linguistics (Ed. 1992) Pratibha Prakashan, Delhi.

(28) Re - Organizing India Shastra Traditions (Ed. 2001) Pratibha Prakashan, Delhi.

(29) Turning Points in Indian Sanskrit Traditions (Ed. 2001) Pratibha Prakashan, Delhi.

(30) Vedic Foundation of Indian Sanskrit Traditions (Ed. 2001) Pratibha Prakashan, Delhi.

(31) A New Bibliography of Sanskrit Drama (Ed. 1998) Pratibha Prakashan, Delhi.

(32) A Bibliography of Alankarashastra (Jt. Ed. 2002) Pratibha Prakashan, Delhi.

(33) Vanmayi (Prof. K.K. Chaturvedi Fel. Vol 1998) Sharda, Delhi.

(34) राष्ट्र की एकता में संस्कृत का योगदान (1989), अक्षयवट प्रकाशन, इलाहाबाद।

(35) आखर अरथ अल ति नाना (सं.) तुलसीदास पर परिसंवाद, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर।

(36) हजारीप्रसाद द्विवेदी संचयिता, महात्मा गांधी अध्ययन हिन्दी विश्वविद्यालय की ओर से प्रकाशित, 2003

(37) साहित्यशास्त्र परिचय, 2003, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान परिषद, दिल्ली।

(38) संस्कृत काव्यशास्त्र और काव्य परम्परा, 2004, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली।

(39) मध्यप्रदेश का रंगमंच, जनसम्पर्क निदेशालय, भोपाल, 2005।

(40) भारतीय काव्यशास्त्र की आचार्य परम्परा, 2007, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।

❖ **हिन्दी में रचनात्मक लेखन-**

(1) दमयन्ती, 1991, नाटक, नाट्यपरिषद्, सागर।

(2) भुवनदीप, 1992, नाटक, नाट्यपरिषद्, सागर।

(3) पूर्वरंग (कहानी संग्रह), 1978, चित्रलेख प्रकाशन, इलाहाबाद।

(4) सत्रन्त (उपन्यास), 1979, इलाहाबाद।

(5) पागल हाथी कहानीसंग्रह, 1986, अलंकार प्रकाशन, दिल्ली।

(6) जो मिटती नहीं है (कहानी संग्रह), जनप्रिया प्रकाशन, दिल्ली।

(7) विक्रमादित्य कथा (उपन्यास), भारतीय ज्ञानपीठ, 2004।

❖ **अनुदित रचनाएँ-**

(1) भरटकद्वात्रिंशिका, प्राचीन कथा संग्रह सानुवाद मूल व भूमिका, 1987।

(2) वेदांतसार (1977, 2003), प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली।

(3) कुमारसंभवम् (1983), कालिदास प्रकाशन, उज्जैन।

(4) मेघदूत (1986, 2001), सोनेट व रोलाछंद में अनुदित।

(5) अभिज्ञानशाकुन्तलम् (1986), कालिदास प्रकाशन, उज्जैन।

(6) कुंदमाला (1982), दिङ्नाग, संस्कृत परिषद्, सागर (हिन्दी में नाटक के रूप में अनुवाद)।

(7) प्रबुद्धरौहिणेय (1983), मुनि रामभद्र, संस्कृत परिषद् सागर।

(8) संक्षिप्तनाट्यशास्त्रम्, (1988), अक्षयवट प्रकाशन, इलाहाबाद।

(9) वेणीसंहार (2000), भट्टनारायण, सागर, 2000

(10) स्वप्नवासवदत्तम् (2000), मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।

(11) रघुवंशम् (2001), मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।

(12) उत्तररामचरितम् (2003), रामकृष्ण प्रकाशन, विदिशा।

(13) ईशोपनिषद् (2003), अंग्रेजी अनुवाद तथा टीका, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली।

(14) कामसूत्र, अंग्रेजी अनुवाद तथा टीका, 2005

(15) चतुत्र, स्वरचित संस्कृति कविताओं के अनुवाद का संकलन, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2006

(16) अथर्ववेद का काव्य, चुने हुए सूक्तों का अनुवाद (2006), विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।

(17) संस्कृत कथा की लोकधर्मी परम्परा, प्रगतिशील लेखक संघ, अम्बिकापुर।

(18) श्रेष्ठ पौराणिक कहानियाँ, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली।

(19) किस्सा डाकू रौहिणेय का, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।

(20) किरात और अर्जुन की लड़ाई, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।

(21) कथासरित्सागर (1935), नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।

(22) कादम्बरी (2000), राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली।

❖ **संपादित कार्य-**

(1) मुकुन्द विलास महाकाव्यम् (1980), महाकवि नीलकण्ठ दीक्षित प्रणीत।

(2) नवस्पंदः (1988), आधुनिक संस्कृत काव्य का संग्रह।

(3) आयाति (1989), आधुनिक संस्कृत कवियों के काव्यों का संकलन।

(4) प्रख्या (भाग 1), 1989, संस्कृत परिषद्, सागर।

(5) षोडसी (1992), आधुनिक संस्कृत कवियों के काव्यों का संकलन, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली।

(6) प्रेम सम्पुटम् (1995) विश्वनाथकृत, प्रख्या (भाग 2) में सम्पादित।

(7) घटककर्परकाव्य, कुलकविवृत्ति तथा तारानाथ कृत टीका।

(8) शास्त्रार्थ विचार पद्धति, राजेश्वर शास्त्री द्रविड प्रख्या (सं. भाग 3), 2001

(9) शुकसारिका, अज्ञातकर्तृक प्रख्या (सं. भाग- 2), 2001

(10) कवि द्वादशी (सं. 2006) बारह कवियों की कविताएँ अंग्रेजी अनुवाद सहित, संस्कृत परिषद्, सागर।

❖ **पत्रिकाओं का सम्पादन-**

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी ने विभिन्न राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की शोध पत्रिकाओं एवं साहित्यिक पत्रिकाओं का सम्पादन किया है-

- सागरिका (त्रैमासिक संस्कृत शोध पत्रिका), संस्कृत परिषद्, संस्कृत विभाग, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, 1980 से अद्यावधि सम्पादन।
- नाट्यम् (त्रैमासिक हिन्दी नाट्य पत्रिका) नाट्य परिषद्, संस्कृत विभाग, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, 1982 से सम्पादन।

- मध्यभारती (विश्वविद्यालय शोधपत्रिका, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर) मुख्य सम्पादक, 1994-2002
- दूर्वा (त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका), मध्यप्रदेश संस्कृत अकादमी।
- संस्कृत विमर्श (नई श्रृंखला), राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली, 2008 से सम्पादन।

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी द्वारा अनेक पाठ्य पुस्तकों का सम्पादन भी किया। पुस्तकों व पत्रिकाओं के लेखन व सम्पादन के अतिरिक्त राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, का आयोजन, संयोजन किया व परिसंवाद लेखन का असीमित कार्य किया, जिसे सीमाओं में बांधना समयोचित नहीं है। आचार्य जी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व अति विशद् है।

उपसंहार-

साहित्य साधना में अनवरत तल्लीन रहकर आचार्य श्री ने अपनी उर्वरा लेखनी से प्रचुर साहित्य की रचना की है। विक्रमचरितम्, उपाख्यानमलिका, अन्यच्च, अभिनवशुकसारिका, स्मितरेखा आदि गद्य कृतियों में आचार्य त्रिपाठी जी ने भावपक्ष व कलापक्ष का सफल निर्वाह किया है। त्रिपाठी जी का रचना संसार इतना विशद् है कि सम्पूर्ण कृतित्व का अध्ययन कर पाना दुश्कर है। निश्चय ही अपने व्यक्तित्व की सर्वतोमुखी प्रतिभा के कारण डॉ. त्रिपाठी ने अनेक क्षेत्रों में सफलता के साथ विशिश्ट स्थान प्राप्त किया है। वह एक कवि, लेखक, समीक्षक, नाट्यकार, गद्यकार, कथाकार, सम्पादक ही नहीं अपितु समर्थ विवेचक, समीक्षक, गद्य साहित्य की

हर विधा में निशणात, नवकाव्यशास्त्रीय अवधारणाओं के प्रतिश्ठापक, कुशल प्रशासक व कुशल वक्ता के रूप में भारत भूमि को सुशोभित कर रहे है। डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी का रचना संसार अत्यन्त व्यापक एवं बहुमुखी है। इनका साहित्य प्रेरणा एवं उत्साह तो देता ही है साथ ही काव्य के विभिन्न माध्यमों के द्वारा नवीन समस्याओं को उजागर भी करता है। मानवीय संवेदनाओं की सच्ची अनुभूति तथा यथार्थ के धरातल पर उनका वर्णन डॉ. त्रिपाठी जैसे सिद्धहस्त एवं निपुण कवि की ही कृतियों में देखने को मिल सकता है। आचार्य त्रिपाठी के इन्हीं विशिश्ट गुणों व कृतित्वों से हमारा समाज सदैव लाभान्वित होता रहेगा।

संदर्भ-

1. भारतीय काव्यशास्त्र की आचार्य परम्परा, प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2007
2. आधुनिक संस्कृत साहित्य सन्दर्भ सूची, प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली, 2002
3. गीताधीवरानुशीलनम्, अभिराज राजेन्द्र मिश्र, पृ. 5
4. राधावल्लभ की समीक्षा परम्परा, अभिराज राजेन्द्र मिश्र, पृ. 13
5. राधावल्लभ की समीक्षा परम्परा, अभिराज राजेन्द्र मिश्र, पृ. 136
6. http://www.socialresearchfoundation.com
7. https://www.sanskrit.nic.in
8. https://egyankosh.ac.in

ग्रन्थिबन्धन महाकाव्य में कुप्रथा-दहेज का समाधान

अनीका गोला शोधच्छात्रा एवं प्रो. पूनम लखनपाल
प्रोफेसर एवं अध्यक्षा संस्कृत विभागए रघुनाथ गर्ल्स पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, मेरठ

संस्कृत भाषा को देवभाषा, अमरभारती, गीर्वाणवाणी इत्यादि प्रशस्तियों से अलङ्कृत किया गया है। प्राच्य भाषा संस्कृत साहित्य विश्व के सबसे प्राचीन साहित्यों में से एक है। संस्कृत साहित्य में संस्कृत शब्द- सम् पूर्वक 'कृ' धातु क्त प्रत्यय, जिसका अर्थ- परिमार्जित१ तथा साहित्य शब्द - सहित (सह्+क्त) ष्यञ् प्रत्यय, जिसका अर्थ है- साहित्यिक या आलङ्कारिक रचना२। संस्कृत साहित्य अत्यन्त विपुल है । यह भारतीय समाज, संस्कृति, धर्म, दर्शन और कला के विभिन्न क्षेत्रों को दर्शाता है। वेद, ब्राहाण, आरण्यक, उपनिषद्, वेदाङ्ग, रामायण, महाभारत, पुराण, और धार्मिक ग्रन्थ संस्कृत साहित्य के प्रमुख अङ्ग हैं। संस्कृत साहित्य को प्रायः दो वर्गों में विभाजित किया गया है- (१) वैदिक संस्कृत साहित्य, (२) लौकिक संस्कृत साहित्य।

पुनः लौकिक संस्कृत साहित्य का विभाजन दो भागों में किया गया- दृश्यकाव्य और श्रव्यकाव्य। दृश्यकाव्य के अन्तर्गत रूपक, उपरूपक आदि आते हैं तथा श्रव्यकाव्य को तीन भागों में रखा गया है- गद्य, पद्य और चम्पूकाव्य। गद्यकाव्य के अन्तर्गत कथा व आख्यायिका और पद्यकाव्य के अन्तर्गत महाकाव्य व खण्डकाव्य आते हैं ।

महाकाव्यों की परम्परा भी अत्यन्त प्राचीन रही हैं। संस्कृत साहित्य में कई प्रमुख महाकाव्य हैं जो संस्कृत साहित्य की श्रेष्ठता का प्रतीक हैं। इनमें सबसे प्रमुख महर्षि वाल्मीकि की रामायण और

वेदव्यास की महाभारत है। इसके अतिरिक्त महाकाव्य परम्परा में रघुवंश, कुमारसम्भव, किरातार्जुनीय और शिशुपालवध आदि अन्य महाकाव्य विद्यमान हैं।

प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल में भी महाकाव्य की परम्परा समृद्ध हो रही है । आधुनिक काल में भी निरन्तर लेखन कार्य हो रहा है। आधुनिक महाकाव्य लेखन क्षेत्र में प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र, प्रो. रेवाप्रसाद द्विवेदी, वैद्य श्रीकृष्णराम भट्ट, भट्ट मथुरानाथ शास्त्री, डॉ. इच्छाराम द्विवेदी, डॉ. हरिनारायण दीक्षित, डॉ. रामकरण शर्मा व डॉ. निरञ्जन मिश्र आदि नाम प्रसिद्ध हैं। आधुनिक महाकवियों ने अपने महाकाव्यों में प्राचीनता के साथ-साथ आधुनिक समाज की समस्याओं, विचारों और मूल्यों को भी प्रस्तुत किया है।

आधुनिक संस्कृत जगत् में डॉ. निरञ्जन मिश्र एक विख्यात महाकाव्यकार के रूप में प्रसिद्ध है३ समाज में व्याप्त कुप्रथा के विरोध हेतु डॉ. निरञ्जन मिश्र ने ग्रन्थिबन्धन नामक एक उत्कृष्ट महाकाव्य की रचना की, जो दहेज प्रथा पर आधारित ग्रन्थ है। दहेज एक पुरानी और जटिल प्रथा है जो हमारे समाज में व्याप्त कुप्रथाओं में से एक है। दहेज प्रथा भारत सहित कई देशों में समाज के विभिन्न वर्गों में प्रचलित रही है। यह प्रथा समाज में सङ्क्रामक रोग के सदृश फैलती रही है। यह परम्परा, जिसमें विवाह के समय युवती का परिवार युवके के परिवार को उपहार, नकद या अन्य सम्पत्ति देने का दबाव बनाया जाता है। दहेज के धन का प्रबन्ध करते-करते युवती का पिता ऋणी हो जाता है और परिवार दरिद्र हो जाते हैं। दहेज के कारण सामाजिक, मानसिक और आर्थिक समस्याएँ उत्पन्न हो रही है। दहेज के कुछ दुष्परिणाम इस प्रकार हैं-

१. महिलाओं के विरुद्ध हिंसा- दहेज की माँग को लेकर महिलाओं के विरुद्ध हिंसा, शारीरिक और मानसिक अत्याचार में वृद्धि हो गई हैं । यदि दहेज का पूर्ण धन या सामान नहीं दिया जाता

है तो पतिगृह में स्त्रियों को प्रताड़ित किया जाता हैं, परिणामस्वरूप स्त्रियाँ दिन-प्रतिदिन सहनशक्ति से हीन होती हुई आत्महत्या कर लेती हैं या उन्हें हत्या का शिकार होना पड़ता है।

२. समाज में असमानता- दहेज प्रथा ने पुरुष और महिला के मध्य असमानता को बढ़ावा दिया है। युवतियों को हमेशा यह महसूस कराया जाता है कि उन्हें केवल एक बोझ माना जाता है और उनके परिवार को उनके विवाह के लिए कीमत चुकानी होती है। इससे लिङ्ग आधारित भेदभाव और असमानता की भावना उत्पन्न होती है।

३. आर्थिक बोझ- दहेज देने की मजबूरी से युवती के परिवार को अत्यधिक आर्थिक बोझ का सामना करना पड़ता है। कई परिवार अपनी आर्थिक स्थिति को खतरे में डालकर, ऋण लेकर या सम्पत्ति को बेचकर दहेज की माँग पूरी करने का प्रयास करते हैं। इससे उनकी आर्थिक स्थिति अव्यवस्थित हो जाती है और उनका जीवन स्तर प्रभावित होता है।

४. पारिवारिक और मानसिक तनाव- दहेज की माँग और उसे पूरा करने की प्रक्रिया में परिवारों के मध्य तनाव में वृद्धि होती है। यह सम्बन्धों को भी तनावपूर्ण और अस्थिर बना देता है। युवतियों और उनके परिवारों को मानसिक दबाव का सामना करना पड़ता है, और इससे कभी-कभी गम्भीर मानसिक स्वास्थ्य समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं, जैसे चिन्ता, अवसाद और आत्महत्या की प्रवृत्तियाँ।

५. कानूनी समस्याए - दहेज प्रथा को लेकर कानूनी मामलों में भी वृद्धि हुई हैं। भारतीय कानून (जैसे, दहेज प्रतिषेध अधिनियम) दहेज को अपराध मानते हैं, लेकिन दहेज के लिए धोखाधड़ी, प्रताड़ना और हत्या के मामलों की सङ्ख्या निरन्तर बढ़ रही है। यह समाज में कानून के प्रति विश्वास को कमजोर करता है।

६. परिवारों में घृणा और असन्तोष- दहेज के कारण परिवारों में आपसी घृणा और असन्तोष में वृद्धि होती जा रही है ।

दहेज लेने व देने दोनों के परिणाम अत्यन्त दुःखदायी होते है। विवाह के बाद भी, दहेज के कारण समस्याएँ निरन्तर जारी रहती हैं। युवक और युवती के परिवारों के मध्य सम्बन्ध खराब हो जाते हैं, और यह कभी-कभी दीर्घकालिक तनाव का कारण बन जाता है। इसी दहेज प्रथा के कारण ही दम्पत्तियों में सम्बन्ध-विच्छेद होता है।

७. अशिक्षा और बेरोजगारी- दहेज की माँग और उस पर व्यय किए जाने वाले अधिक धन के कारण, कई परिवार अपनी बेटियों को अच्छी शिक्षा देने में असमर्थ रहते हैं। यह न केवल युवतियों के भविष्य को प्रभावित करता है, बल्कि समाज में बेरोजगारी और अशिक्षा के स्तर को भी बढ़ावा देता है।

८. समाज में नैतिक गिरावट- दहेज प्रथा समाज में नैतिक और मानसिक गिरावट का कारण बनती है। यह एक ऐसा वातावरण उत्पन्न करती है, जिसमें कुछ लोग अपने लाभ के लिए दूसरों को पीड़ा पहुँचाने में सङ्कोच नहीं करते हैं। इस प्रकार, यह समाज में भ्रष्टाचार और बुराई को बढ़ावा देती है।

दहेज प्रथा समाज में असमानता, भ्रष्टाचार और महिलाओं के अधिकारों के हनन को बढ़ावा देती है। दहेज प्रथा का समाधान समाज के साथ मिलकर ही किया जा सकता है।

अतः मिश्र जी ने ग्रन्थिबन्धन में इसी दहेज प्रथा के ताने-बाने को उद्धृतकर इस कुप्रथा 'दहेज' का समाधान प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। ग्रन्थिबन्धन में ग्रन्थि शब्द - ग्रन्थ् +इन्[४] तथा बन्धन शब्द- बन्ध्+ल्युट्[५] के योग से व्युत्पन्न हुआ है । "ग्रन्थेः बन्धनम्" (षष्ठी तत्पुरुष) इति ग्रन्थिबन्धनम्, जिसका अर्थ है- विवाह के समय वर-वधू का गठजोड़ा अर्थात् गँठबन्धन[६]। ग्रन्थिबन्धन महाकाव्य का नायक शुभङ्कर और नायिका सुकन्या है। नायक का पिता रत्नेश्वर व मित्र निखट्टू है। ग्रन्थिबन्धन महाकाव्य के अष्टम सर्ग के प्रारम्भ में नायक शुभङ्कर के माता-पिता व उसके सगे-सम्बन्धी शुभङ्कर के विवाह के लिए चिन्तित है कि कुलवधू का चयन किस प्रकार किया

जाए? इस विषय में सभी परिवार जन अपने अलग-अलग विचार रखते हैं । कोई उत्तमकुल की वधू चाहता है, कोई रूपवती, तो कुछ उत्तम कुलगोत्र वधू चाहते हैं। किसी के नेत्र दहेज के धन पर गढे हैं, तो कोई विवाह में होने वाले व्यय के दुःख से दुःखी है और कुछ गुणवती निर्धन की कन्या को ही ग्रहण करके कुलवधू बनाना चाहते हैं। उच्च गोत्रोत्पन्न, गुणी, नवरूप की लता, गृहकार्य में निपुण, किसी धनवान की पुत्री इनमें से किसको ग्रहण किया जाए, कोई निर्णय तक नहीं पहुँच पाता।

पुत्रवधू के चयन में चिन्तित पिता (रत्नेश्वर) के पास धूर्त, कपटी, लोभी व अपनी बातों में फसाने में निपुण विनोद आकर रत्नेश्वर से कहता है इतने चिन्तित क्यों हो रहे हो- 'युगधर्मविरुद्धमार्ग' तथा 'निजपदे स्वकुठारघातं'७ (८.७) अर्थात् युगधर्म के विरुद्ध (दहेज के विरुद्ध) मार्ग पर प्रशस्त व अपनी कुल्हाड़ी अपने ही पैर पर मारने वाले तुम, ऐसा क्यों कर रहे हो ? लोग क्या कहेंगे? ऐसा विचारकर अपने हृदय को चिन्ता की अग्नि में मत जलाओ। 'यस्त्वां न पृच्छति कदापि निजार्थसिद्धौ तद्वाक्यमेव कथमत्र तव प्रमाणम्'८ (८.१०) अर्थात् जो लोग अपना कार्य सिद्ध करते समय तुमको नहीं पूछते है, और आज उन्हीं के वाक्य तुम्हारे लिए क्यों प्रमाण हो रहे है? विनोद इसी प्रकार दहेज ग्रहण करने के लिए रत्नेश्वर को तरह-तरह के प्रलोभन देने का प्रयास करता हुआ कहता है- 'ते वञ्चकास्तव सुतस्य गुणान्परीक्ष्य वाञ्छन्ति तद्ग्रहणमेव विनार्थदानम्'९ (८.११) अर्थात् वे तुम्हारे पुत्र के गुणों की परीक्षा कर बिना दहेज के ही उसको वर रूप में ग्रहण करना चाहते है । यदि मूल्य के बिना ही रत्नलाभ हो तो कौन उस रत्न को ग्रहण करने में समर्थ नहीं होगा? 'नो यौतुका˜वति काप्यपकीर्तिरेखा'१० (८.१५)) अर्थात् दहेज लेने या देने से कोई अपयश नहीं होता। अन्ततः वह विनोद अपनी रणनीति में सफल भी हो जाता है। तब रत्नेश्वर भी

दहेज के धन में अपने पुत्र का सुखी जीवन समझकर व सब कुछ छोडकर धनयुक्त कुलवधू चुनने के लिए मन से विनोद को नियुक्त कर देता है। जाल में फँसे उस रत्नेश्वर को देखकर विनोद मन्द मन्द हँसने लगता है। यह ज्ञात होने पर एवं विनोद के चरित्र का स्मरणकर शुभङ्कर का मित्र निखट्टू उसे अवगत कराता हुआ कहता है- 'सोऽप्यद्य मोहसमरे ननु यौतुकेन'११ (८.२७) अर्थात् वह (रत्नेश्वर) आज दहेज के कारण मोह के समर में पड़ चुका है । उस विनोद के जाल का नाश करने के लिए मन से तैयार हो जाओ, जिससे तुम्हे सफलता प्राप्त हो सके। निखट्टू शुभङ्कर को माता से बात करने के लिए प्रेरित करता हुआ कहता है- 'माता कदापि विमुखा न सुतस्य दृष्टा'१२ (८.३०) अर्थात् दया से परिपूर्ण हृदय वाली माता कभी भी अपने पुत्र के विपरीत नहीं होती है। वह अवश्य ही तुम्हारी सहायता करेंगी। तब शुभङ्कर माता को दहेज के विरोध हेतु समझाता है- 'कस्यापि यौतुकधनेन न कोषपूर्तिः'१३ (८.४९) अर्थात् दहेज के धन से किसी का कोष नहीं भरा है क्योंकि भिक्षा में प्राप्त, उपहार में प्राप्त या दहेज में प्राप्त धन कभी भी वृद्धि को प्राप्त नहीं होता। परिश्रम से अर्जित धन ही वृद्धि को प्राप्त होता है। तब अपने पुत्र के वचनों से भावुक माता पुत्र के अनुकूल होते हुए उसकी बातों से सहमत हो जाती है और कहती है- 'तुम्हारे मन के अनुकूल ही तुम गृहणी को प्राप्त करो'१४ (८.६१)। माता, पिता (रत्नेश्वर) से इस विषय में बात करती है और अन्ततः पिता भी पुत्र के मनोनुकूल वधू को ग्रहण करने के लिए तैयार हो जाते हैं। समाज में शुभङ्कर के चरित्र की प्रशंसा होती है क्योंकि शुभङ्कर दहेज का दृढपूर्वक विरोध करता है।

शुभङ्कर एक दृढचरित्र नायक है जो दहेज नहीं लेना चाहता। पिता भी प्रारम्भ में दहेज नहीं लेना चाहते थे, किन्तु अन्य दुर्बुद्धि व्यक्ति की प्रेरणा से वह दहेज लेने के लिए तैयार हो जाते हैं। यदि माता सावधान न होती और शुभङ्कर दृढनिश्चयी न होता तो दहेज का आदान-प्रदान अवश्य होता। दहेज एक ऐसी बुभुक्षा है जो कभी शान्त नहीं होती जिसके कारण अनेकानेक परिवार बलि चढ़ जाते हैं ।

निष्कर्ष : रूप में इस ग्रन्थ से कुछ मुख्य बिन्दु प्रस्तुत किए जा सकते हैं-

(१) युवाओं को दहेज का पूर्ण रूप से बहिष्कार करना अत्यन्त आवश्यक है। इस विषय में दोनों ही युवक एवं युवती का सहयोग अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। युवावर्ग एक-दूसरे के सहयोग से ही इस कुप्रथा को समाप्त कर सकते हैं । इसलिए युवतियों को प्रयास करना चाहिए कि वे दहेज रहित विवाह की माँग करें और युवक अपने श्रम से अर्जित धन का ही उपयोग करें व दहेज को कदापि स्वीकार न करें, क्योंकि जब युवावर्ग दहेज के विरोध में दृढ़निश्चयी होगा तभी समाज दहेज रहित विवाह की ओर जागरूक हो पाएगा। नवयुवक एवं नवयुवतियाँ ही नवीन समाज का निर्माण करते हैं। प्राचीन कुरीतियों के विरुद्ध स्वर उठाने में सक्षम होते हैं । आने वाला समाज वैसा ही होगा जैसा वे बनाएंगे।

(२) पुत्र को माता का सहयोग बहुत महत्त्वपूर्ण होता है क्योंकि माता कभी भी अपने पुत्र के विपरीत नहीं जाती। अतः दहेज विरोध में माता को पुत्र का सहयोग करना चाहिए। इससे समाज में समरसता और समानता की भावना बढ़ती है। कभी-कभी माताएँ ही दहेज की अभिलाषा करती हुई दृष्टिगत होती हैं ! परन्तु आज का युवक अपने भुजबल पर विश्वास रखते हुए अपनी माताओं को अनुकूल बना सकते हैं। माताओं को भी पुरानी प्रथाओं एवं प्रलोभन को छोड़ने का अवश्य ही निश्चय करना चाहिए।

(३) माता-पिता को किसी अन्य के बहकावे में आकर कदापि दहेज की माँग नहीं करनी चाहिए। अपितु कन्या के पिता की स्थिति परिस्थिति में स्वयं को रखते हुए विचार करना चाहिए कि यदि हमारे साथ ऐसा हो तो हमें कैसा प्रतीत होगा, अथवा जब हमारे परिवार में सब कुछ है तो हम किसी अन्य से माँग क्यों करें और आने वाली पीढी स्वयं अपने लिए अपनी आवश्यकतानुसार अर्जन करें ऐसी शिक्षा अथवा निर्देश युवा पीढ़ी को देना चाहिए। उनका यह

उपदेश अथवा परामर्श उनके अपने पुत्र की गृहस्थी की दृढ आधारशिला तो होगा ही साथ ही स्वस्थ समाज के निर्माण हेतु सहयोग भी होगा।

दहेज प्रथा को समाप्त करने के लिए समाज में शिक्षा और जागरूकता का प्रसार करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। लोगों को इस कुप्रथा के दुष्परिणामों के बारे में जागरूक करना, अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में, जहाँ यह प्रथा अधिक प्रचलित है, वहाँ एक प्रभावी उपाय हो सकता है। दहेज प्रथा की जड़ें भारतीय समाज की पुरानी सांस्कृतिक मान्यताओं और परम्पराओं में समाहित हैं। इस प्रथा को समाप्त करने के लिए समाज को मानसिकता में परिवर्तन लाना होगा। पारिवारिक और सामुदायिक स्तर पर इस विषय पर खुलकर चर्चा करना चाहिए और इसके विरुद्ध सांस्कृतिक अभियान चलाने चाहिए। महिलाओं को शिक्षा, रोजगार और समाज में समान अधिकारों के बारे में जानकारी देने से उनका आत्मविश्वास बढ़ेगा और वे इस कुप्रथा का विरोध कर सकेंगी। जब महिलाएँ खुद को आर्थिक और मानसिक रूप से मजबूत पाती हैं, तो वे दहेज की माँग के विरुद्ध खड़ी हो सकती हैं। दहेज प्रथा को समाप्त करने के लिए सरकार और समाज दोनों को मिलकर काम करना होगा। सरकार को दहेज प्रथा के विरुद्ध कठोर कदम उठाने चाहिए, जबकि समाज को पारम्परिक विचार से बाहर निकलकर दहेज के विरुद्ध एक सकारात्मक दृष्टिकोण ग्रहण करना चाहिए। दहेज प्रथा को समाप्त करना केवल कानूनी कदमों से सम्भव नहीं है, अपितु इसके लिए समाज में जागरूकता, शिक्षा और मानसिकता में परिवर्तन की आवश्यकता है। यदि हम इस कुप्रथा को जड़ से समाप्त करना चाहते हैं, तो हमें एकजुट होकर काम करना होगा। यह समय की माँग है कि हम एक समान, न्यायपूर्ण और मानवाधिकारों का सम्मान करने वाला समाज बनाए, जहाँ महिलाएँ सम्मान के साथ जीवन व्यतीत कर सकें।

इस प्रकार ग्रन्थिबन्धन महाकाव्य का कथानक एवं निबद्धन उपर्युक्त बिन्दुओं के माध्यम से समाज के लिए महत्त्वपूर्ण लक्ष्य को साधने में समर्थ दृष्टिगत होता है तथा युगीन समस्याओं के निराकरण में महत्त्वपूर्ण योगदान देता है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची-

(१) संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ, पृ० - ११९५

(२) वही, पृ० - १२५९

(३) संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास, पृ० - १८२८

(४) संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ, पृ० - ४१७

(५) वही, पृ० - ८१९

(६) वही, पृ० - ४१७

(७) ग्रन्थिबन्धन महाकाव्य - ८/७, पृ० - १६८

(८) वही - ८/१०, पृ० - १६९

(९) वही - ८/११, पृ० - १६९

(१०) वही - ८/१५, पृ० - १७०

(११) वही - ८/२७, पृ० - १७३

(१२) वही - ८/३०, पृ० - १७४

(१३) वही - ८/४९, पृ० - १७९

(१४) वही - ८/६१, पृ० – १८२

जगद्गुरु रामभद्राचार्य का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व

कु. भारती रानी, शोधच्छात्रा एवं प्रो० पूनम लखनपाल प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभागए रघुनाथ गर्ल्स पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेजए मेरठ

भारत में धर्म एवं आध्यात्म का प्रकाश अनादि काल से चारों दिशाओं में व्याप्त है। भारत प्राचीन काल से ही अन्य देशों के लिए आध्यात्मिकता का केन्द्र बिन्दु रहा है। विदेशी आक्रमणों एवं विषम परिस्थितियों के उपरान्त भी भारत ने अपनी आध्यात्मिकता को नष्ट नहीं होने दिया, वरन अन्य संस्कृतियों को आत्मसात कर एकता एवं व्यापकता का परिचय देकर इसे और गौरवपूर्ण किया है। यहाँ के संत महात्माओं ने सदैव ही लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया हैं। प्राचीनकाल से 21वीं सदी तक संतों की इस वृहद् शृङ्खला में एक नव्य पुष्प की तरह समाविष्ट नाम है श्री रामभद्राचार्य का।

व्यक्तित्व- 21वीं सदी के महान् संत स्वामी रामभद्राचार्य जी का जन्म उत्तर प्रदेश राज्य के जौनपुर जिले के सांडीखुर्द नामक ग्राम में 14 जनवरी 1950 ई. को हुआ था। रामभद्राचार्य एक प्रख्यात विद्वान्, रचनाकार, शिक्षाविद्, बहुभाषाविद्, कथावाचक, दार्शनिक एवं हिन्दू धर्म गुरु हैं। यें वर्तमान समय में श्रीरामानन्दीय, श्रीवैष्णव परम्परा के चतुर्थ रामानन्दाचार्य के पद पर प्रतिष्ठित हैं1। इनके पिता का नाम पण्डित राजदेव मिश्र एवं माता का नाम शची देवी था। रामभद्राचार्य ने अपनी आत्मकथा 'मेरी स्वर्णयात्रा' में अपने जीवन से सम्बन्धित अनेक घटनाओं का उल्लेख किया है। अपनी शैशवावस्था के विषय में वें लिखते हैं कि जन्म के ठीक दो माह पश्चात् अर्थात् 14 मार्च 1950 ई. को उनकी आँखों में रोहुआ नामक रोग हुआ था। जिससे उनकी आँखों में दाने पड़ गए। चिकित्सा के लिए पास के गाँव में एक महिला के पास ले जाया गया जो इस कार्य में दक्ष थी परन्तु चिकित्सा करते समय आँखों की ज्योति ही विलुप्त

हो गई। इनके पिता इन्हें चिकित्सा के लिए किंग जॉर्ज हॉस्पिटल में भी लेकर गए परन्तु कोई सफलता प्राप्त नहीं हुई और उनकी दृष्टि फिर कभी वापस नहीं लौटी2। तभी से यह प्रज्ञा चक्षु हैं। इन्होंने अध्य्यन के लिए कभी भी ब्रेल लिपि का प्रयोग नहीं किया। विधि के इस क्रूर कृत्य के उपरान्त भी अपने अनथक प्रयासों एवं दिव्य मेधा द्वारा इन्होंने अपनी शैक्षिक यात्रा पूर्ण की। केवल पांच वर्ष की अल्प आयु में इन्होंने 15 दिवस में गीता कण्ठस्थ कर ली थी। इनकी स्मरण शक्ति अन्य बालकों की तुलना में कहीं ज्यादा अधिक थी। रामभद्राचार्य जी की प्रारम्भिक शिक्षा गौरीशङ्कर संस्कृत महाविद्यालय से हुई। जहाँ इन्होंने प्रथमा, पूर्व मध्यमा एवं उत्तर मध्यमा की परीक्षाएँ प्रथम अवस्था में उत्तीर्ण की । इन्हीं दिनों के मध्य स्वामी रामभद्राचार्य अवसर खोज-खोज कर कथावाचन भी किया करते थे3।

मध्यमा पूर्ण करते-करते इन्हें व्याकरण के साथ-साथ हिन्दी, आंग्लभाषा, गणित, भूगोल और इतिहास का भी ज्ञान हो गया था। 1971 ई. में रामभद्राचार्य जी 7 अगस्त को वाराणसी स्थित सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में संस्कृत व्याकरण में शास्त्री के अध्ययन के लिए प्रविष्ट हुए4। 1974 ई० में इन्होंने शास्त्री की उपाधि सर्वाधिक अङ्कों के साथ परीक्षा उत्तीर्ण कर प्राप्त की। इसके पश्चात् आचार्य की उपाधि के लिए इन्होंने वहीं पर पुनः प्रवेश लिया और 1974 ई. में आचार्य की उपाधि प्राप्त की। आचार्य की उपाधि के प्रसङ्ग में रामभद्राचार्य जी लिखते हैं कि- “अब की बार मुझे पांच स्वर्ण- पदक और एक रजत-पदक प्राप्त हुआ। इस प्रकार मेरी स्वर्णयात्रा में अब आठ स्वर्ण-पदक जुड़े और स्वर्णयात्रा पूर्ण रूप से गतिशील हो गई“5।

विद्या वाचस्पति की उपाधि लिए पुनः सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय से पञ्जीकरण कराकर “अध्यात्मरामायणे अपाणिनीयप्रयोगाणां विमर्शः“ नामक शीर्षक से अनुसन्धान कार्य प्रारम्भ किया। अनुसन्धान कार्य करते हुए, रामभद्राचार्य की अध्यात्मयात्रा भी प्रारम्भ होने लगी। सन् 1978 ई. में बक्सर में एक

संत को देखकर ये अत्यन्त प्रभावित हुए जिनका नाम था श्री श्री 1008 श्री रामचरणदास जी महाराज फलाहारी6। अध्यात्म मार्ग पर अग्रसर होते हुए 14 अक्टूबर 1981 ई. को उनकी विद्या वाचस्पति (पीएच्.डी.) भी पूर्ण हो गई।

उनका प्रत्येक कक्षा में सर्वप्रथम स्थान देखकर 'विश्वविद्यालय अनुदान आयोग' ने इन्हें सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में व्याकरण विभाग के अध्यक्ष पद पर नियुक्ति प्रदान की और पत्र भी भेज दिया7 किन्तु रामभद्राचार्य ने इसे अस्वीकार कर अपना सम्पूर्ण जीवन धर्म एवं विकलाङ्गों की सेवा में लगाने का निर्णय लिया एवं रामचरणदास महाराज फलाहारी से प्रयाग में विरक्ति की दीक्षा ग्रहण कर संन्यास लिया। उन्होंने इनका नाम परिवर्तित कर इन्हें आचार्य डॉ॰ गिरिधर मिश्र से डॉ॰ रामभद्रदास नाम से विभूषित किया8। कुछ समय पश्चात् रामभद्राचार्य जी प्रयाग से चित्रकूट आ गए और वहाँ अपने आश्रम और तुलसी पीठ की स्थापना करवाई। 24 जून 1988 ई० में इन्हें काशी विद्वद्परिषद् ने 'तुलसी पीठ' चित्रकूट का रामानन्दाचार्य मनोनीत किया।

वर्तमान में भी यह रामानन्द सम्प्रदाय के उपस्थित चार जगद् गुरुओं में एक है। रामभद्राचार्य जी ने प्रस्थान त्रयी पर भाष्य लिखकर जगद्गुरु की उपाधि को भी प्राप्त किया। अब वे जगद्गुरु रामभद्राचार्य के नाम से भारत में ही नहीं विश्व में भी प्रसिद्ध है।

सामाजिक कार्यों में भी रामभद्राचार्य जी ने भारतवर्ष की समस्या के रूप में उपस्थित राम मन्दिर निर्माण में भी अपने अद्भुत एवं अभूतपूर्व योगदान प्रदान कर भारतीय संस्कृति को उपकृत किया है। राम मन्दिर के विषय में अपने अनुभव एवं ज्ञान के आधार पर न्यायालय में साक्ष्य प्रस्तुत कर न्यायाधीश को उचित फैसला लेने के लिए मार्ग प्रशस्त किया है।

कर्तृत्व- जगद्गुरु रामभद्राचार्य 22 भाषाओं के ज्ञाता है। यह हिन्दी, संस्कृत, अवधि, मैथिली सहित कई भाषाओं के सुप्रसिद्ध कवि हैं। इन्होंने 80 से अधिक पुस्तकों एवं ग्रन्थों की रचना की हैं। जिनमें से कुछ प्रकाशित एवं कुछ अप्रकाशित हैं। रचनाओं का विवरण निम्न प्रकार है -

महाकाव्य- श्री भार्गवराघवीयम्, अष्टावक्र, अरुन्धती,

खण्डकाव्य- आजादचन्द्रशेखरचरितम्, लघुरघुवरम्, सरयूलहरी, भृंगदूतम्, काका विदुर (हिन्दी),

पत्रकाव्य- कुब्जापत्रम्,

गीतकाव्य- राघवगीतगुंजन (हिंन्दी) भक्तिगीतसुधा (हिन्दी), गीतरामायणम्,

रीतिकाव्य- श्रीसीतारामकेलिकौमुदी (हिन्दी),

शतककाव्य- श्रीरामभक्तिसर्वस्वम्, आर्याशतकम्, चण्डीशतकम्, राघवेन्द्रशतकम्, गणपतिशतकम्, श्रीराघवचरणचिह्नशतकम्,

स्तोत्रकाव्य- श्रीगंगामहिम्नस्तोत्रम्, श्रीजानकीकृपाकटाक्षस्तोत्रम्, श्रीरामवल्लभास्तोत्रम्, श्रीचित्रकूटविहार्यष्टकम्, भक्तिसारसर्वत्रम्, श्रीराघवभावदर्शनम्,

सुप्रभातकाव्य- श्रीसीतारामसुप्रभातम्, भाष्य काव्य,

नाटक- श्रीराघवाभ्युदयम्, उत्साह,

गद्य- (प्रस्थानत्रयी पर संस्कृत भाष्य)

1. श्रीब्रह्मसूत्रेषु - श्रीराघवकृपाभाष्यम्,
2. श्रीमद्भगवद्गीतास- श्रीराघवकृपाभाष्यम्,
3. कठोपनिषदि- श्रीराघवकृपाभाष्यम्,
4. केनोपनिषदि- श्रीराघवकृपाभाष्यम्,
5. माण्डूक्योपनिषदि- श्रीराघवकृपाभाष्यम्,
6. ईशावास्योपनिषदि- श्रीराघवकृपाभाष्यम्,
7. प्रश्नोपनिषदि- श्रीराघवकृपाभाष्यम्,
8. तैत्तिरीयोपनिषदि- श्रीराघवकृपाभाष्यम्,
9. ऐतरेयोपनिषदि- श्रीराघवकृपाभाष्यम्,

10. श्वेताश्वतरोपनिषदि- श्रीराघवकृपाभाष्यम्,

11. छान्दोग्योपनिषदि- श्रीराघवकृपाभाष्यम्,

12. बृहदारण्यकोपनिषदि- श्रीराघवकृपाभाष्यम्,

13. मुण्डकोपनिषदि- श्रीराघवकृपाभाष्यम्,

हिन्दी भाष्य- महावीरी- हनुमान् चालीसा पर टीका,

भावार्थबोधिनी- श्रीरामचरितमानस पर टीका,

श्रीराघवकृपाभाष्य- श्रीरामचरितमानस पर टीका।

लगभग 74 वर्ष की आयु में भी रामभद्राचार्य जी सक्षम हैं और संस्कृत रचनाओं द्वारा न केवल संस्कृत साहित्य को अपितु वैश्विक साहित्य को भी समृद्ध कर रहे हैं।

सन्दर्भ -

1. मेरी स्वर्णयात्रा- पृ॰- 17
2. मेरी स्वर्णयात्रा- पृ॰- 29
3. मेरी स्वर्णयात्रा- पृ॰- 45-46
4. मेरी स्वर्णयात्रा- पृ॰- 46
5. मेरी स्वर्णयात्रा- पृ॰- 68
6. मेरी स्वर्णयात्रा- पृ॰- 71
7. मेरी स्वर्णयात्रा- पृ॰- 73
8. मेरी स्वर्णयात्रा- पृ॰- 75

साम्प्रतिक संस्कृत रचनाधर्मिता: एक विवेचना

डॉ. अर्चना सिन्हा

सहायक प्राध्यापिका, अध्यक्ष, संस्कृत विभाग

दि ग्रैजुएट स्कूल, कॉलेज फॉर वीमेन, जमशेदपुर

कोल्हान विश्वविद्यालय, चाईबासा

'संस्कृत साहित्य' ब्रह्माण्ड की अलौकिकता, अद्भुतता एवं उत्कृष्टता की पवित्र त्रिवेणी से युक्त एक ऐसा वांग्मय है जिसकी विलक्षण रचना शताब्दियों में हुई एवं मौखिक रूप में एक से दूसरी पीढ़ी को प्राप्त होती रही। हमारे बहुमूल्य विचार, उच्च दार्शनिक उड़ान, अध्यात्मिकता और हमारी उन्नत नैतिकता संस्कृत में ही समाहित है। संस्कृत साहित्य वह उच्च गिरिश्रृंग है जिस पर चढ़कर मनुष्य काल के सुदीर्घ स्रोत को बड़ी दूर तक निहार सकता है।

संस्कृते संस्कृतिज्ञया, संस्कृते सकलाः फलाः।

संस्कृते सकलं ज्ञानम्, संस्कृते किं न विद्यते।।

"सांस्कृतिक भाषा होने के कारण संस्कृत शताब्दियों से भारतीय जनमानस को एक सूत्र में पिरोने का कार्य किया है। उसके महत्त्व की प्रतिपादक पुरातन उपलब्धियाँ ही नहीं है, अपितु अद्यतन प्रवृतियाँ भी है। संस्कृत साहित्य की अज्रस धारा वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक प्रवहमान है। संस्कृत साहित्य ने भारतीय साहित्य को प्राणवान बनाते हुए सदैव युगानुकूल प्रवृतियों को आत्मसात किया।"[1]

"आधुनिकता की कालसीमा निर्धारण करना कठिन है किन्तु वर्तमान इतिहास, राजनीति, विज्ञान और समाजशास्त्र तथा उनकी साहित्यगत क्रिया-प्रतिक्रियाओं के अनुशीलन के आधार पर स्पष्ट है कि सन् 1784 से 1919 ई. तक का काल संस्कृत साहित्य के इतिहास में एक अविस्मरणीय अध्याय है।"[2]

संस्कृत और प्राच्य विद्या के पठन-पाठन में आंग्ल विद्वानों की सहभागिता द्वारा आधुनिक संस्कृत साहित्य के अनुशीलन का पुनर्जागरण हुआ। इस काल में संस्कृत की अवरुद्ध रचना-प्रक्रिया भी पुनः आरम्भ हुई और लेखकों के प्रयास से जनमानस में संस्कृत साहित्य के प्रति जागरुकता भी बढ़ी। ''गणपति शास्त्री द्वारा 1909 ई. में भास के तेरह नाटकों को खोज निकालना इस नवजागरण की मुख्य घटना है। राजराज वर्मा द्वारा 1919 ई. में विरचित नाटक गीर्वाणवाणी विजयम् आधुनिक संस्कृत साहित्य की चरमावस्था का प्रतीक है।"3 "1911 ई. में शिमला कॉन्फ्रेंस, 1914 ई. में अखिल भारतीय संस्कृत सम्मेलन एवं 1919 ई. में ओरियन्टल कॉन्फ्रेंस ने संस्कृत की वैज्ञानिक गवेषणा का कार्य प्रशस्त किया।"4 संस्कृत की सभी साहित्यिक विधाओं में नयी-नयी स्थापनाओं के साथ इसके स्वर मुखरित हुए। काव्य की शैली और विषयवस्तु बदले जिससे संस्कृत-रचनाधर्मिता को नवीन भावभूमि मिली। कविता, कहानी, उपन्यास, रूपक, चम्पूकाव्य, जीवनी, निबन्ध, पत्र-लेखन, डायरी, संगीतमय रेडियोनाटक, लघुकथा, यात्रा-विवरण, दूरदर्शन रूपक आदि अनेक अभिनव साहित्यिक विधाएँ प्रकाश में आईं जो पहले कभी देखी नहीं गई थीं। संस्कृत में नवीन साहित्यिक प्रतिमानों की स्थापना से संस्कृत वांग्मय न केवल समृद्ध हुआ, अपितु लोकप्रिय और जीवन्त भी बना।

आधुनिक संस्कृत कविता में प्राचीनता और नवीनता दोनों का सन्निवेश मिलता है। "इस युग के कवियों ने अनेक महाकाव्य, खण्डकाव्य, संदेशकाव्य, गीतिकाव्य, श्रृंगारिक काव्य, प्रकृतिकाव्य, व्यंग्य काव्य, प्रतीकात्मक काव्य, राष्ट्रगीत, स्तोत्रकाव्य, लहरीकाव्य आदि पृथक काव्यसंग्रहों को प्रस्तुत किया है जिनमें विषयवस्तु और रसनिवेश की दृष्टि से सर्वथा नूतन उदभावनायें मिलती हैं।"5

आधुनिक काव्य विधाओं में विपुल साहित्य की सर्जना करने वाले रेवाप्रसाद द्विवेदी, शिवजी उपाध्याय, ब्रह्मानन्द शर्मा,

अभिराज राजेन्द्र मिश्र, राधावल्लभ त्रिपाठी, रईसबिहारी द्विवेदी आदि काव्य शास्त्रियों ने संस्कृत काव्य-रचना के प्रभेदों को निर्दिष्ट करते हुए आधुनिक काव्य-प्रभेदों और प्रयोगों को भी समेटने का स्तुत्य प्रयास किया है। आज संस्कृत काव्य कहने से उनकी पुरातनता तथा दीर्घता की ध्वनि निकलती है। अतः आधुनिक कवि भावप्रवणता, स्वच्छन्द प्रवाह तथा छन्दोमुक्ति की दृष्टि से संस्कृत कविता कहना अधिक उपयुक्त मानते हैं। आधुनिक काल में संस्कृत में सौ से अधिक महाकाव्य लिखे गये हैं। रामायण, महाभारत, पुराणों से विषयवस्तु ग्रहण करने के बाद भी उनका निष्कर्ष, शैली, वस्तु-निरूपण, भाषा की शय्या भी अधुनातन होते हैं। सत्यव्रत-शास्त्री ने बौद्धसाहित्य के प्राचीन कथानक पर बोधिसत्वचरितम् महाकाव्य लिखा जो प्राचीन जातकमाला तथा क्षेमेन्द्र की अवधानकल्पलता से सर्वथा भिन्न है, कवि ने कलावाद के आकर्षण में शब्दालंकारों का व्यापक प्रयोग किया है। आधुनिक रचनाकारों ने अपने-अपने महाकाव्यों द्वारा अतीव उत्कृष्ट रचना से सीता में निहित करुणा को नूतन भावबोधों से भरा है। उनमें प्रथम है रेवाप्रसाद द्विवेदी, इन्होंने सीताचरितम् (1968) लिखा जिसका षष्ठ परिष्कृत संस्करण उत्तररामचरित (1990) नाम से प्रकाशित हुआ। दूसरे कवि हैं अभिराज राजेन्द्र मिश्र जिन्होंने जानकीजीवनम् महाकाव्य लिखा जिसमें रामराज्यभिषेक तक सीताचरित वर्णित है। सत्यव्रत शास्त्री ने श्रीरामकीर्तिम् महाकाव्य लिखा। भरत के जीवन पर आधारित भरतचरितम् नाम दो महाकाव्य रचे गये हैं एक के प्रणेता भवानी दन्तशर्मा, दूसरे के राजकुमार शर्मा हैं। दोनों की पृथक-पृथक काव्य शैलियाँ और प्रस्तुतियाँ हैं। प्राचीन विषयवस्तु पर आश्रित आधुनिक महाकाव्यों में भवानी दन्त शर्मा द्वारा रचित सौमित्रिसुन्दरीचरितम् काव्य उर्मिला के जीवन की पीड़ाओं पर आश्रित है। प्रमुख महाकाव्यकारों कृत वामनचरितम्, गणपतिसम्भवम्, रूक्मिणीहरणम्, कर्णार्जुनीयम्, भीष्मचरितम्, शुम्भवधम् तथा

विन्ध्यवासिनीविजयम् आदि महाकाव्य प्राचीन भागवत् एवं पुराणमूलक कथानक की प्रस्तुति नये लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रतीक रूप में करते हैं।

बीसवीं सदी में शताधिक महाकाव्य धर्मपुरुषों, राजपुरुषों, जननायकों एवं संतो पर लिखे गये। जिनमें उन नायकों के संघर्ष, तात्कालिक परिस्थितियों एवं उनके विचारों को प्रस्तुत किया गया है। हरिनन्दनभट्ट ने पंचमजार्ज के जीवन पर आधारित 75 सर्गो का सम्राटचरितम् (1920) लिखा, अखिलनन्दनकविरत्न ने दयानन्ददिग्विजयम् एवं सनातनधर्मविजयम् महाकाव्य, श्रीधर भास्कर वर्णेकर ने 68 सर्गो का विशाल महाकाव्य शिवराज्योदयम्, सत्यव्रतशास्त्री ने गोविंदसिंहचरितम् एवं महाकाव्यश्रीरामकीर्तिम्, इन्दिरागान्धिचरितम्, अधोध्याप्रसाद शास्त्री ने नेहरुदयम् काव्य अम्बिकादŸाव्यास ने शिवराजविजयम्, सुबोधचन्द्रपन्त ने झाँसीश्वरीचरितम् लिखा। वस्तुतः आधुनिक काल में संस्कृत महाकाव्यों की विपुलता है। इस संदर्भ में शास्त्रीय परम्परा में दीक्षित कवि रेवाप्रसाद द्विवेदी का स्वान्तन्त्रसम्भवम् (1990) महाकाव्य उल्लेखनीय है जिसमें प्राचीन परम्परा से भिन्न 1857 ये 1947 के बीच 90 वर्षों तक जो स्वाधीनता की लड़ाई हुई उसका वस्तुपरक किन्तु काव्यात्मक वर्णन है।

“आधुनिक युग में गीतिकाव्य के कुछ नवीन रूप दृष्टिगोचर होते हैं। इस अवधि में खण्डकाव्य, स्तोत्रकाव्य, मुक्तककाव्य के अतिरिक्त दूतकाव्य, शतक, राष्ट्रीय गीत एवं कोश-ग्रन्थ अधिक प्रणीत हुए हैं।”6

शतककाव्य या खण्डकाव्य में छन्द अनिवार्य है। प्राचीन शैली के विद्वान् कवि समस्त आधुनिक भावबोधों के प्रकाशन में समर्पित होने पर भी संस्कृत छन्दों को नहीं छोड़ते हैं। इस प्रसंग में महादेव शास्त्री (भारत शतक) रेवाप्रसाद, द्विवेदी, वेंकट राघवन,

रामावतार शर्मा, गंगाधर शास्त्री (अलिविलासि संलापाः)हरिदास सिद्धान्त वागीश(शंकरसंभव, वियोगवैभवनामक खण्डकाव्य), नागार्जुन, श्रीधर भास्कर वर्णेकर, रतिनाथ झा, जगन्नाथ पाठक जैसे संस्कृत कवियों ने छन्द को काव्यशरीर मानकर उसे कभी नहीं छोड़ा। किन्तु अभिराजराजेन्द्र मिश्र, राघावल्लभ त्रिपाठी, श्री निवासरथ, कैशवचन्द दान, हर्षदेव, पुष्पा दीक्षित जैसे कवियों ने आधुनिक छन्दों का भी प्रयोग किया अथवा छन्दोमुक्त कविता में भी अपने भाव व्यक्त किये।

सम्प्रति विभिन्न भाषाओं से संस्कृत में अनुदित काव्य कृतियाँ एक नई विधा के रूप में प्रसिद्ध है। अनुवाद कर्म कदाचित् मूल रचना करने से भी अधिक कठिन है। अनुवाद में मूलभाव की रक्षा करनी पड़ती है। अनुदित भाषा की प्रकृति को संभालते हुए अनुवादक अपना व्यक्तित्व भी उसमें डाल देता है। लक्ष्मणशास्त्री तैलंग ने शेक्सपीयर के नाटकों को अनुवाद किया। रामशास्त्री ने सिन्दवाद की यात्राकथाओं का भी अनुवाद सिन्धुवादवृतम शीर्षक से किया। प्रेमनारायण द्विवेदी ने बिहारी के दोहों का अनुवाद सप्तशती शीर्षक से किया। अंग्रेजी की रोमांटिक कविताओं का संस्कृत में आंग्लरोमाञ्चम् के नाम से एल.ओ. दोशी तथा हरिहर त्रिवेदी ने अनुवाद किया।

आधुनिक संस्कृत साहित्य अनेक विधाओं एवं दिशाओं में प्रवृत है। संस्कृत कवि एकांगी नहीं, सर्वदर्शी है। जापानी काव्यविधा हायकू (17 अक्षरों का 3 पंक्तियों वाला काव्य) भी संस्कृत में लिखी जा रही है। हर्षदेव, माधव ने लगभग 3000 हायकू कविताएँ लिखी हैं। विभिन्न विषयों पर दूतकाव्य लिखे जा रहे हैं यथा-रामावतार शर्मा ने व्यंग्यरूप में मुदगरदूतम्, इच्छाराम द्विवेदी ने मित्रदूतम्, रामाशीषपांडेय ने मयूखदूतम्, दिनेशप्रसाद पाण्डेय ने पत्रदूतम् और हरिनारायण दीक्षित ने श्रीहनुमददूतम्, अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने मृगांकदूतम्, राघावल्लभ त्रिपाठी ने धरित्रीदर्शनम् दूतकाव्य लिखा।

काव्य साहित्य में शतककाव्य की स्त्रोत तथा राष्ट्रीय भावना से जुड़ी अनेक उत्कृष्ट कृतियाँ भी आधुनिक कालखण्ड की विशिष्ट उपलब्धियाँ हैं। धार्मिक, नीतिसंबंधी एवं श्रृंगारी तीनों रूपोेें में शतक लिखे गये। राम, कृष्ण आदि विविध अवतार, शिव-पार्वती, गणेश, दुर्गा, गंगा, लक्ष्मी, प्रभृति देवी-देवताओं के स्तवन में अर्वाचीन कवियों द्वारा प्रणीत स्तोत्रकाव्यों की संख्या दो सौ से भी ऊपर है। लहरीकाव्यों में कृष्णब्रह्म तंत्र की पीयूषलहरी, चिरंजीवलाल की पीयूषलहरी, बिहारी जोशी की करुणाकटाक्षलहरी, रूद्रदेव त्रिपाठी की बदरीलहरी, राघावल्लभ त्रिपाठी की जनतालहरी, रोटिकालहरी जैसी 10 (दस) लहरीकाव्यों की लहरीदशकम् प्रमुख हैं। राष्ट्रीय भावनापरक शतककाव्य बीसवीं शताब्दी की सर्वोपरी विशेषता है। पहले स्वतंत्रता प्राप्ति की भावना और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश पर गौरव के साथ उनकी प्रगति और समृद्धि की कामना इन काव्यों का मुख्य विषय रहा है। महादेव शास्त्री का भारतशतकम् रामकैलाश पांडे का भारत शतकम्, रमाकान्त शुक्ल का भाति में भारतम्, जय भारतभूमे, भाति मौरीशसम्, भारतजनताहम्, अभिराज राजेन्द्र मिश्र का भारतशतकम् आदि अनेक काव्य भारत के उज्ज्वल रूप और भारतीयों की कल्याण भाव को प्रकट करते हैं।

संस्कृत काव्यधारा को नयी शैली में नूतन भावबोध के साथ प्रवाहित करनेवाले कवियों में जानकीवल्लभ शास्त्री अनुपम तथा प्रथम भी है। 1935 ई. में प्रकाशित काकली उनकी स्फुटकविताओं का संग्रह है। नये कथ्य और नयी साज-सज्जा से सज्जित इस काव्य-संकलन में संस्कृत की ऐश्वर्यमयी परम्परा और नवीनतम का समन्वय किया। राधावल्लभ त्रिपाठी ने गीतधवरम् में रागकाव्य की रचना गीतगोविन्द की परम्परा के नव्य स्वरूप में की। पुराने विषयों को आधुनिक संदर्भ से जोड़ने के प्रयासों में रेवाप्रसाद द्विवेदी के शाकटार काव्य का नाम लिया जा सकता है। नन्दों के कुचक्र से बन्दी बनाये शाकटार की कारागार से मुक्ति के प्रसंग को अफ्रीका के स्वाधीनता

सेनानी नेल्सन मण्डेला की कारागार मुक्ति से जोड़ा गया। आचार्य महाप्रज्ञ की अश्रुवीणा दार्शनिक उपदेशों से पूर्ण है। गोविन्दचन्द्र पाण्डेय की भागीरथी में सात खण्ड हैं जिसमें समकालीन परिदृश्य, इतिहास, प्रकृति, मिथक आदि से जुड़ी 163 कविताएँ हैं। संस्कृत जगत् को संख्या और गुणवत्ता में सर्वाधिक रचनाएँ देने वाले अभिराज राजेन्द्र मिश्र के कई काव्यग्रन्थ प्रकाशित हैं यथा-अरण्यानी, मधुपर्णी, अभिराजसहस्रक, मत्तवारणी, चर्चरी, शालभञ्जिका, कौमारम्, वैतरणी तथा अभिराजगीता निश्चय ही आधुनिक संस्कृत कवियों के विविधतापूर्ण काव्यों से संस्कृत साहित्य समृद्ध है।

भाषाओं की स्वाभाविक अभिव्यक्ति का साधन गद्य ही है। जब इसमें काव्य के उपादानों, लालित्य पदशय्या, अलंकरण, बिम्बयोजना, चमत्कार आदि का समावेश होता है तो यह काव्यस्वरूप बनकर स्थायित्व प्राप्त कर गद्य साहित्य कहलाता है। आधुनिक संस्कृत गद्य के अनेक लेखन विधा सुलभ है यथा-कहानी, उपन्यास, लघुकथा, संस्करण, डायरी, पत्रलेखन, जीवनी, निबंध, प्रबंध आदि जिन्हें सर्जनात्मक रचना कह सकते हैं।

आधुनिक लघुकथा या कहानी की विषयवस्तु समाज के यथार्थता के साथ उसकी विविध विकृतियों को दर्शाती है। प्रमोद भारतीय की कथा संकलन सहपाठिनी में नारी-जीवन की विसंगतियों को दर्शाया गया है। अन्य कथासंग्रहों में अम्बिकादत्त व्यास की रत्नाष्टकम् एवं कथाकुसुमम् वैंकटशक शास्त्री की कथाशतकम् है। पाश्चात्य प्रतिमानों पर आधारित जनसंवेदना से जुड़ी कथा की सर्जना का शुभारम्भ बीसवीं शताब्दी में मथुरानाथ शास्त्री की कथाओं से हुआ। पण्डिताक्षमाराव के कथापंचम्, ग्रामज्योति और कथामुक्तावली नामक तीन कथा-संग्रहों और रामशरण त्रिपाठी की कौमुदीकथाकल्लोलिनी ने उसी परम्परा को आगे बढ़ाया। अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने इक्षुगन्धा, चित्रपर्णी,

छिन्नमस्तिका, एवं कान्तार कहानियों को अपनी लेखनी से समृद्ध किया है। कान्तार कथा में पंचतंत्र एवं मोगली की कहानियों को नये भाव और शिल्प मिले हैं। हास्यव्यंग्य के क्षेत्र में प्रतिभाशाली व्यंग्यकार प्रशस्य मित्र शास्त्री है, जिन्होंने अनाध्रातं पुष्पम् तथा आषाढ़स्य प्रथमदिवसे लिखा है। नारायणदास की कहानियों का संकलन गंगे च यमुने चैव, मत्स्यगन्धा तथा लज्जा में प्रकाशित है। हत्याकारी कः कथा से संस्कृत में जासूसी कथा का भी अवतरण हुआ।

"प्राचीन गद्यकाव्य के अनुकरण पर उपन्यास नामक नयी गद्यकाव्यरीति का जन्म ऐतिहासिक उपन्यास शिवराजविजय से माना जाता है।"7 संस्कृत उपन्यासों में निर्विवाद रूप से अम्बिकादत्त व्यास का शिवराजविजय प्रथम एवं सर्वाधिक लोकप्रिय उपन्यास है। यथुरानाथ शास्त्री का उपन्यास आदर्शरमणी, रमानाथ शास्त्री का दुःखिनी, बलभद्र शर्मा का बाला नारी जीवन के विविध आयामों को दर्शाता है। सत्यप्रकाशसिंह कृत गुहावासी एक दार्शनिक मनोवैज्ञानिक उपन्यास है। आधुनिक संस्कृत उपन्यासकारों में कैशवचन्द्र दास ने निकषा, ऋतम्, मधुयानम्, अंजलि, शिखा शशिरेखा, अरुणा ओमशांति जैसे प्रसिद्ध तेरह उपन्यास लिखा है। राधावल्लभ त्रिपाठी ने भारतीय इतिहास को आधुनिकता में ढालकर तीन संस्कृत उपन्यास लिखा है- अभिनवशुकसारिका, अन्यच्च, तथा ताण्डव। हिन्दी, अंग्रेजी, तेलुगु, तमिल, बंगला आदि के प्रसिद्ध उपन्यासों के अनुदित संस्कृत रूपान्तरों से भी संस्कृत उपन्यास समृद्ध हुआ है।

गद्य लेखन के अन्तर्गत निबन्ध और प्रबन्ध की शैली का विकास भिन्न रूप में हुआ है। समसामयिक पत्र-पत्रिकाओं में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, वैज्ञानिक, साहित्यिक आदि विषयों पर आज तक हजारों निबंध लिखे जा चुके हैं। दीर्घ निबंधों को प्रबंध कहते हैं जो शास्त्रीय परिपाटी पर किसी एक को विस्तार से मौलिक रूप में प्रस्तुत करते हैं। "संस्कृत विद्वानों ने अनेकानेक शास्त्रीय ग्रन्थों

का प्रणयन कर संस्कृत साहित्य के वैशिष्टय को बढ़ाया है। साहित्य शास्त्रपरक ग्रंथों की एक अलग परिपाटी समीक्षा का भी विकास हुआ है। सम्प्रति आधुनिक संस्कृत आलोचना अनेक रूपों में सक्रिय हैं और उसके सभी अंग परिपुष्ट है।"8

"आधुनिक युग की नयी साहित्यिक विधाओं में पत्रलेखन एवं डायरी का अपना विशेष स्थान है। इनका आरंभ उन्नीसवीं शताब्दी ई. के प्रारंभ में मनोरमा तम्बुराटी और कार्तिक तिरूनाल महाराज के प्रेमपत्रों से माना जा सकता है। पद्यात्मक पत्रों का आदान-प्रदान जो प्रेमचंद तर्कालंकार एवं दूसरे विद्वानों और एच.एच. बिलसन के मध्य हुआ वह एक बंगाली ग्रंथ में संग्रहित है। शताधिक पत्र अनेक प्राचीन और प्रसिद्ध संस्कृत पत्रिकाओं में प्रकाशित रूप में मिलते हैं।"9 सत्यव्रत शास्त्री की विशाल संस्कृत डायरी (600 पृष्ठ) दिने-दिने याति मदीयजीवितम् (2011) शीर्षक से प्रकाशित हुई जो संस्कृत जगत् की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इसके प्रांजल तथा परिष्कृत गद्य में 2006 से 2011 तक के वर्षों की दैनन्दिन घटनाएँ लेखक की मनः स्थितियाँ, यात्राएँ, सभा-समितियों की बैठकें, विद्वान् और गणमान्य जनों से भेंट, शास्त्री जी के अपने अभिनन्दनों के वितरण तथा अन्य भी बहुत कुछ इसमें आकर्षक ढंग से समाविष्ट हैं। घर-परिवार, आसपास का परिवेश तथा समकालीन जीवन का भी इसमें निरुपण है।

आधुनिक संस्कृत साहित्य के सम्वर्द्धन एवं प्रसार में संस्कृत के पत्र और पत्रिकाओं का विशेष योगदान रहा है। संस्कृत में पत्र-पत्रिकाओं की परम्परा का प्रारंभ वर्ष 1869 ई. माना जाता है जब हृषीकेश भट्टाचार्य ने लाहौर से विद्योदयः नामक संस्कृत मासिकपत्र का प्रकाशन प्रारंभ किया। इसके बाद कई पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। जिनमें संस्कृत भारती (काशी), शारदा (प्रयाग) संस्कृत भास्करः (मथुरा), साहित्य सुधा (पटना), मनोरमा (उत्कल) कुछ प्रसिद्ध नाम हैं। वर्तमान समय में वरदराज अय्यंगार जैसे संस्कृतनिष्ठ और व्रती महानुभाव सर्वथा प्रशसंनीय हैं जिन्होंने महती साधना के साथ 1970 ई. में दैनिक संस्कृत पत्र सुधर्मा का बीस वर्षो से भी

अधिक समय तक नियमित प्रकाशन किया। धन की न्यूनता, साधनों की सीमा और पाठकों की अल्पता, संस्कृत पत्रों के प्रकाशन में प्रायः व्यवधान बने हैं। फिर भी संतोष का विषय है कि आज संस्कृत के विद्वान् सम्पादकों के दृढ़ निश्चय और प्रशासन की सहायता से देश में अनेक संस्कृत पत्र और संस्कृत पत्रिकाएँ नियमित रूप से प्रकाशित हो रही हैं- संस्कृत प्रतिभा, संस्कृत-मंजरी, सरस्वती-सुषमा, सागरिका, दूर्वा, सम्भाषणसंस्कृतम्, विश्वभाषा जैसे संस्कृत माध्यम की पत्रिकाएँ विश्वख्याति पा चुकी है। इलाहाबाद से प्रकाशित षाण्मासिक पत्रिका दृक् केवल आधुनिक संस्कृत साहित्य की समीक्षा को ही समर्पित है। इसे आधुनिक संस्कृत का विश्वकोश कहें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

रूपक या नाटय्कृतियों की दृष्टि से आधुनिक संस्कृत साहित्य अपने उत्कर्ष पर दिखाई देता है। नाटक द्वारा रोचक रूप में भावों की सम्प्रेषणशीलता इसका प्रधान कारण है इस काल में रूपक के प्राचीन प्रकार नाटक, प्रहसन, वीथी, भाण, अंक,प्रकरण आदि तदनुरूप लिखे गये पर साथ ही नयी विधाओं का भी प्रादुर्भाव हुआ। एकांकी और गीतनाट्य या छाया नाटक इस युग की विशेष उपलब्धियाँ माने जा सकते हैं। लम्बे नाटकों के स्थान पर लघु नाटिकाएँ अधिक लोकप्रिय हुई। “संस्कृत में ध्वनिनाटक या रेडियोनाटक की रचना और प्रसारण की बीसवीं शताब्दी ई. की नवीनतम विधा माना जा सकता है। “संस्कृत नाटकों के मंचन में भी कुछ विशेषताओं एवं नवीनताओं का समावेश हुआ है।“10

सम्प्रति नुक्कड ़नाटक जो गली, चौराहे आदि पर जमा हुए सामाजिकों के बीच प्रदर्शित होता है, बहुत प्रसिद्ध है। अभी तक संस्कृत मंे नुक्कड़ नाटकों के दो संकलन प्रकाशित हुए है- अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने चतुष्पथीयम् संकलन में चार नुक्कड नाटक लिखा- इन्द्रजालम्, निगृहघट्टम्, वैद्येयविक्रम् तथा मोदकं केन भक्षितम्। अभिराजराजेन्द्र मिश्र ने 75 एकांकी तथा दूसरे प्रकार के रूपक भी

लिखे हैं यथा-विद्योतमा नाटिका, नाट्यपंचामृतम, नाट्य प्रपदम् आदि। नुक्कड़ नाटकों का दूसरा संकलन राधावल्लभ त्रिपाठी का प्रेक्षणकसप्तकम् है जिसमें सात प्रक्षेणक सोमप्रभम् मशकधानी आदि हैं।

गीतिनाट्य के क्षेत्र में वनमालाभवालकर के रामवनगमनम् तथा पार्वतीपरमेश्वरीयम् प्रसिद्ध है। आनन्दवर्द्धन रत्नपारखी ने संवादमाला में 13 संवादो द्वारा एक नई विधा का प्रवर्तन किया था। रेडियोनाटक आज भी बड़ी संख्या में लिखे एवं प्रसारित किया जा रहे हैं। इस संदर्भ में रेवाप्रसाद द्विवेदी, अभिराज राजेन्द्र मिश्र, उमांशकर शर्मा 'ऋषि,' दयानन्द भार्गव समर्थ हस्ताक्षर हैं जिन्हांेने पुरातन कथानकों को प्रांसगिक बनाकर प्रसारित किया है। प्राचीन शैली में रचे गये नाटक शिखाबन्धन् को रामाशीष पांडे ने नये परिप्रेक्ष्य में रचा है।

"आधुनिक संस्कृत साहित्यकारों ने चम्पूकाव्यों का प्रणयन एक नयी और व्यापक पृष्ठभूमि पर किया और शताधिक चम्पूकाव्य लिखे गये। इनमें प्राचीन धार्मिक और पौराणिक विषयों के अतिरिक्त काल्पनिक जीवनीपरक और सामाजिक विषयों को भी काव्य का विषय बनाया गया है।"11 "आज चम्पूकाव्य विधा में साहित्य प्रणयन संस्कृत संरचना के अबाध प्रवाह का सूचक है साथ ही उसमें हो रहे परिवर्तन आधुनिक प्रवृयों के प्रभाव के द्योतक हैं।"12

देवभाषाप्रसारस्य कार्य यत् पुरतोडस्ति नः
न केवलं तदस्माकं कर्तव्य धर्म एव वा।
यत्सत्यं तत्तु पूर्वेषामृषीणामृशोधनम्
महत्फलं महत् पुण्यमिति मे निश्चितं मतम्।।

अर्थात् संस्कृत भाषा के प्रसार का जो कार्य हमारे सामने है वह न केवल हमारा कर्तव्य या धर्म है अपितु सत्य तो यह है कि पूर्व ऋषियों का ऋण चुकाना है जो महाफलदायी है तथा पुण्यवाला है।

समग्रतः इसमें किञ्चित् भी संदेह नहीं कि संस्कृत साहित्य के इतिहास की दीर्घ परम्परा को आधुनिक साहित्य में उत्तरोत्तर उत्कर्ष

और नूतन स्वरूप से संवलित किया है। अब तक सहस्त्रों ग्रन्थों को प्रकाशित करके अर्वाचीन संस्कृत कवियों और साहित्यकारों ने उसकी सभी विधाओं के विकास में अभूतपूर्व योगदान दिया है।

संदर्भ-ग्रन्थ-सूची:

1. आधुनिक संस्कृत साहित्य, डॉ. हीरालाल शुक्ल, प्राक्कथन से गृहीत, पृष्ठ संख्या- 5
2. वही, पृष्ठ संख्या- 9
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ. शशि तिवारी, पृष्ठ संख्या- 156
4. वही, पृष्ठ संख्या- 156
5. आधुनिक संस्कृत साहित्य , डॉ. हीरालाल शुक्ल, पृष्ठ संख्या- 16
6. संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ. शशि तिवारी, पृष्ठ संख्या- 161
7. दुर्वा, मध्य प्रदेश संस्कृत अकादमी पत्रिका, अंक 19,
8. संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ. शशि तिवारी, पृष्ठ संख्या- 172
9. वही, पृष्ठ संख्या- 173
10. वही, पृष्ठ संख्या- 173
11. वही , पृष्ठ संख्या- 165
12. वही , पृष्ठ संख्या- 167

सहायक संदर्भ-ग्रन्थ-सूची:-

ऽ आधुनिक संस्कृत साहित्य, डॉ. हीरालाल शुक्ल, रचना प्रकाशन, प्रथम संस्करण 1971।

ऽ साहित्य विद्याओं की प्रकृति, देवी शंकर अवस्थी, मैकमिलन इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली।

ऽ इक्षुगन्धा, डॉ. अभिराज राजेन्द्र मिश्र, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण 2010।

ऽ संस्कृत साहित्य बीसवीं शताब्दी, डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, दिल्ली, संस्करण-1998।

ऽ संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ. शशि तिवारी, भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1999।

ऽ संस्कृत साहित्य का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय, प्रकाशक शारदा निकेतन वाराणसी प्रकाशन, दशम संस्करण 1978।

याज्ञसेनी की पञ्चप्रार्थनाओं में निहित सामाजिक दृष्टि

प्रो. पूनम लखनपाल

प्रोफेसर एवं अध्यक्षा, संस्कृत विभाग

रघुनाथ गर्ल्स पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, मेरठ

विश्व साहित्य में भारतीय साहित्य का प्रतिनिधित्व करने वाले, भारतीय संस्कृति के मूलाधार, संस्कृत साहित्य के अनन्य दैदीप्यमान रत्न ग्रन्थद्वय रामायण और महाभारत में से एक है- महाभारत। जो कुछ इसमें है वह अन्य स्थानों पर हो सकता है परन्तु जो इसमें नहीं है वह अन्यत्र भी नहीं है।

धर्मे चार्थे कामे च मोक्षे भरतर्षभ।

यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।।[1]

अपने इसी वैशिष्ट्य के कारण यह ग्रन्थ प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक प्राचीन साहित्य से लेकर अर्वाचीन साहित्य का उपजीव्य बना हुआ है। संस्कृत साहित्य की कोई भी विधा- महाकाव्य, खण्डकाव्य, गीतिकाव्य, गद्यकाव्य, चम्पूकाव्य, रूपक, नाटक और कथा आदि हो महाभारत पर आधारित ग्रन्थ उसमें विद्यमान हैं। महाभारत आश्रित साहित्य परम्परा में डॉक्टर प्रतिभा राय द्वारा उड़िया भाषा में रचित और प्रो.भागीरथिनन्द द्वारा संस्कृतभाषा में अनूदित उपन्यासग्रन्थ याज्ञसेनी इसी परम्परा का अनुयायी है। इसी 'याज्ञसेनी' से शोधपत्र का विषय गृहीत है। अत: नायिका याज्ञसेनी के नाम पर ही उपन्यास का नामकरण किया गया है। शोधपत्र के शीर्षक में प्रयुक्त 'याज्ञसेनी' पद दो अर्थों को व्यक्त करता है- याज्ञसेनी उपन्यास एवं नायिका याज्ञसेनी द्रौपदी। विशालकाय महाभारत के अनेकानेक पात्रों में से प्रमुख पात्रों में एक

है- द्रौपदी, जिसे महाभारत के युद्ध का केन्द्र भी कहा जा सकता है। द्रुपद के प्रतिशोध की ज्वाला के कारण यज्ञ की ज्वाला से उत्पन्न वह याज्ञसेनी है, द्रुपदपुत्री होने के कारण द्रौपदी है, पाञ्चालप्रदेश के नरेश की पुत्री होने के कारण पाञ्चाली है, वह पाँच पतियों की धर्मपत्नी है, पाँच पुत्रों की माता है और याज्ञसेनी उपन्यास में उसकी प्रार्थनाएं भी पाँच हैं।

द्रौपदी नारीस्वातन्त्र्य के अभाव का प्रतीक है। द्रौपदी का जन्म सामान्य जन्म नहीं था। वह यज्ञ का प्रसाद थी। उसका जन्म हुआ पिता के प्रतिशोध की कामनापूर्ति हेतु किए गए यज्ञ से। उसका विवाह हुआ पिता की प्रतिज्ञा पूर्ण करने वाले युवक के साथ। उसको पाँच पतियों की पत्नी बनना पड़ा अपनी श्वश्रू के वचनों के पालनार्थ। उसे वन्य जीवन एवं अज्ञातवास के कष्ट सहने पड़े अपने पति के द्यूतव्यसन के कारण। उसे राज्यसभा में अपमानित होना पड़ा कुण्ठित युवराज के अहंकार और वृद्धपारिवारिकजन के मौन के कारण।

याज्ञसेनी उपन्यास में द्रौपदी द्वारा कृष्ण को लिखे पत्र रूपी आत्मकथा में द्रौपदी के आद्यन्त जीवन की पीड़ाएं अभिव्यक्त है। असंख्य अनुत्तरित प्रश्न हैं और अन्त में पाँच पुत्रों की माता, पाँच पतियों की धर्मपत्नी, पाञ्चाल नरेश की पुत्री, पाञ्चाली द्वारा कृष्ण से की गई पाँच प्रार्थनाएं हैं। यह मात्र पाँच प्रार्थनाएं नहीं अपितु समस्त नारी की दशा, अनुभूति, उसके कर्तव्य एवं अधिकारों के द्वन्द हैं। प्राप्त परिणामों में औचित्य अनौचित्य की कसौटी हैं। नारी हृदय की कोमल भावनाएं हैं, कोमल हृदय पर समाज के कठोर कुठाराघात हैं। यह पाँच प्रार्थनाएं नारीमात्र के अस्तित्व सम्बन्धी वह प्रश्न हैं जो उसकी सामाजिक दशा को प्रकट करते हैं। नारी के मनोभाव, उसकी सामाजिक दशा, उसके हर सामाजिक सम्बन्ध के प्रति विविध भाव इसमें अभिव्यक्त हैं। एक स्त्री होने के नाते डॉक्टर प्रतिभा राय ने इन मनोभावों को बहुत सुन्दर ढंग से अभिव्यक्ति दी है। डॉक्टर

भागीरथिनन्द ने मधुर एवं व्यञ्जनापूर्ण संस्कृतभाषा में इसका प्रस्तुतीकरण किया है। नायिका याज्ञसेनी की पञ्चप्रार्थनाएं आधुनिक संस्कृतकृति याज्ञसेनी की सामाजिक दृष्टि की अभिव्यञ्जक हैं । याज्ञसेनी की पाँच प्रार्थनाएं हैं[2]-

1. किसी नारी के एकाधिक पति न हों।

2. शत्रु को भी पुत्रशोक न हो।

3. द्यूतसभा में द्रौपदी को दी गईं शारीरिक, मानसिक प्रताड़नाएं किसी नारी को न मिलें।

4. पृथ्वी पर कभी महासमर न हो।

5. हे कृष्ण! मुझे मुक्ति नहीं पुनर्जन्म देना जिससे मैं प्रायश्चित कर सकूं क्योंकि मैंने अपने पतियों को प्रतिशोध हेतु प्रोत्साहित किया अब जगत् को शान्ति और प्रेम का सन्देश दे सकूँ।

इन पाँच प्रार्थनाओं में से चार प्रार्थनाएं याज्ञसेनी ने विश्व कल्याणार्थ की हैं। मात्र एक प्रार्थना उसने स्वयं के लिए की है। जिस प्रकार द्रौपदी पाँच पाँडवों को एक सूत्र में बाँधकर रखती है उसी प्रकार हर सामान्य नारी अपने परिवार को एक सूत्र में बाँधती है। वह परिवार की धुरी अथवा केन्द्र है। नारी केन्द्र की परिधि है उसका पति, पुत्र (सन्तान) और परिवार। दूसरे शब्दों में यही उसका संसार है। वह ही परिवार के सामाजिक सम्बन्धों के निर्वाह का आधार है। किसी भी सामाजिक सम्बन्ध के निर्वाह को पूर्ण करने का दायित्त्व सर्वप्रथम उसी का माना जाता है। उसी दायित्त्व को पूर्ण करते-करते उसका स्वत्व, आत्मभाव शनैः शनैः कहीं लुप्त होता जाता है। पति, पुत्र और परिवार ही उसका परिचय हो जाता है। नारी की प्राथमिकता वही है। इन पाँच प्रार्थनाओं में भी यही दृष्टि अभिव्यक्त होती है

प्रथम प्रार्थना- किसी नारी के एक अधिक पति न हों।[3] यह प्रार्थना गृहस्थ जीवन के मूल्यों का सार है। भारतीय संस्कृति में चार

आश्रमों का उल्लेख प्राप्त होता है- ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं सन्यास। इन चारों आश्रमों में गृहस्थ आश्रम शेष तीनों आश्रमों का आधार है अतः इसका विशेष महत्त्व है। ब्रह्मचर्य के उपरान्त विवाह में तत्पर हो गृहस्थ आश्रम का प्रारम्भ होता है अत: विवाह गृहस्थ आश्रम का मूल है। पति पत्नी दम्पति रूप में इस आश्रम का निर्वाह करते हैं, अपने अपने दायित्त्वों का पालन करते हैं। दम्पति का पारस्परिक सम्बन्ध बहुत निजी एवं आन्तरिक होता है तथा गृहस्थ सुख का मूल है।एक से अधिक धर्मसंगी भी कष्टप्रद हो जाते हैं। इतिहास पर दृष्टि डालें तो दशरथ की मृत्यु, राम के वनवास और भरत के राज्याभिषेक की कामना के मूल में एक से अधिक पत्नियों का होना ही कारण रहा। राम ने तो इस स्थिति से पूर्व ही सीता को एक पत्नी व्रत का वचन दिया था स्वयम्वर में जीतने वाले तथा द्रौपदी द्वारा वरण किए गए प्रियतम अर्जुन के प्रति प्रेम व्यक्त करने का स्वातन्त्र्य नहीं था द्रौपदी के पास। पाँच पतियों की पत्नी होने के कारण द्रौपदी को समाज में आत्मविभाजन का दुःख भोगना पड़ा।[4] कितना कुछ सहना पड़ा होगा, सुनना पड़ा होगा। द्यूतसभा में तो दुर्योधन और कर्ण ने इसी कारण पुरुषभोग्या, वारनारी आदि अपशब्दों का प्रयोग किया था। बाह्य लोगों ने तो अपमानित किया ही, स्वयं अपने पतियों द्वारा भी उसकी हृदय छलनी किया गया। इस प्रार्थना में नारी हृदय की गहराइयों में छुपी अनिर्वचनीय पीड़ा की अभिव्यक्ति है और समाज की प्रत्येक नारी के हित की कामना है।

द्वितीय प्रार्थना है- शत्रु को भी पुत्रशोक न हो।[5] इसमें द्रौपदी के मातृहृदय की करुणा अभिव्यञ्जित है। किसी माता के समक्ष उसकी सन्तान की मृत्यु हो जाना अत्यन्त कष्टप्रद होता है। द्रौपदी के समक्ष तो उसके पाँच-पाँच पुत्रों की अश्वत्थामा द्वारा हत्या हुई। एक ही पुत्र को खोना मातृत्व को विचलित कर देता है पहले अभिमन्यु और फिर पाँच पुत्रों के मृतशरीर को देखकर उसका मातृत्व कितना घायल हुआ होगा।[6] अपने ही नहीं वह कुन्ती और गान्धारी के पुत्रशोक से भी

विचलित हो उठी। द्रोणपत्नी हरिता के पुत्रशोक की कल्पना मात्र से ही उसने पञ्चपुत्रहन्ता अश्वत्थामा को न केवल क्षमा प्रदान की अपितु श्री कृष्ण से उसे जीवित छोड़ने की भी प्रार्थना की।

भारतीय कथाओं का वैशिष्ट्य है कि कथा के अन्त में स्वयं को प्राप्त शुभ की प्रार्थना सबके लिए की जाती है किन्तु स्वयं को प्राप्त कष्ट किसी को न मिले ऐसी कामना की जाती है। द्रौपदी ने स्वजन के लिए ही नहीं शत्रुओं के लिए भी ऐसी कामना की कि शत्रु को भी पुत्रशोक न हो। यह समाज के समक्ष उदार मातृत्व का उदाहरण है।

तृतीय प्रार्थना- द्यूतसभा में द्रौपदी को दी गई शारीरिक मानसिक प्रताड़ना है किसी को भी ना मिले।[7] द्यूतसभा में सभी अनुजों, अग्रजों एवं भृत्यों के समक्ष एक साम्राज्ञी को राजस्वला, एकवस्त्रधारिणी, खुले केश की अवस्था में लाया जाना, केश से पकड़कर लगभग घसीटते हुए लाया जाना, अतिशय अपमानजनक है। इतना ही नहीं उसे पर पुरुष द्वारा जंघा पर बैठने के लिए कहना, पाँच पतियों की पत्नी होने के कारण पुरुषभोग्या, वारनारी कहा जाना, कटुव्यङ्ग्य किये जाना अपमान की चरम अवस्था रही। पराकाष्ठा तो यह कि भरी सभा में उसे निर्वस्त्र करने का प्रयास किया गया। नारी का सौन्दर्य अभिशाप है अथवा पुरुष की कामुकता अपराध। वर्तमान युग में ईश्वर प्रदत्त यह सौन्दर्य उसके लिए अभिशाप बन गया है। पुरुष की कामुकता को दोष न देकर नारी को ही दोषी सिद्ध किया जाता है। चाहे सतयुग की अहिल्या हो या त्रेता की सीता अथवा द्वापर की द्रौपदी- नारी सदैव समाज की दृष्टि में न किए गए अपराध के लिए भी दोषी सिद्ध की गई। यही समाज की विडम्बना है कि पुरुषवर्ग के समस्त दोष क्षम्य होते हैं और स्त्री का दोष न होते हुए भी उसे दूषित मान लिया जाता है, उसे अपमानित होना पड़ता है, उसे शाप मिलता है या परीक्षा देनी होती है अथवा दण्ड भुगतना पड़ता है। वर्तमान युग में तो वह अभिशप्त ही है। इस प्रार्थना में नारी की वर्तमान दशा भी दृष्टिगत होती है।

चतुर्थ प्रार्थना- पृथ्वी पर कभी महासमर न हो[8] यह प्रार्थना जगत् के लिए, कलयुग के आगामी वंशधरों के लिए की गई है। द्रौपदी क्षत्राणी थी। युद्ध करना क्षत्रियों का धर्म होता है, स्वयं कृष्ण ने भी अर्जुन को यही उपदेश गीता में दिया। पाँच क्षत्रिय वीर योद्धाओं की पत्नी थी याज्ञसेनी। युद्धक्षेत्र में जहाँ पांडवों की अन्य पत्नियाँ नहीं थी, वहाँ उनका मनोबल बढ़ाने के लिए मात्र याज्ञसेनी ही उपस्थित थी, किन्तु युद्ध क्षेत्र की विभीषिका को देखकर उसका हृदय विदीर्ण हो गया। क्षत्राणी होने पर भी युद्ध का वह रक्तरञ्जित परिणाम देख कर युद्धभूमि में मृत पड़े वीर योद्धाओं के शव तथा उनकी माता, पत्नियों, सम्बन्धी नारियों की दशा देख द्रौपदी का हृदय कातर हो उठा[9] और उसने कृष्ण से यही प्रार्थना की कि पृथ्वी पर कभी महासमर न हो। याज्ञसेनी ग्रन्थ का यही सन्देश है कि आज सप्तद्वीपीय पृथ्वी पर पारस्परिक युद्ध करते देश इस सत्य को समझेँ कि युद्ध किसी के लिए भी लाभप्रद नहीं है। महासमर का परिणाम विजेता और पराजित दोनों बन्धुरहित हो जाते हैं। सभ्यता, संस्कृति, धन और जीवन का लोप हो जाता है अतः समाज को यह सन्देश है कि जाति, धर्म, भाषा और वर्ण के कारण देश अथवा विश्व का विभाजन न हो, उसमें युद्ध न हो।

पाँचवी प्रार्थना- जीवन के अन्तिम क्षणों में मृत्यु के द्वार पर स्थित होने वाली, जीवन को पुनः एक बार दृष्टिगत करने वाली, उस याज्ञसेनी की है जिसने धर्मपूर्वक कर्त्तव्यपालन करते हुए भी कुछ परिस्थितियों के लिए स्वयं को उत्तरदायी माना और उसका प्रायश्चित्त करना चाहा। उसका विचार था क्योंकि मैंने अपने पतियों को प्रतिशोध लेने के लिए प्रेरित किया अत: मुझे मुक्ति नहीं, पुनर्जन्म देना जिससे मैं प्रायश्चित कर सकूँ। विश्व को शान्ति, प्रेम और क्षमा का सन्देश दे सकूँ।[10]

साथ ही साथ इस प्रार्थना में संसार से ऊपर उठकर आत्मा और परमात्मा के मिलन के प्रयास हेतु उसकी अभिलाषा है कि हे कृष्ण! कृष्णप्रेमिका और विश्व प्रेमिका के रूप में मुझे बार-बार जन्म देना।[11]

ये पाँच मात्र प्रार्थनाएं ही नहीं हैं, अपितु समाज की नारी के प्रति उपेक्षाएं तथा नारी की समाज से अपेक्षाओं की अभिव्यक्ति हैं। द्रौपदी भले ही महाभारतकाल की नारी रही हो, किन्तु वह सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर अद्यतनीय नारी का प्रतिनिधित्व करती है, उनकी पीड़ाओं को वाणी प्रदान करती है, उनकी व्यथा कथा को अभिव्यक्त करती है।

इस प्रकार निष्कर्ष रूप में नायिका याज्ञसेनी की पञ्चप्रार्थनाएं आधुनिक संस्कृत कृति याज्ञसेनी की सामाजिक दृष्टि की अभिव्यञ्जक हैं जो समाज के अभिन्न अङ्ग नारीमात्र के हृदय की मार्मिक अनुभूतिजन्य प्रार्थनाओं को अभिव्यक्त करती हैं, उनमें अन्तर्निहित नारीसमस्याओं को प्रस्तुत करती हैं तथा सर्वकालिक और सार्वभौमिक दृष्टि से समाधान प्रस्तुत करती हैं।प्राचीन काल से लेकर अद्यतनीय नारी की कोमल भावनाओं पर सामाजिक कुठाराघातों को प्रस्तुत करती हैं। चाहे वह नारी साम्राज्ञी हो या सामान्य स्त्री। दूसरे शब्दों में यह पाँच प्रार्थनाएं नारी के प्रति समाज को एक नवीन दृष्टि प्रदान करती हैं, जिससे वह नारी के हृदय को देखने के लिए एक नवीन दृष्टिकोण प्राप्त कर सके।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-संदर्भ:-

1. महाभारत 1.56.33
2. याज्ञसेनी पृ. 367-368
3. कदापि कस्याश्चिन्नार्या एकाधिकपतिर्न विधीयताम्। वही पृ. 367

4. आत्मविभाजनदु:खमहं सम्यग्जानामि। वही पृ. 367
5. शत्रवेऽपि पुत्रशोकं मा प्रयच्छ। पुत्रशोकाद्गुरुतर: शोक: संसारे नान्योऽस्ति। वही पृ. 367
6. तनयानां शवान् वारं वारं निधायाङ्के व्यलपम्।..........वही पृ. 353
7. निर्यातना या सभागृहे ममाभूत्, सा पृथिव्यां पुनः कस्या अपि नार्या जीवने न भवतु। नारीं रूपमयीं कुरु, परन्तु पुरुषं कामुकं नैव कदाचित्। वही पृ. 367
8. इयं संसारकल्याणाय कलियुगस्य भाविमानवसमाजाय।.......... विश्वेऽस्मिन् सत्सु वैषम्येष्वगणितेष्वपि महासमरं न कदापि सम्भूयात्। ....वही पृ. 368
9. अनन्तमृतदेहा:............. वही पृ. 356
10. अहं मोक्षं न कामये...... अहं तु प्रार्थये पुनर्जन्म।........... वही पृ. 368
11. कृष्णप्रेमिकारूपेण विश्वप्रेमिकारूपेण च मां पुन: पुनर्जनय। वही पृ. 369

महावीर प्रसाद आचार्य का जीवन वृत्त एवं कृतित्व

वीना रानी, शोधच्छात्रा एवं
डॉ. बबलू शर्मा
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उसका मन स्वभाव से ही जिज्ञासा की ओर प्रवृत रहता है। संस्कृत संसार की सबसे श्रेष्ठतम भाषा है। इसमें ज्ञान का अथाह भण्डार है। संस्कृत साहित्य में ही समाज की भव्यता प्रतिबिम्बित होती है। क्योंकि समाज जिस प्रकार का होगा उसका बिम्ब भी वैसा ही प्रतिबिम्बित होगा। साहित्य कल्याण स्वरूप है। इसमें शब्द और अर्थ का मञ्जुल सामंजस्य दिखाई देता है। संस्कृत साहित्य को दो रूपों में जाना जाता है-वैदिक साहित्य और लौकिक साहित्य। वैदिक साहित्य के अंतर्गत वेद ,ब्राह्मण ,आरण्यक ,उपनिषद और वेदांग आते है। लौकिक संस्कृत के अंतर्गत रामायण ,महाभारत आदि आते है। संस्कृत साहित्य में प्राचीन विद्वानों में कवि शिरोमणि महाकवि कालिदास, भवभूति तथा महाकवि भास आदि ने अपनी बुद्धि कौशल से साहित्य जगत् में अपना नाम देदीप्यमान किया है । आधुनिक साहित्यकारों के द्वारा भी संस्कृत का प्रचार-प्रसार किया गया है। जिसमें आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा का नाम भी आदर के साथ लिया जाता है। जिन्होंने संस्कृत साहित्य में अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। विख्यात कवियों में इनकी गणना की जाती है।

आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा के विषय में अधिकतम रचनाओं में प्रतिपादित किया है। कुल सप्तदश श्लोकों के अंतर्गत स्वयं का जीवन वृत्त एवं उपलब्धियों का वर्णन किया है। यथा:-

महावीर प्रसादोऽहं विद्यावचस्पतिः कविः।
जात कालवन ग्रामे करनाले च सुस्थितः।।

महावीर प्रसाद शर्मा का जन्म हरियाणा प्रान्त के जींद जिले के कालवन ग्राम 21 सितंबर 1945 ई. में हुआ था। जो उस समय पंजाब प्रान्त के संगरूर जिले में था। इनके पिता का नाम पं. जयदेव मिश्र था। इनके पितामह पं. शिवदत्त शर्मा व्याकरण व ज्योतिष के प्रकाण्ड विद्वान् थे। इनके पिता ने राजस्थान के गंगानगर में गायत्री संस्कृत महाविद्यालय की स्थापना की। इनके चाचा पण्डित साधुराम शास्त्री भी संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् थे। जो कि बहुत लम्बे समय तक सनातन धर्म संस्कृत महाविद्यालय फाजिल्का के प्रधानाचार्य के पद को सुशोभित करते हुए पंजाब प्रदेश के समस्त संस्कृतज्ञों के लिए प्रकाश स्तम्भ रहे। वस्तुतः कहा जा सकता है कि यह विद्वत् कुल धन वैभव और भौतिक साधनों में नहीं अपितु विद्या-रूपी धन में ही विश्वास रखता है।

आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा बाल्यकाल से ही पठन कार्य में अत्यधिक रूचि रखते थे। प्राचीन गुरुकुल परम्परा के अनुसरण द्वारा आचार्य ने समस्त शास्त्रों का अध्ययन स्वयं के पिता को ही गुरु स्वरूप मानकर किया। **17** फरवरी **1963** ई॰ में इनका विवाह दमयन्ती के साथ सम्पन्न हुआ । जब इनका विवाह हुआ तब आचार्य जी की पत्नी केवल पांचवीं कक्षा पास थी । आचार्य जी से प्रेरित होकर कठिन परिश्रम के बल पर श्रीमती दमयन्ती ने शास्त्री एवं एम॰ ए॰ संस्कृत की उपाधि प्राप्त की । शिक्षाप्राप्ति के अनन्तर वे सरकारी सेवा में अध्यापिका नियुक्त हुई तथा अपना सम्पूर्ण जीवन अध्यापन कार्य में समर्पित किया ।

शिक्षा-

आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा ने केवल मात्र **14** वर्ष की अल्पायु में ही पंजाब विश्वविद्यालय से शास्त्री की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली थी। इन्होंने साधु आश्रम होशियारपुर में साहित्याचार्य की परीक्षा भी उत्तीर्ण की। आचार्यवर ने स्वतन्त्र रूप से अंग्रेजी भाषा का भी अध्ययन किया । इन्होंने एम॰ ए॰ संस्कृत तथा एम.ए. हिन्दी की परीक्षाएं भी उत्तम श्रेणी के साथ उत्तीर्ण की।

अध्यापन-

आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा ने श्री शंकरनाथ मठ संस्कृत
महाविद्यालय हदियाबाद (फगवाड़ा) पंजाब में लगभग **3** वर्ष तक विशारद और शास्त्री कक्षाओं को पढ़ाया, जबकि उस समय इनके सभी छात्रों की आयु इनसे अधिक थी। **2003** तक हरियाणा शिक्षा-विभाग में अध्यापक तथा प्राध्यापक के रूप में अनेक विद्यालयों में संस्कृत भाषा के अध्ययन-अध्यापन का कार्य किया हैं ।

सम्मान (पदक एवं पुरस्कार)

आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा बचपन से ही विलक्षण प्रतिभा धनी थे। विभिन्न संस्थाओं और मूर्धन्य नेताओं के द्वारा अनेक बार इनको सम्मानित एवं पुरस्कृत किया जा चुका है। राष्ट्रीय संस्कृत वर्ष **2000** का हरियाणा साहित्य अकादमी द्वारा इनको **सर्वश्रेष्ठ संस्कृत लेखक** का विशेष पुरस्कार देकर सम्मानित किया। संस्कृत गीतांजली पर हरियाणा साहित्य अकादमी का **प्रथम पुरस्कार 2001-02** में प्राप्त किया । आचार्य जी हरियाणा साहित्य अकादमी एवं हरियाणा संस्कृत अकादमी से छः बार प्रथम पुरस्कार से सम्मानित हो चुके हैं । आचार्य जी ने हरियाणा संस्कृत अकादमी का सर्वोच्च पुरस्कार **महर्षि वेदव्यास** पुरस्कार वर्ष **2006** में प्राप्त किया।

गणतन्त्र दिवस के उपलक्ष्य में वर्ष **2005** में आयोजित **"राष्ट्रीय सर्वभाषा कवि सम्मेलन"** में आचार्य जी को अनुवादक कवि के रूप में सम्मान प्राप्त हुआ। पुनः दो वर्ष पश्चात् उसी पर्व पर आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा को 'मूल-संस्कृत कवि' के रूप में सम्मानित किया गया। हरियाणा संस्कृत अकादमी द्वारा वर्ष **2009** में इनकी मौलिक रचना 'मन्दस्मिता' नामक (लघु कथाशतकम्) को **21000** रुपये का प्रथम पुरस्कार देकर सम्मानित किया गया। वर्ष **2011** में "अखिल भारतीय संस्कृत

लघु नाटक लेखन प्रतियोगिता" का आयोजन संस्कृत अकादमी दिल्ली द्वारा किया गया इस प्रतियोगिता में आचार्य जी द्वारा प्रथम स्थान प्राप्त करने पर दिल्ली संस्कृत अकादमी द्वारा पुरस्कृत किया गया । अखिल भारतीय प्रतियोगिताओं के अंतर्गत विशेष स्थान प्राप्त करने पर दिल्ली संस्कृत अकादमी द्वारा आचार्य जी को दश से अधिक बार सम्मानित किया गया। हरियाणा दिवस के उपलक्ष्य में एक नवम्बर **2013** को आयोजित हरियाणा कवि सम्मेलन में आचार्य जी को विशेष पुरस्कार से सम्मानित किया गया। हरियाणा संस्कृत अकादमी द्वारा वर्ष **2004** में आचार्य जी को पण्डित लक्ष्मीचन्द सम्मान के रूप में एक लाख रुपये का प्रथम पुरस्कार देकर सम्मानित किया गया। वर्ष **2016** में हरियाणा संस्कृत गौरव पुरस्कार के रूप में दो लाख रुपये का सम्मान हरियाणा संस्कृत अकादमी द्वारा प्रदान किया गया। उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा दिनांक **7** फरवरी **2018** को आचार्य जी को 'कालिदास सम्मान' प्रदान करते हुए सम्मानित किया गया। अनेक पुरस्कारों के अतिरिक्त आचार्य जी आकाशवाणी केन्द्र कुरुक्षेत्र से "गीता सन्देश" का नियमित लेखन तथा प्रसारण भी करते हैं।

कृतित्व:-

आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा संस्कृत साहित्य के मर्मज्ञ हैं। आप बाल्यकाल से ही लिखने में विशेष रूचि रखते थे। आपको काव्य प्रतिभा जन्म के साथ ही प्राप्त थी। पण्डितराज जगन्नाथ प्रतिभा को ही काव्य का प्रमुख कारण मानते हैं। और यह भी मानते हैं कि यह प्रतिभा पूर्वजन्म के संस्कारों, देवीकृपा व काव्यशास्त्रों के अभ्यास से प्राप्त होती है । छात्रावस्था में ही आपकी काव्य प्रतिमा के कारण विद्वत् परिषद् द्वारा आपको सम्मानित किया गया था। उस समय आपकी आयु **17-18** वर्ष की थी। इस प्रकार संस्कार एवं बीज रूप में अन्तर्मन में समाहित कवित्व आगे जाकर विभिन्न रचनाओं में प्रस्फुटित होकर पल्लवित हुआ। आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा जी द्वारा दो प्रकार

की रचनायें लिखी गई है। एक-काव्यानुवाद तथा दूसरी मौलिक। इनकी रचनाओं में महाकाव्य, खण्डकाव्य, मुक्तक काव्य, श्रोतकाव्य, नाटक, संस्कृत कथाएं एवं चम्पू काव्य हैं । इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार दिया जा सकता हैः-

1. काव्यानुवाद रचनाएं:

(क) ज्ञपत-जगदीशम्-

इस रचना में भारत के महान धर्मगुरु और सिखों के प्रथम गुरु गुरु नानक देव जी की रचना जपुजी साहिब का काव्यानुवाद किया गया है।

(ख) संस्कृत गीतांजलि-

गुरु रवीनद्रनाथ टैगोर की प्रसिद्ध रचना गीतांजलि का संस्कृत में काव्यानुवाद है।

(ग) विजय पत्रम्-

सिखों के दसवें गुरु गुरु गोविन्द सिंह जी द्वारा तत्कालीन मुगल तानाशाह औरंगजेब को ललकार एवं हुंकार भरा पत्र फारसी के शेरों में लिखा गया था। महान बलिदानी दशम गुरु गोविन्द सिंह जी का यह ऐतिहासिक पत्र 'जफरनामा' काव्यानुवाद के रूप में प्राप्त होता है।

(घ) संस्कृत मधुशाला-

डा॰ हरिवंश राय बच्चन जी प्रसिद्ध रचना मधुशाला तो वास्तव में ही मधुशाला है, जिसके मधु ने सम्भवतः लेखक को इसका काव्यानुवाद करने को प्रेरित किया ।

(2) मौलिक रचनाएं:

(क) हरियाणा गौरवम्

यह लगभग 500 श्लोकों का खण्डकाव्य है । इस रचना में हरियाणा प्रदेश के इतिहास, संस्कृति, वीरता और विकास का वर्णन किया गया है ।

(ग) ऋतवंदा-

इस रचना को सूक्तियाँ, अन्योक्तियाँ, विविधोक्तियाँ सन्दर्भ को लिए हुए तथा समकालीनता से जुड़ी हुई हैं ।

(घ) माया-ब्रह्म स्तुति-

इस रचना में माता-सीता की सहस्रनामावली तथा श्रीराम की सहस्रनामावली चरित्र क्रमानुसार होने से अपना एक अलग स्थान लिये हुए है।

(ड़) वैराग्यवीर चरितम्- ऐतिहासिक युद्धों का वर्णन होने के कारण इस रचना में वीर-रस का प्रयोग किया गया है। इसका प्रधान रस ”वीर रस“ है।

(च) गुरु रविदास विजय महाकाव्यम्-

गुरु रविदासविजय महाकाव्य भक्ति तथा उपदेश द्वारा भारतीय समाज को अत्यधिक प्रेरित करता है। गुरु रविदास भगवान् के अनन्य भक्त तथा शान्ति की प्रतिमा थे। इस प्रकार प्रस्तुत महाकाव्य में आध्यात्मिक उपदेश, सामाजिक उपदेश संसार की असारता तथा मानवता के पाठ का वर्णन किया गया है ।

(छ) भगवद् वाल्मीकि चरितम् महाकाव्यम्-

आधुनिक युग में प्रत्येक मनुष्य रामराज्य वांछित है । राम राज्य की राजनीति, प्रजापालन, सुख-समृद्धि तथा ऐश्वर्य समस्त जन द्वारा प्रशंसनीय है ।**11** सर्गों में विभक्त एवं **541** श्लोकों से युक्त है। महाकाव्य का आरंभ महर्षि वाल्मीकि के वर्णन से हुआ है-

कविमाद्यमथाद्यं च गुरु वाचामधीश्वरम्।
आदि मध्यान्त रहितं नुमः स्वायम्भुवं महः।।

इस प्रकार मंगलाचरण में ही वाल्मीकि को नमस्कार करके आगे प्रथम सर्ग में गुरु की महिमा का वर्णन सम्पूर्ण सर्ग में किया गया है।

भारतीय संस्कृति में रामकथा तथा रामराज्य का सम्पूर्ण संक्षिप्त वर्णन भगवद्वाल्मीकि चरितम् में सम्यक्तया वर्णित है।

(ज) मैक्समूलर चरितम् महाकाव्यम्-

मैक्समूलर चरितम् महाकाव्यम् आचार्य जी द्वारा संस्कृत प्रेम का दर्पण है । यह महाकाव्य जर्मनी के विद्वान् मैक्समूलर के जीवन चरित पर आधारित हैं । मैक्समूलर चरित में आचार्य जी ने संस्कृत एवं संस्कृति के गहन महत्त्व को प्रतिपादित किया है ।

(झ) लोककवि मांगेराम चरितम्-

लोककवि मांगेराम चरित सामान्य कवि के जीवन को प्रस्तुत करता है। हरियाणा का आदिकाल से वर्तमानकाल पर्यन्त प्रमुख इतिहास इस काव्य में विशेष रूप से प्रतिपादित है। हरियाणा राज्य का खान-पान, संस्कृति, रीति रिवाज तथा अन्यान्य मनोरंजन के अनेक साधनों का वर्णन इस महाकाव्य में किया गया है।

(ञ) हरियाणा संस्कृत सौरभम्-

हरियाणा संस्कृत साहित्य अकादमी के लिखित अनुरोध पर लिखी गयी यह रचना, हरियाणा के संस्कृत-साहित्य में विशेष स्थान रखती है। इस रचना में महर्षि वेदव्यास से लेकर आज तक के कवियों, लेखकों तथा उनकी रचनाओं का वर्णन किया गया है।

हरियाणवी सभ्यता से सम्बन्धित काव्य-

1. जै हरियाणा (हरियाणवी महाकाव्य)
2. राणी माद्री (हरियाणवी महाकाव्य)
3. हरियाणा गौरवम् (खण्डकाव्य)

4. ऋतंवदा (खण्डकाव्य)

5. हरियाणा वाणी-विलास (खण्डकाव्य)

6. हरियाणा वीरासुता कल्पना चावला चरित (खण्डकाव्य)-

7. हरियाणा संस्कृत गौरवम्

8. विंशशत्याः हरियाणा संस्कृत कविप्रशस्ति

9. एक रप्पैया अर एक ईंट (नाटक)

महापुरुषों के चरित्र आधारित रचनाएं-

1. शहीद उधम सिंह (खण्ड काव्य)

2. शहीद भगत सिंह (खण्ड काव्य)

3. मीना कुमारी शतकम् (खण्ड काव्य)

4. मिर्जा ग़ालिब शतकम् (खण्ड काव्य)

5. राज्ञी दुर्गावती (चम्पूकाव्यम्)

कविता रचनाएं-

मन्दिरे नाऽहं वसामि, मानवी, पाण्डुलिपि - रक्षणम्, शिखर वार्ता, षष्टिवर्षीयाणां कृते, कन्यकाः रक्ष्याः, प्रिंसोद्वारः, डॉ. भीमरावअम्बेड़कर,पॉपगानम्, रोबिनहुडः, मारिशसोदेशः, ताजभवनम्, सुनीतापाण्ड्याविलियम्स, क्रिकेट वै सर्वम्, शीर्षकजम्, भ्राता कन्हैया, लैला मजनू, समलाःगङ्गा।

अन्य रचनाएँ-

माया ब्रह्मस्तुति, आत्मनेपदम्, राममुहम्मद सिंह चरितम् (नाटक) जलवदानम् (नाटक), तारा (नाटक), नन्दिनी (नाटक), सुहासिनी (नाटक) मन्दस्मिता (लघुशतकम्) ।

काव्यानुवाद रचनाएं-

जपुजी साहिब, सुखमनी साहिब, रवीन्द्र गीतांजलि,

सुप्रसिद्ध मधुशाला, गुरु रविदास की साखी जफरनामा, सुनो राधिके।

आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा द्वारा रचित सभी रचनायें अपने-अपने शीर्षक के अनुसार ही संस्कृत में सम-सामयिक एवं नव्य विषयों को प्रकाशित करती है। इनके द्वारा रचित कविताएं छन्दोबद्ध एवं गेय है। इनका कविता संग्रह दिल्ली संस्कृत साहित्य अकादमी के सहयोग से प्रकाशित हुआ है।

आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा ने हरियाणवी भाषा में भी काव्य रचना की है। अभी तक इनकी लगभग **35** रचनाएं प्रकाशित हो चुकी हैं। वर्ष **2012** में इनकी कुल **8** रचनाएं प्रकाशित हुई हैं । इनकी यह बहुत बड़ी उपलब्धि है । आद्यावधि आचार्य जी लेखन कार्य में संलग्न है । आचार्य जी द्वारा अद्यतन लगभग **50** काव्य ग्रंथों पर भूमिका लेखन का कार्य भी किया गया है।

इस प्रकार अनेक रचनाओं के द्वारा आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा ने संस्कृत साहित्य जगत् तथा लोक साहित्य जगत् में स्वयं का योगदान समर्पित किया। आचार्य जी ने आध्यात्म रचना, गृहस्थ रचना, ग्राम्य रचना, बच्चों की रचना, मनोरंजन हेतु हास्य रचना आदि प्रत्येक क्षेत्र में अपनी कवित्व प्रतिमा का प्रदर्शन किया है। आचार्य जी द्वारा लिखित अधिकांश लेख, लघुकथाएं, लघुगाने, संस्कृत गीत, तथा अन्य पाप गाने आदि समय- समय पर संस्कृत साहित्य अकादमी दिल्ली द्वारा निरंतर प्रकाशित होते रहे हैं। मानो आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा महोदय ने स्वयं का समस्त जीवन शास्त्राभ्यास तथा संस्कृत साहित्य की सेवा में ही समर्पित किया हो।

रचनाओं पर शोध-

आचार्य की कई रचनाओं पर शोध -छात्र पीएच्.डी. तथा एम.फिल की उपाधि प्राप्त कर चुके हैं।

इस प्रकार अनेक रचनाओं के द्वारा आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा ने संस्कृत साहित्य जगत् तथा लोक

साहित्य जगत् में स्वयं का योगदान समर्पित किया। आचार्य जी ने आध्यात्म रचना, गृहस्थ रचना, ग्राम्य रचना, बच्चों की रचना, मनोरंजन हेतु हास्य रचना आदि प्रत्येक क्षेत्र में अपनी कवित्व प्रतिमा का प्रदर्शन किया है। आचार्य जी द्वारा लिखित अधिकांश लेख, लघुकथाएं, लघुगाने, संस्कृत गीत, तथा अन्य पॉप गाने आदि समय- समय पर संस्कृत साहित्य अकादमी दिल्ली द्वारा निरंतर प्रकाशित होते रहे हैं। मानो आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा महोदय ने स्वयं का समस्त जीवन शास्त्राभ्यास तथा संस्कृत साहित्य की सेवा में ही समर्पित किया हो।

संक्षेप में निष्कर्ष यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि संस्कृत जगत् में आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा अद्भुत विद्वान् एवं आधुनिक कवियों में शिरोमणि कवि हैं तथा आधुनिक कवियों में इनका नाम बहुत सम्मान के साथ लिया जाता है। सेवा निवृत्ति के उपरान्त आचार्य जी निरंतर लेखन कार्य स्स्सप्रवृत्त हैं। आचार्य महावीर प्रसाद शर्मा संस्कृत, हिन्दी, पंजाबी,फारसी, भाषा के बहुत ही अच्छे ज्ञाता है।

संदर्भ-ग्रंथ-सूची:

1. हरियाणा गौरवम्
2. भगवद् वाल्मीकि चरितम् महाकाव्यम्
3. हरियाणा संस्कृत सौरभम्
4. मैक्समूलर चरितम् महाकाव्यम्
5. वैराग्यवीर चरितम्
6. गुरु रविदास विजय महाकाव्यम्
7. लौकिकसंस्कृत साहित्य का इतिहास

"मानव जीवन मे गायत्री महामंत्र का अवदान"

डॉ. गौरी चावला
प्रवक्ता, संस्कृत विभाग
बी बी के डी ए वी कॉलेज फॉर वुमेन, अमृतसर

संक्षेपिका: प्रस्तुत शोध पत्र में मंत्र विज्ञान को जानने का प्रयास करते हुए गायत्री महामंत्र के विषय में संक्षिप्त रूप से जाना गया है। यह मन्त्र सर्वप्रथम ऋग्वेद में उद्धृत हुआ है। इसके ऋषि विश्वामित्र हैं और देवता सविता हैं। गायत्री मंत्र सभी मन्त्रों में सर्वोपरि माना गया है। गायत्री मन्त्र में चौबीस अक्षर होते हैं, यह 24 अक्षर चौबीस शक्तियों-सिद्धियों के प्रतीक हैं। वैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक दोनों ही पक्षों से यह मानव जीवन पर अत्यधिक प्रभाव डालता है। वैज्ञानिक अनुसंधान के क्षेत्र में यह घोषित किया गया है कि इस मंत्र के जाप से मनुष्य की बौधिक क्षमता के साथ-साथ रचनात्मक कुशलता का भी विकास होता है। मानसिक तनाव समाप्त, हृदय रोग निवार्ण, मन की शांति, स्थिरता, मस्तिष्क की तन्मात्राओं का विकास संभव है। इससे चेहरे की कांति बढ़ती है और शरीर निरोगी बनता है। आध्यात्मिक स्तर पर इस मंत्र के नित्य जाप से मनुष्य अपने जीवन के मार्ग को प्रशस्त कर प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति को प्राप्त कर सकता है। गायत्री मंत्र के जाप से मनुष्य जीवन से नकारात्मक शक्तियाँ दूर हो जाती है। गायत्री मन्त्र में चौबीस अक्षर होते हैं, यह 24 अक्षर चौबीस शक्तियों-सिद्धियों के प्रतीक हैं। इसी कारण ऋषियों ने गायत्री मन्त्र को सभी प्रकार की मनोकामना को पूर्ण करने वाला बताया है। मनुष्य सन्मार्ग की ओर प्रेरित होकर धर्म और सेवा जैसे कार्य करने लगता है। गायत्री मंत्र के नियमित जाप से सिद्धियां प्राप्त की जा सकती हैं। जप से कई तरह की व्याधियों से राहत मिलती है।

भद्रं कर्णेभि: श्रृणुयाम् देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरै रङ्गस्तुष्दुवा सस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः॥

ऋग्वेद 1-89-8

हे देववृंद, हम अपने कानों से कल्याणमय वचन सुनें। जो याज्ञिक अनुष्ठानों के योग्य हैं (यजत्राः) ऐसे हे देवो, हम अपनी आंखों से मंगलमय घटित होते देखें। नीरोग इंद्रियों एवं स्वस्थ देह के माध्यम से आपकी स्तुति करते हुए (तुष्टुवांसः) हम प्रजापति ब्रह्मा द्वारा हमारे हितार्थ (देवहितं) सौ वर्ष अथवा उससे भी अधिक जो आयु नियत कर रखी है उसे प्राप्त करें (व्यशेम)। तात्पर्य है कि हमारे शरीर के सभी अंग और इंद्रियां स्वस्थ एवं क्रियाशील बने रहें और हम सौ या उससे अधिक लंबी आयु पावें।

यह समस्त ब्रह्माण्ड मन्त्र-आबद्ध है। जीवन की प्रत्येक हलचल मन्त्र-संचालित है। प्राणिमात्र का छोटे से छोटा कार्य मन्त्र-संबद्ध है, अत: जीवन में मन्त्रों के बिना प्राणि-अस्तित्व की कल्पना ही नहीं की जा सकती। मंत्र की अपने आप में पूर्ण और स्वतंत्र सत्ता है। जीवन के पार्थिव अपार्थिव चेतन अचेतन, निष्क्रिय और सक्रिय जीवन में मंत्र की सर्वोपरि महत्ता है। वेदों में मंत्र को सर्वोच्च सत्ता एवं उन्हें ब्रह्म के समान माना है। हमारे जीवन में जो कुछ भी घटित हो रहा है इसके मूल में मंत्र की सत्ता विद्यमान है।

वास्तव में मन्त्र की शक्ति अपने आप में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आवश्यकता इस बात की है कि इन मन्त्रों का वैज्ञानिक अध्ययन होता चाहिए और इस बात का पता लगाना चाहिए कि हमारे महर्षियों ने जिस प्रकार से मन्त्रों की रचना की है उसके पीछे कया वैज्ञानिक आधार है, और किस प्रकार से हम उन मन्त्रों का उपयोग कर सकते हैं?

हमारे जीवन की पूर्णता में मंत्रों का सबसे अधिक महत्त्व है। जीवन में जो भी अभाव है वे मन्त्र साधना से पूरे किए जा सकते हैं।

उन मन्त्रों का वैज्ञानिक वर्गीकरण और वैज्ञानिक अध्ययन आवश्यक है।

इस क्षेत्र में भारतीय ज्योतिष अध्ययन अनुसन्धान केन्द्र में एक महत्त्वपूर्ण कार्य प्रारम्भ किया है और इनका सारा प्रयत्न इस बात पर है कि समस्त मन्त्रों का वैज्ञानिक ढंग से विवेचन और सरल भाषा में स्पष्ट हो कि किस प्रकार से उन मंत्रों का उपयोग किया जा सकता है और किस प्रकार से हम इन मंत्रों से लाभ उठा सकते हैं? हमारे शास्त्र पुराण आदि इस बात के साक्षी हैं कि विशेष यज्ञों द्वारा वे अपने कार्यों को सिद्ध करने में समर्थ होते थे। राजा दशरथ ने पुत्रेष्टि यज्ञ के माध्यम से राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न जैसे वीर पुत्र प्राप्त किये। इसी प्रकार सम्पूर्ण पृथ्वी पर विजय प्राप्त करने के लिए अश्वमेघ यज्ञों का प्रचलन था, जिसके माध्यम से वे पूर्ण विजय प्राप्त करने में समर्थ हो पाते थे।

ऋषियों ने सैकड़ों प्रकार के यज्ञों का विधान निश्चित किया है और यदि उस विज्ञान को सही ढंग से समझ कर यज्ञ किए जाएं तो निश्चय ही उनसे आज का समाज लाभ उठा सकता है। आज के वैज्ञानिक युग में भी यह सिद्ध हो चुका है कि जिस घर में नित्य हवन होता है उसके घर में बीमारी नहीं के वराबर आती है। कई व्यक्ति अपने घर में नित्य हवन करते हैं। इसके लिए छोटा-सा ताम्र पात्र बनाया जाता है और उसमें तिल, जौ, घी आदि का सम्मिश्रण कर विशेष हवन श्सम्पन्न किया ज।ता है और उन मंत्रों का उच्चारण होता है जो कि घर की सुख शान्ति और आथिक समृद्धि के लिए कामनायुक्त हों।

पश्चिम के वैज्ञानिकों ने भी यज्ञों की महत्ता को समझा है और उन्होंने इस बात को माना है कि यज्ञों के द्वारा घर के वातावरण को कीटाणुमुक्त बनाये रखने में बहुत अधिक सहायता मिलती है। यज्ञों का मंत्रों से गहरा सम्बन्ध है। प्रत्येक यज्ञ के लिए अलग-अलग मंत्रों का प्रावधान है। प्रत्येक यज्ञ के लिए अलग प्रकार की आहुति-सामग्री आदि का विवेचन कर्मकाण्ड के अन्तर्गत निर्दिष्ट है।

मंत्रों के शब्द परस्पर इस प्रकार से संगंफित होते हैं कि उनके उच्चारण से एक (वशेष प्रकार की ध्वनि का निर्माण होता है, वह ध्वनि विशेष प्रकार से वातावरण को प्रभावित करती है। विज्ञान इस बात का साक्षी है कि जेट विमान से उड़ने से जो ध्वनि बनती है उससे वातावरण में एक विशेष प्रकार का कम्पन होता है, जो कि बड़े से बड़े मकान को तोड़ने में सहायक हो जाता है, इसीलिए एयरोड्राम के आसपास ऊंचे मकान नहीं बनाये जाते।

मन्त्र-

महाकवि दण्डी ने मंत्र की महत्ता स्पष्ट करते हुए काव्यादर्श के प्रथम परिच्छेद में कहा है-

इदमन्धं तमः कृत्स्नं जायेत भुवन त्रयम्।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारान्न दीप्यते।।

यदि शब्द रूपी ज्योति सृष्टि के आरम्भ से ही न होती, तो ये तीनों लोक आज तक पूर्ण अंधकार में ही डूबे रहते।[1]

वर्णों के समूह से मंत्र का निर्माण होता है। प्रत्येक वर्ण का अपना एक अलग अस्तित्व है, और अपने आप में असीम शक्ति समेटे हुए है, तो उन वर्णो से पुंजीभूत मंत्र में कितनी अधिक शक्ति एवं क्षमता होगी, इसकी कल्पना की जा सकती है ।

मंत्र की दो स्थितियां होती हैं, **(१) गोपन एवं (२) स्फुट।** कुछ विद्वानों का विचार है कि उच्चारण से मंत्र की शक्ति समाप्त हो जाती है, उनका तक है कि मंत्र और साधक की अव्यय शक्ति का योग होना आवश्यक है, अव्यय शक्ति प्रत्येक मानव की वह निधि है, जो उसे जीवन्तता दिये हुए है, अव्यय शक्ति एवं मंत्र के गोपन घोष से ही कार्य सिद्धि होती है, 'शिवसूत्र विमर्षिनी' के अनुसार तो उच्चारण किये जाने वाले मंत्र, "मंत्र" कहलाने के अधिकारी ही नहीं हैं-

उच्चार्यमाणा ये मंत्रा न मंत्राश्चापि तद्विदु।

'महार्थ मंजरी' के अनुसार भी मनन योग्य शब्द ध्वनि ही मंत्र है। "मनन त्राण श्र्माणो मंत्रा"। मनन से ही पराशक्ति का अभ्युदय और उसका वेभव प्रकाशवान होता है।[2]

मन्त्र की महिमा-

सन्त तुलसीदास ने मन्त्र की महिमा बताते हुए कहा है कि मन्त्र वर्णों की दृष्टि से भले ही छोटा दिखाई दे, पर उसकी शक्ति अतुलनीय है, उससे ब्रह्मा, विष्णु, शिव को भी वश में किया जा सकता है, जैसे मदोष्मत्त हाथी को एक छोटा-सा अंकुश वश में कर लेता है। मन्त्र का अर्थ है जो "मनन करने पर त्राण करे।" यास्क मुनि ने मन्त्र के बारे में कहा है- "मन्त्रो मननात्" अर्थात् मन्त्र वह वर्ण समूह है जिनका बार-बार मनन किया जाय और जिससे इच्छित कार्य की पूर्ति हो। जितने भी प्रकार के मन्त्र हैं, उन सभी मन्त्रों के निम्न में से कोई-न-कोई देवता होता है।

गायत्री की उत्पत्ति-

गायत्री वह दैवी शक्ति है, जिससे सम्बन्ध स्थापित करके मनुष्य अपने जीवन-विकास के मार्ग में बड़ी सहायता प्राप्त कर सकता है। परमात्मा की अनेक शक्तियाँ हैं जिनके कार्य और गुण पृथक्-पृथक् हैं। उन शक्तियों में गायत्री का स्थान बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। यह मनुष्य को सद्बुद्धि की प्रेरणा देती है। गायत्री से आत्म-सम्बन्ध करने वाले मनुष्य में निरन्तर एक ऐसी सूक्ष्म एवं चैतन्य विद्युत धारा सञ्चरण करने लगती है, जो प्रधानत: मन, बुद्धि, चित्त और अन्तःकरण पर अपना प्रभाव डालती है। क्षेत्र के अनेकों कुविचारों, असत् संकल्पों,पतनोन्मुख दुर्गुणों का अन्धकार गायत्री रूपी दिव्य प्रकाश के उदय होने से हटने लगता है। यह प्रकाश जैसे-जैसे तीव्र होने लगता है, वैसे-वैसे अन्धकार का अन्त उसी क्रम से होता जाता है। गायत्री उपासना द्वारा साधकों को बड़े-बड़े लाभ प्राप्त

होते हैं।

वेद कहते हैं-ज्ञान को। ज्ञान के चार भेद हैं-ऋक, यजुः, साम और अथर्व। ऋक को धर्म, यजु: को मोक्ष, साम को काम, अथर्व को अर्थ भी कहा जाता है। यही चार ब्रह्माजी के मुख हैं। ब्रह्मा को चतुर्मुख इसलिये कहा गया हैं कि वे एक मुख होते हुए भी चार प्रकार की ज्ञान धारा का निष्क्रमण करते हैं।

वेद शब्द का अर्थ 'ज्ञान' इस प्रकार वह एक है, परन्तु एक होते हुए भी वह प्राणियों के अन्तःकरण में चार प्रकार का दिखाई देता है। यह चारों प्रकार के ज्ञान उस चैतन्य शक्ति के ही स्फुरण हैं, जो सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्माजी ने उत्पन्न की थी और जिसे शास्त्रकारों ने गायत्री नाम से सम्बोधित किया है। इस प्रकार चारों वेदों की माता गायत्री हुई। इसी से उसे 'वेदमाता' भी कहा जाता है। इस प्रकार जल तत्त्व को बर्फ, भाप (बादल, ओस, कुहरा आदि), वायु (हाइड्रोजन-ऑक्सीजन) तथा पतले पानी के चार रूपों में देखा जाता है, जिस प्रकार अग्नि-तत्त्व को, ज्वलन, गर्मी, प्रकाश तथा गति के रूप में देखा जाता है, उसी प्रकार एक "ज्ञान-गायत्री' के चार वेदों के चार रूपों में दर्शन होते हैं। गायत्री माता है, तो चार वेद इसके पुत्र हैं।

यह तो हुआ सूक्ष्म गायत्री का, सूक्ष्म वेदमाता का स्वरूप। अब उसके स्थूल रूप पर विचार करेंगे। ब्रह्मा जी ने चार वेदों की रचना से पूर्व चौबीस अक्षर वाले गायत्री मन्त्र की रचना की। इस एक मन्त्र के एक-एक अक्षर में सूक्ष्म तत्त्व समाहित हैं, जिनके पल्लवित होने पर चार वेदों की शाखा-प्रशाखाएँ उदभूत हो गयीं। गायत्री के चौबीस अक्षर भी ऐसे ही बीज हैं, जो प्रस्फुटित होकर वेदों के महा विस्तार के रूप में अवस्थित होते हैं।

गायत्री सूक्ष्म शक्तियों का स्रोत है-

गायत्री भारतीय धर्म दर्शन की आत्मा है। उसे परम प्रेरक गुरु मंत्र कहा गया है। गुरु शिक्षा भी देते हैं और सामर्थ्य भी। गायत्री में शब्द ज्ञान की ब्रह्म चेतना और सत्प्रयोजन पूरा कर सकने की प्रचंड शक्ति भरी पड़ी है। इसलिए उसे ब्रह्मवर्चस भी कहते हैं।

गायत्री का उपास्य सूर्य-सविता है। सविता का तेजस सहस्त्रांशु कहलाता है। उसके सात रंग के सात अश्व हैं और सहस्त्र किरणें सहस्त्र शस्त्र गायत्री की सहस्त्र शक्तियाँ हैं। इनका उल्लेख-संकेत उसके सहस्त्र नामों में वर्णित है। गायत्री सहस्त्र नाम प्रख्यात है। इसमें अष्टोत्तर शत अधिक प्रचलित हैं। इनमें भी चौबीस की प्रमुखता है। विश्वामित्र तन्त्र में इन चौबीस प्रमुख नामों का उल्लेख है। इन शक्तियों में से बारह दक्षिण पक्षीय हैं और बारह वाम पक्षीय। दक्षिण पक्ष को आगम और वाम पक्ष को निगम कहते हैं। कहा गया है-

गायत्री बहुनामास्ति संयुक्ता देव शक्तिभिः।
सर्वं सिद्धिषु व्याप्ता सा दृष्टा मुनिभिराहता।।

गायत्री के असंख्य नाम हैं समस्त देव शक्तियां उसी से अनुप्राणित है, समस्त सिद्धियों में उसी का दर्शन होता है।

चतुर्विंशति साहस्त्र महा प्रज्ञा मुखं मतम्।
चतुर्विशक्ति शवे चैतु ज्ञेयं मुख्यं मुनीषिभिः।।

महा प्रज्ञा के चौबीस हजार नाम प्रधान हैं, इनमें चोबीस को अधिक महत्वपूर्ण माना गया है।

तत्रापि च सहस्रं तु प्रधान परिकीर्तिम्।
अष्टोत्तरशतं मुख्यं तेषु प्रोक्तं महर्षिभिः।।

उन चौबीस सौ नामों में भी मात्र सहस्रनाम ही सर्वविदित हैं। सहस्रों में से एक सौ आठ चुने जा सकते हैं।

चतुर्विंशतिदेवास्याः गायत्र्याश्चाक्षरणि तु।
सन्ति सर्वसमर्थानि तस्याः सादान्वितानि च।।

चौबीस अक्षरों वाली सर्व समर्थ गायत्री के चौबीस नाम भी ऐसे ही हैं, जिनमें सार रूप से गायत्री के वैभव विस्तार का आभास मिल जाता है।

चतुर्विंशतिकेष्वेवं नामसु द्वादशैव तु।
वैदिकानि तथाऽन्यानि शेषाणि तान्त्रिकानि तु।।

गायत्री के चौबीस नामों में बारह वैदिक वर्ग के हैं और बारह तान्त्रिक वर्ग के।

चतुर्विंशंतु वर्णेषु चतुर्विंशति शक्तयः।
शक्ति रूपानुसारं च तासां पूजाविधीयते।।

गायत्री के चौबीस अक्षरों में चौबीस देवशक्तियां निवास करती हैं। इसलिए उनके अनुरूपों की ही पूजा-अर्चा की जाती है।

आद्य शक्तिस्तथा ब्राह्मी, वैष्णवी शाम्भवीति च।
वेदमाता देवमाता विश्वमाता ऋतम्भरा।।
मन्दाकिन्यजपा चैव, ऋद्धि सिद्धि प्रकीर्तिता।
धैदिकानि तु नामानि पूर्वोक्तानि हि द्वादश।।

(1) आद्यशक्ति (2) ब्राह्मी (3) वैष्णवी (4) शाम्भवी (5) वेदमाता (6) देवमाता (7) विश्वमाता (8) ऋतम्भरा (9) मन्दाकिनी (10) अजपा (11) ऋद्धि (12) सिद्धि- इस बारह को वैदिकी कहा गया है।

सावित्री सरस्वती ज्ञेया, लक्ष्मी दुर्गा तथैव च ।
कुण्डलिनी प्राणग्निश्च भवानी भुवनेश्वरी ।।
अन्नपूर्णेति नामानि महामाया पयस्विनी ।
त्रिपुरा चैवेति विज्ञेया तान्त्रिकानि च द्वादश ।।

(1) सावित्री (2) सरस्वती (3) लक्ष्मी (4) दुर्गा (5) कुण्डलिनी (6) प्राणाग्नि (7) भवानी (8) भुवनेश्वरी (9) अन्नपूर्णा (10) महामाया (11) पयस्विनी और (12) त्रिपुरा-इन बारह को तान्त्रिकी कहा गया है।[3]

गायत्री मंत्र का तत्वज्ञान-

गायत्री के तत्त्व रूप 24 वर्ण में 24 प्रकार की आत्मतत्त्व-रूपता स्थित है। चौबीस तत्त्व के बाहर और भीतर रहकर उसे अपने

अंतर में स्थित करने से मनुष्य अंतर्यामी बन जाता है। सब ज्ञानों में यह अंतर्यामी-विज्ञान सर्वश्रेष्ठ है, जो गायत्री की साधना द्वारा ही प्राप्त होता है।

अंतर्यामी ब्रह्म का तत्व बोध कर लेना कोई साधारण काम नहीं है क्योंकि यह विषय बहुत ही सूक्ष्म है। स्थूल शक्तियों का विचार करने वालों के लिए उसका यथार्थ बोध होना असंभव ही है योग के आचरण से बुद्धि को सूक्षम बनाकर सुविचार और निर्विचार समापत्ति द्वारा(चित्त जिस विषय में सलंगन होता है और स्फटिक मनी जैसा प्रतीत होता है उस तदाकारापत्ति को ही समापत्ति कहा जाता है) सूक्ष्म विषयों के प्रति की जाती है। हिरण्यगर्भ जैसा सूक्ष्मतर अथवा अंतर्यामी तत्व जानना हो तो उस सुख स्वरूप परमात्मा को योगाभ्यास द्वारा प्राप्त करना ही परम पुरुषार्थ है। इसके लिए गायत्री के 24 अक्षरों से प्राप्त अति सूक्ष्म ज्ञान सर्वाधिक श्रेष्ठ है। साधना की सफलता के रहस्य गोपथ ब्राह्मण में अच्छी तरह समझाया गए हैं इसके अंतर्गत मुद्गल और मैत्री संवाद में गायत्री तत्व दर्शन पर 33-35 कंडिका में विस्तृत प्रकाश डाला गया है मैत्रयी पूछते हैं-

“सवितुर्रेण्यम भर्गोदेवस्य, कवयः किश्चित आहुः” गो.ब्रा. (प्र. 1/33-35)

अर्थात् हे भगवान्! यह बताइए कि “सवितुर्वरेण्यम् भर्गोदेवस्य” इसका अर्थ सूक्ष्मदर्शी विद्वान क्या करते हैं।

इसका उत्तर देते हुए मौदगल्य कहते हैं- "सवित प्रविश्यता: प्रयोदयात् यामित्र एति।" अर्थात्- सविता की आराधना इसलिए है कि वे बुद्धि क्षेत्र में प्रवेश करके उसे शुद्ध करते और सत्कर्म परायण बनाते हैं। वे आगे और भी कहते हैं- "कवय देवस्य सवितुः वरेण्यं भर्ग अन्न पाहु" अर्थात् तत्त्वदर्शी सविता का आलोक अन्न में देखते हैं। अन्न की साधना में जो प्रखर पवित्रता बरती जाती है, उसे सविता का अनुग्रह समझा जा सकता है।

आगे और भी स्पष्ट किया गया है- "मन एवं सविता वाक्

सावित्री" अर्थात् परम तेजस्वी सविता जब मनः- क्षेत्र में प्रवेश करते हैं जो जिह्वा को प्रभावित करते हैं और वचन के दोनों प्रयोजनों में जिह्वा पवित्रता का परिचय देती है। इस तथ्य को आगे और भी अधिक स्पष्ट किया गया है -"प्राण एव सविता अन्न सावित्री, यत्र होव सविता प्राणस्तरन्नम्। यत्र वा अन्न तत् प्राण इत्येते।" अर्थात्- सविता प्राण है और सावित्री अन्न। जहाँ अन्न है वहाँ प्राण होगा और जहाँ प्राण है वहाँ अन्न।[4]

ॐ भूर्भुव: स्व: तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य

धीमहि धियो यो न: प्रचोदयात् ।[5]

यजु० ३६.३

भावार्थ- उस प्राण स्वरूप, दुःख नाशक, सुख स्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी,पाप नाशक, देव स्वरूप परमात्मा को हम अन्त्रात्मा में धारण करें। वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करें।

गायत्री के २४ अक्षर अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण शिक्षाओं के प्रतीक हैं। वेद, शास्त्र, पुराण, स्मृति, उपनिषद आदि में जो शिक्षाएँ मनुष्य जाति को दी गई हैं, उन सबका सार इन २४ अक्षरों में विद्यमान है। गायत्री, गीता, गंगा और गौ यह भारतीय संस्कृति की चार आधारशिलाएँ हैं, इन सबमें गायत्री का स्थान सर्वप्रथम है। समस्त धर्म ग्रंथों में गायत्री की महिमा एक स्वर से कही गई। समस्त ऋषि-मुक्त कंठ से गायत्री का गुण-गान करते हैं। शास्त्रों में गायत्री की महिमा बताने वाला साहित्य भरा पड़ा है।

गीता में भगवान् ने स्वयं कहा है-' गायत्री छंदासामहम्" अर्थात्-गायत्री मंत्र मैं स्वयं ही हूँ। गायत्री उपासना के साथ-साथ अन्य कोई उपासना करते रहने में कोई हानि नहीं। सच तो यह है कि अन्य किसी भी मंत्र का जाप करने में या देवता की उपासना में तभी सफलता मिलती है, जब पहले गायत्री द्वारा उस मंत्र या देवता को

जाग्रत कर लिया जाए। कहा भी है-

यस्य कस्यापि मंत्रस्य पुरश्चरणमारभेत् ।
व्याहृतित्रयसंयुक्तां गायत्रीं चायुतं जपेत्॥
नृसिंह्यर्कवराहाणां तान्त्रिकं वैदिकं तथा।
बिना जप्त्वातु गायत्री तत्सर्व निष्फलं भवेत॥

दे० भा० ११.२१.४-५

चाहे किसी मंत्र का साधन किया जाए। उस मंत्र को व्याहृति समेत गायत्री सहित जपना चाहिए।

गायत्री मंत्र माहात्म्य-

गायत्री मंत्र की महिमा का वेद, शास्त्र, पुराण सभी वर्णन करते हैं। अथर्ववेद में गायत्री की स्तुति की गयी है, जिसमें उसे आयु प्राण, शक्ति, पशु, कीर्ति, धन और ब्रह्मतेज प्रदान करने वाली कहा गया है-

ॐ स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्।
आयु: प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्।
मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्॥[6]

अधर्ववेद में स्वयं वेद भगवान् ने कहा है- मेरे द्वारा स्तुति की गई, द्विजों को पवित्र करने वाली वेदमाता गायत्री, आयु, प्राण, शक्ति, पशु, कीर्ति, धन एवं ब्रह्मतेज उन्हें प्रदान करें।

गायत्री सुरलोक का कल्पवृक्ष-

सुरलोक में एक ऐसा कल्पवृक्ष है, जिसके नीचे बैठकर जिस वस्तु की जो भी कामना की जाए, वही वस्तु तुरन्त सामने उपस्थित हो जाती है। वह कल्पवृक्ष जिनके पास होगा, वे कितने सुखी और सन्तुष्ट होंगे, इसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है। पृथ्वी पर भी एक ऐसा कल्पवृक्ष है,जिसमें सुरलोक के कल्पवृक्ष की सभी सम्भावनायें छिपी हुई हैं। इसका नाम है-"गायत्री"। गायत्री मत्र को

स्थूल दृष्टि से देखा जाए, तो वह २४ अक्षरों और नौ पदों की शब्द-श्रृंखला मात्र है, परन्तु यदि गम्भीरतापूर्वक अवलोकन किया जाए, तो उसके प्रत्येक पद और अक्षर में ऐसे तत्त्वों का रहस्य छिपा हुआ मिलेगा, जिनके द्वारा कल्पवृक्ष के समान ही समस्त इच्छाओं की पूर्ति हो सकती है।

ॐ, ईश्वर, आस्तिकता ही भारतीय धर्म का मूल है। इससे आगे बढ़कर उसके तीन विभाग होते हैं-भू: भुव: स्व:। भू: का अर्थ है-आत्मज्ञान। भुव: का अर्थ है-कर्मयोग। स्व: का तात्पर्य है-स्थिरता, समाधि। इन तीनों शाखाओं में से प्रत्येक में तीन-तीन शाखाएँ निकलती हैं, उनमें से प्रत्येक के भी अपने-अपने तात्पर्य हैं। तत-जीवन विज्ञान। सवितु-शक्ति सञ्चय। वरेण्यं-श्रेष्ठता। भर्गो-निर्मलता। देवस्य-दिव्य दृष्टि। धीमहि-सद्गुण। धियो-विवेक। यो न: संयम। प्रचोदयात्-सेवा। गायत्री हमारी मनो भूमि में इन्हीं को बोती है। फलस्वरूप जो खेत उगता है, वह कल्पवृक्ष से किसी प्रकार कम नहीं होता।[7]

गायत्री मंत्र तप-

आत्म-कल्याण और आत्मोत्थान के लिये अनेक प्रकार की साधनाओं का आश्रय लिया जाता है। देश,काल और पात्र भेद के कारण ही साधना-मार्ग का निर्णय करने में बहुत कुछ विचार और परिवर्तन करना पड़ता है। 'स्वाध्याय' में चित्त लगाने से सन्मार्ग की ओर रुचि होती है। 'सत्संग' से स्वभाव और संस्कार शुद्ध बनते हैं। 'कीर्तन' से एकाग्रता और तन्मयता की वृद्धि होती है। 'दान-पुण्य' से त्याग और अपरिग्रह की भावना पुष्ट होती है। 'पूजा-उपासना' से आस्तिक भावना और ईश्वर विश्वास की भावना उत्पन्न होती है। इस प्रकार भिन्न-भिन्न उद्देश्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगोचर रखकर

ऋषियों ने अनेक प्रकार की साधनाओं का उपदेश दिया है, पर इनमें सर्वोपरि 'तप' की साधना ही है। तप की अग्नि से आत्मा के मल-विक्षेष और पाप-ताप बहुत शीघ्र भस्म हो जाते हैं और आत्मा में एक अपूर्व शक्ति की आविर्भाव होता है। गायत्री-उपासना सर्वश्रेष्ठ तपश्चर्या है। इसके फलस्वरूप साधक को जो दैवी-शक्ति प्राप्त होती है, उससे सच्चा आत्मिक आनन्द प्राप्त करके उच्च से उच्च भौतिक और आध्यात्मिक लक्ष्य को वह प्राप्त कर सकता है।

मानव जीवन में गायत्री महामंत्र का अवदान-

गायत्री मंत्र सर्व व्यापक होने से सर्व शक्तिमान है। गायत्री उपासना प्रत्यक्ष तपश्चर्या है, इससे तुरंत आत्मबल बढ़ता है। गायत्री साधना एक बहुमूल्य दिव्य संपत्ति है। इस संपत्ति को इकट्ठी करके साधक उसके बदले में सांसारिक सुख एवं आत्मिक आनंद भली प्रकार प्राप्त कर सकता है। गायत्री मंत्र से आत्मिक कायाकल्प हो जाता है। इस महामंत्र की उपासना आरंभ करते ही साधक को ऐसा प्रतीत होता है कि मेरे आंतरिक क्षेत्र में एक नई हलचल एवं बदलाव आरंभ हो गयी है। सतोगुणी तत्त्वों की अभिवृद्धि होने से दुर्गुण, कुविचार, दु:स्वभाव एवं दुर्भाव घटने आरंभ हो जाते हैं और संयम,नम्रता, पवित्रता,उत्साह,स्फूर्ति श्रमशीलता, मधुस्ता, ईमानदारी,सत्यनिष्ठा, उदारता, प्रेम, संतोष, शांति, सेवाभाव, आत्मीयता आदि सद्गुणों की मात्रा दिन-दिन बड़ी तेजी से बढ़ती जाती हैं। फलस्वरूप लोग उसके स्वभाव एवं आचरण से संतुष्ट होकर बदले में प्रशंसा, कृतज्ञता, श्रद्धा एवं सम्मान के भाव रखते हैं और समय-समय पर उसकी अनेक प्रकार से सहायता करते रहते हैं। इसके अतिरिक्त सद्गुण स्वयं इतने मधुर होते हैं कि जिस हृदय में इनका निवास होता है,वहाँ आत्म-संतोष की परम शांतिदायक शीतल निर्रिणी सदा बहती है। ऐसे लोग सदा स्वर्गीय सुख का आस्वादन करते हैं।

गायत्री को भूलोक की कामधेनु कहा गया है, क्योंकि यह आत्मा की समस्त क्षुधा,पिपासाएँ शांत करती है। 'गायत्री' को 'सुधा' कहा गया है-क्योंकि जन्म-मृत्यु के चक्र से छुड़ाकर सच्चा अमृत प्रदान करने की शक्ति से वह परिपूर्ण है। गायत्री को पारसमणि कहा गया है; क्योंकि उसके स्पर्श से लोहे के समान कलुषित अंत:करणों का शुद्ध स्वर्ण जैसा महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो जाता है। गायत्री को कल्पवृक्ष कहा गया है- क्योंकि इसकी छाया में बैठकर मनुष्य उन सब कामनाओं को पूर्ण कर सकता है जो उसके लिए उचित एवं आवश्यक हैं।

श्रद्धापूर्वक गायत्री माता का आँचल पकड़ने का परिणाम सदा कल्याणकारक ही होता है। गायत्री को ब्रह्मास्त्र कहा गया है; क्योंकि कभी किसी की गायत्री साधना निष्फल नहीं जाती।

इसका प्रयोग कभी भी व्यर्थ नहीं होता। गायत्री मंत्र की उपासना से मनुष्य की अनेक कठिनाइयाँ हल होती हैं। ऐसे अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं कि जो लोग आरंभ में दरिद्रता का अभावग्रस्त जीवन व्यतीत करते थे उन्होंने गायत्री उपासना की और अर्थ संकट को पार करके ऐसी स्थिति पर पहुँच गए कि जिनको देखकर अनेकों को ईषर्या होने लगी। जिनकी बुद्धि बड़ी ही मंद थी वे चतुर, तीक्ष्ण और विद्वान बने हैं।

गायत्री मंत्र में शब्दों का गुंथन इस वैज्ञानिक रीति से हुआ है कि इसके जप से साधक की अंतर्चेतना में प्रसुप्त सूक्ष्म संस्थानों पर आघात होता है। प्रसुप्ति जाग्रति में बदल जाती है और चेतना का अविरल प्रवाह अस्तित्व में प्रवाहित होने लगता है। शक्ति स्रोतों के भंडार खुल जाते हैं। मंत्र के 24 अक्षरों में निहित तत्वज्ञान के चिंतन मनन द्वारा ज्ञान के उस स्रोत तक पहुंचा जा सकता है जिसे आत्मज्ञान ब्रह्मज्ञान कहते हैं।

इस मंत्र को इतना गौरवशाली स्थान इसलिए मिला हुआ है कि इसमें किसी वस्तु की कामना नहीं की गयी है. इसमें बुद्धि को निर्मल पवित्र बनाने वाले सन्मार्ग पर प्रेरित करने की प्रार्थना की गयी है और वो भी केवल अपने लिए नहीं बल्कि समष्टि के लिए, "यो नः" अर्थात हम सब की।

एक रिसर्च मैं गायत्री मंत्र के चौका देने वाले प्रभाव देखे गए है एम्स के एक रिसर्च के द्वारा सामने आया है और आपको जानकर हैरानी होगी की एम्स एक डॉक्टर और आई आई टी के एक वैज्ञानिक ने कई सालो तक रिसर्च करने पर ये दावा किया है की हर रोज कुछ समय तक गायत्री मंत्र जप से बौद्धिक क्षमता का विकास किया जा सकता है यानि अपने दिमाग की शक्ति को बढ़ाया जा सकता है।[8]

निष्कर्ष: गायत्री मन्त्र के चौबीस अक्षर 24 अक्षर चौबीस शक्तियों-सिद्धियों के प्रतीक हैं। वैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक दोनों ही पक्षों से यह मानव जीवन पर अत्यधिक प्रभाव डालता है। वैज्ञानिक अनुसंधान के क्षेत्र में यह घोषित किया गया है कि इस मंत्र के जाप से मनुष्य की बौधिक क्षमता के साथ-साथ रचनात्मक कुशलता का भी विकास होता है। मानसिक तनाव समाप्त, हृदय रोग निवार्ण, मन की शांति, स्थिरता, मस्तिष्क की तन्मात्राओं का विकास संभव है। इससे चेहरे की कांति बढ़ती है और शरीर निरोगी बनता है। आध्यात्मिक स्तर पर इस मंत्र के नित्य जाप से मनुष्य अपने जीवन के मार्ग को प्रशस्त कर प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति को प्राप्त कर सकता है। गायत्री मंत्र के जाप से मनुष्य जीवन से नकारात्मक शक्तियाँ दूर हो जाती है। गायत्री मन्त्र में चौबीस अक्षर होते हैं, यह 24 अक्षर चौबीस शक्तियों-सिद्धियों के प्रतीक हैं। इसी कारण ऋषियों ने गायत्री मन्त्र को सभी प्रकार की मनोकामना को पूर्ण करने वाला बताया है। मनुष्य सन्मार्ग की ओर प्रेरित होकर धर्म और सेवा जैसे कार्य करने लगता है। गायत्री मंत्र के नियमित जाप से सिद्धियां प्राप्त की जा सकती हैं। जप से कई तरह की व्याधियों से राहत मिलती है।

---

[1] काव्यादर्श, महाकवि दण्डी, 1.4

[2] मंत्र रहस्य, डा. नारायणदत्त श्रीमाली, पृ. 95

[3] गायत्री की 24 शक्तिधाराएँ, आचार्य श्रीराम शर्मा, पृ. 24

[4] http://literature.awgp.org/book/gayatri_mantra_ka_tatvagyan/v1.1

[5] यजु. ३६.३

[6] अथर्ववेद, १९/७१/१

[7] गायत्री महाविज्ञान, आचार्य श्रीराम शर्मा भाग-1, पृ. 57

[8] Written By Zee News Desk, 27 oct. 2018.

अर्वाचीन-संस्कृतसाहित्येषु सामाजिकी दृष्टिः

विद्वान् मञ्जेश एम्
शोधच्छात्रः, वेदान्त विभागः,
कर्नाटक संस्कृतविश्वविद्यालयः चामराजपेटे बेङ्गलूरु-५६००१८

१९ शताब्द्याः उत्तरार्धात् आरभ्य आधुनिकसंस्कृतसाहित्यं सामाजिकपरिवर्तनस्य सुधारणस्य च विषये तीक्ष्णजागरूकतां प्रदर्शितवत्। अस्मिन् साहित्ये जातिवादः, अस्पृश्यतावादः, स्त्रियः स्थितिः, बाल्यविवाहः, वरदक्षिणव्यवस्था, दारिद्र्यम्, अन्धविश्वासेत्यादयः विविधाः सामाजिकाः विषयाः प्रकाशिताः सन्ति। एतासां कृतीनां लेखकाः न केवलं दुष्टप्रथानामेतेषाम् आलोचनाम् अकुर्वन्, अपि तु उत्तमस्य न्यायपूर्णस्य च समाजस्य कल्पनाम् अकुर्वन्।

केचन प्रमुखाः सामाजिकाः विषयाः तेषां चित्रणं च-

१. **जातिवादः अस्पृश्यता च-** जातिवादः, जातिभेदः च भारतीयसमाजस्य पुरातनः रोगः वर्तते। अनेके आधुनिकसंस्कृतलेखकाः अस्य विषयस्य प्रकाशनं कृतवन्तः। जातिव्यवस्थायाः हानेः च प्रभावम् अप्रकाशयन्। शिवराममहादेवपरञ्जपेः "अछूत" इत्यस्मिन् उपन्यासे एकस्य अस्पृश्यबालकस्य शिक्षा एवं सामाजिकस्वीकारविषये संघर्षस्य चित्रणं कृतम् अस्ति। अस्मिन् ग्रन्थे भारतीयसमाजे वर्तमानायाः अस्पृश्यतायाः, जातिभेदस्य च समस्याः प्रकाशिताः सन्ति। अनेन पुस्तकमाध्यमेन पराञ्जपेवर्यः सामाजिकसुधारणस्य आवश्यकतां प्रादर्शयत्।" अछूत " इति प्रेरणादायकम् आख्यानं, यत् पाठकान् सामाजिकन्यायस्य समानतायाः च कृते प्रेरयति। पाठकानां मध्ये सामाजिकजागरूकतां वर्धयितुं एतत् पुस्तकं सहकरोति। इत्थमेव रामनाथरायस्य "मुक्तिः" इति नाटकं जातिवादस्य अस्पृश्यतायाः च विरुद्धं सशक्तं स्वरं उत्थापयति इत्यपि एकः अंशः। अस्मिन् ग्रन्थे

स्वातन्त्र्यसङ्घर्षकालस्य सामाजिक-राजनैतिकपरिस्थितिः सजीवरूपेण चित्रिता अस्ति।

२. **स्त्रियः स्थितिः-** रामकृष्णकृष्णमाचार्यस्य "स्त्रीधर्म" इति ग्रन्थः अतीव महत्त्वपूर्णः उदात्तश्च वर्तते। निबन्धेस्मिन् विशेषतया महिलानां शिक्षायाः, अधिकारस्य, स्वतन्त्रतायाः च महत्त्वे बलं दत्तम् अस्ति। किञ्च स्त्रियः धर्माः, तासां कृतिः, समाजे तासां स्थानं च प्रकाशितम्। ग्रन्तेस्मिन् दर्शितं यत् समाजे उच्चनीचस्य भावः जनानां जीवने कथं प्रभावं अजनयत् इति। केचन विशेषांशाः इत्थं वर्तन्ते-

- **धार्मिकदृष्टिः-** अस्मिन् ग्रन्थे धार्मिकदृष्ट्या स्त्रीधर्मस्य आचारस्य च विस्तरेण वर्णनं कृतमस्ति। स्त्रीणां धर्म-उपवासानाम्, उत्सवानां च विशेषमहत्त्वं व्याख्यातम् अस्ति।
- **सामाजिकी भूमिका -** "स्त्रीधर्म" इत्यस्मिन् महिलानां समाजे दायित्वस्य च विश्लेषणं कृतमस्ति। स्त्रियः पारिवारिक-सामाजिककर्तव्येषु विशेषबलं दत्तमस्ति।
- **नैतिकशिक्षा-** ग्रन्थेस्मिन् महिलानां नैतिकशिक्षायाः नैतिक-आचरणस्य च प्रकाशनं कृतम्। आदर्शस्त्रीगुणाः, तस्याः पालनविधयः च वर्णिताः सन्ति।
- **शिक्षायाः महत्त्वम्-** "स्त्रीधर्म" इत्यत्र महिलाशिक्षायाः महत्त्वं रेखाङ्कितम्। अस्मिन् महिलानां शिक्षणस्य, स्वावलम्बनस्य च आवश्यकतायाः विषये निरूपितम्।
- **आध्यात्मिकविकासः-** अस्मिन् ग्रन्थे स्त्रियः आध्यात्मिकविकासः, आत्मनः विषये च मार्गदर्शनं प्राप्यते। ध्यान-योग-भक्ति-आत्मशुद्धि-विधयः वर्णिताः।
- **परिवारः समाजश्च-** परिवारस्य समाजस्य च विषये महिलानां कर्तव्यानि कानि इत्यपि पुस्तकेस्मिन् विस्तरेण व्याख्यातम्। अस्मिन् स्त्रियः पारिवारिकसम्बन्धेषु, मातापितृषु, पतिषु, बालकेषु च कर्तव्यदृष्टौ विशेषध्यानं दत्तमस्ति। संक्षेपेण

रामकृष्णकृष्णमाचार्यस्य "स्त्रीधर्म" इति पुस्तकं स्त्रियः धर्मं, कर्तव्यतां, सामाजिकभूमिकां च अवगन्तुं महत्त्वपूर्णः ग्रन्थः अस्ति। यः न केवलं धार्मिकदृष्ट्या अपि तु सामाजिक-नैतिकदृष्ट्या अपि अत्यन्तं महत्त्वपूर्णः अस्ति।

किञ्च चन्द्रगुप्तः "मृनालिनी" इत्यस्मिन् उपन्यासे विधवायाः सामाजिककलङ्कं संघर्षं च अप्रकाशयत्।

३. **बालविवाहः-** रायकृष्णदामोदरभट्टस्य "मायावती" इत्यस्मिन् उपन्यासे बाल्यविवाहस्य दुष्टतां, तस्य सामाजिक-मनोवैज्ञानिकपरिणामानां चित्रणं च कृतमस्ति। कृष्णलालशर्मणः "अन्धकार" इति नाटकविशेषः बालविवाहविरुद्धं मार्मिकाह्वानं करोतीत्यापदयति।

४. **वरदक्षिणव्यवस्था-** जगदीशशरण उपाध्यायस्य "गृहस्थी" इत्यस्मिन् उपन्यासे वरदक्षिणव्यवस्थायाः दुष्टाभ्यासस्य तस्य विनाशकारी परिणामानां च प्रकाशनं कृतमस्ति। "कन्यादानम्" इत्यस्मिन् नाटके रामनाथशास्त्रिवर्यः वरदक्षिणव्यवस्थाविरुद्धं समाजसुधारणसन्देशानेव दत्तवन्तः।

५. **सामाजिकसुधारणस्य प्रस्थापनम्-** आधुनिकलेखकाः विशेषतः महिलानां शिक्षां सामाजिकपरिवर्तनस्य महत्त्वपूर्णं साधनं मन्यन्ते। ते जातिवाद-अस्पृश्यतावादादीनां प्रथानां उन्मूलनं, स्त्री-अधिकार-स्वतन्त्रतायाः रक्षणं, बाल्य-विवाह-वरदक्षिणादि दुष्टप्रथानां निषेधं, दारिद्र्य-अन्धविश्वासादीनां विरुद्धं युद्धं च अकुर्वन्। आधुनिकसंस्कृतसाहित्ये समाजाय गहनजागरूकता, प्रतिबद्धता च प्रदर्शिता वर्तते। अस्मिन् जातिः, लिङ्गविशेषः, वर्गः, दरिद्रता, भ्रष्टाचारः, पर्यावरणस्य चिन्ता इत्यादीनां सामाजिकविषयाणां विस्तृतपरिधिः सम्बोधिता अस्ति।

आधुनिकसाहित्ये सामाजिकदृष्टिः महत्त्वपूर्णां भूमिकां निर्वहति। एतत् साहित्यं समाजस्य विविधपक्षं प्रकाशयति। सामाजिकपरिवर्तनं च प्रेरयति। अत्र केचन प्रमुखाः बिन्दवः सन्ति, ये

आधुनिकसाहित्ये सामाजिकदृष्टिं परिभाषयन्ति-

- यथार्थस्य चित्रणम्- आधुनिकसाहित्ये यथार्थवादस्य प्रभावः स्पष्टतया दृश्यते। लेखकाः समाजस्य समस्याः, विडम्बनाः च यथार्थरूपेण प्रस्तुवन्ति, येन पाठकाः एतासां समस्यानां विषये अवगताः स्युः। तेन समाजः अपि प्रवृद्धो भवेत्।
- सामाजिकविषमता- जाति-वर्ग-लिङ्ग-आर्थिक-विषमता आधुनिकसाहित्यस्य प्रमुखः विषयः अस्ति। लेखकाः एतान् असमानतांशान् व्याख्यातवन्तः, तेषां विरुद्धं स्वरं च उत्थापितवन्तः।
- प्रगतिशीलविचारधारा- आधुनिकसाहित्ये प्रगतिशीलसुधारणवादी विचारधारा प्रवर्धिता भवति। लेखकाः समाजे परिवर्तनस्य विकासस्य च आवश्यकतायाः विशेष द्यानं दत्त्वा पुरातनरूढिवादं भङ्गयितुं प्रयतन्ते।
- व्यक्तिगत-सामूहिक-सङ्घर्षाः- साहित्ये व्यक्ति-समुदाय-सङ्घर्षेभ्यः प्राधान्यं दीयते। एते सङ्घर्षाः सामाजिक-अन्यायस्य, उत्पीडनस्य, शोषणस्य च विरुद्धाः सन्ति ।एते पाठकान् चिन्तयितुमपि बाध्यन्ते।
- मानवाधिकारः स्वतन्त्रता च- आधुनिकसाहित्यं मानवाधिकारस्य व्यक्तिगतस्वतन्त्रतायाः च निर्वहणं करोति । एताः साहित्यकृतयः समाजस्य प्रत्येकस्य अधिकारिणः स्वतन्त्रतायाः च रक्षणाय मञ्चं प्रददति ।
- सामाजिक जागरूकता परिवर्तनं च- समाजे जागरूकतां प्रसारयितुं सकारात्मकपरिवर्तनं च आनेतुं साहित्यप्राकारः सशक्तः माध्यमविशेषः। लेखकाः स्वलेखानां माध्यमेन सामाजिकविषयेषु चर्चां कुर्वन्ति, एवं सक्रियरूपेण चिन्तयितुं कार्यं कर्तुं च प्रेरयन्ति।
- सांस्कृतिकवैविध्यम्- आधुनिकसाहित्यं भिन्नसंस्कृतीनां, परम्पराणां, विश्वासानां च सम्माननं करोति।

• प्रौद्योगिकी वैश्वीकरणं च- वर्तमानकाले प्राद्योगिक्याः वैश्वीकरणस्य च प्रभावः साहित्ये अपि दृश्यते। लेखकाः एतेषां परिवर्तनानां सामाजिक-सांस्कृतिक-नैतिकनिमित्तानां विश्लेषणं कुर्वन्ति। आधुनिकसाहित्यं सामाजिकदृष्ट्या समाजाय दर्पणं प्रददाति। यस्मिन् समाजः स्वस्य वास्तविकतां दृष्ट्वा सुधारणाय यत्नं करोति।

आधुनिक-संस्कृतग्रन्थेषु वर्तमानाः अन्येऽपि प्रमुखाः सामाजिकाः विषयाः

• लैङ्गिक-असमानता- आधुनिकसंस्कृतसाहित्ये लैङ्गिकासमानतायाः महिलाधिकारस्य च विषयः अपि महत्त्वपूर्णः अस्ति।

• दरिद्रता सामाजिकन्यायश्च- दरिद्रता, क्षुधा, सामाजिकविषमता इत्यादयः विषयाः अपि अनेकेषु कार्येषु सम्बोधिताः सन्ति।

• भ्रष्टाचारः- भारतीयसमाजे वर्तमानः भ्रष्टाचारः अतीव घोरः, समस्यास्पदः च अस्ति। अनेके आधुनिकसंस्कृतलेखकाः अस्य विषये निन्दां, व्यङ्ग्यालोचनां च कुर्वन्ति।

• पर्यावरणचिन्ता- आधुनिकसंस्कृतसाहित्ये पर्यावरणक्षयः, जलवायुपरिवर्तनम् इत्यादयः विषयाः अपि अधिकाधिकं महत्त्वपूर्णाः भवन्ति।

आधुनिकसंस्कृतलेखकाः सामाजिकपरिवरिवर्तनं मनसि निधाय प्रेरणास्पदं लेखं साहित्यद्वारा प्रस्तुवन्ति। ते सामाजिक-अन्यायस्य विषये जागरूकताम् आनेतुं, महत्त्वपूर्णविषयेषु विचारं कर्तुं, अधिकं न्यायपूर्णसमानसमाजं निर्मातुं, स्वस्थसुसंस्कृतसुभद्रव्यक्तीः निर्मातुं, तान् प्रेरयितुं च प्रयतन्ते।

आधुनिकसंस्कृतग्रन्थेषु सामाजिकदृष्टिकोणस्य केचन उदाहरणानि-

• रामधारीसिंहः "दिनकर" इत्यस्मिन् ग्रन्थे उर्वशी

अस्पृश्यतायाः दोषान्, जातिवादान् च व्यङ्ग्यं करोति।

- महादेविवर्मा इत्यस्याः "नीरजा" इत्यस्मिन् पुस्तके नारीजीवनस्य सङ्घर्षाः, दुःखानि च चित्रितानि सन्ति।
- शिवानन्दस्य "शिवात्व" इत्यस्मिन् उपन्यासे दरिद्रतायाः सामाजिकविषमतायाश्च विषयाः सुष्टु प्रकाशिताः सन्ति।
- रामकृष्णदासस्य कौटिल्य इत्याख्ये नाटके भ्रष्टाचारस्य राजनैतिकषड्यंत्रस्य च व्यङ्ग्यविशेषाः अतीव रम्यया शैल्या निरूपिताः वर्तन्ते।
- अक्षय मुकुन्दस्य काव्येषु प्रकृति एवं पर्यावरण विषये चिन्ता प्रकटिता अस्ति।

आधुनिकसंस्कृतसाहित्ये सामाजिकदृष्टिकोणः विविधः, बहु आयामी च इति ज्ञातव्यम् । विभिन्नाः लेखकाः सामाजिकविषयान् भिन्नभिन्नरूपेण पश्यन्तः लिखन्तश्च स्वकीयां प्रतिक्रियां च दत्तवन्तः ।

निगमनम्-

आधुनिकसंस्कृतग्रन्थेषु सामाजिकदृष्टिकोणस्य अध्ययनम् अतीव महत्त्वपूर्णम् अस्ति। एतेषां कृतीनां माध्यमेन वयं समकालीनसमाजस्य परम्पराणां, रीतिनां, सामाजिकसंरचनानां च गहनावबोधं प्राप्नुमः। आधुनिकयुगे संस्कृतसाहित्ये जातिभेदः, लैङ्गिक-असमानता, नैतिकता इत्यादिषु सामाजिकविषयेषु विशेषध्यानं दत्तमस्ति। एताः कृतयः समाजाय नूतन मार्गं दातुं प्रयतन्ते। यत्र प्राचीनपरम्पराणां आधुनिकविचाराणाञ्च सङ्गमः भवति। यथा- महाकविकालिदासस्य ग्रन्थेषु प्रकृतिसमाजयोः सामञ्जस्यस्य च वर्णनं प्राप्तुं शक्नुमः। भासस्य नाटकीयग्रन्थेषु समाजस्य नैतिकता, मानवीयमूल्यानि च प्रकाशितानि सन्ति। आधुनिककालस्य संस्कृतलेखकाः अपि स्वलेखनेषु समाजसुधारणाय प्राधान्यं दत्तवन्तः। एतेषु ग्रन्थेषु वर्णिताः सामाजिकविषयाः

प्रासङ्गिकताविषयाः च अद्यत्वेऽपि वर्तन्ते। येन स्पष्टं भवति यत् संस्कृतसाहित्यं न केवलं प्राचीनकाले अपि तु आधुनिकयुगेऽपि समाजाय दिग्दर्शयितुं समर्थम् अस्तीति। एवम् आधुनिकसंस्कृतसाहित्यं समाजं प्रति गहनप्रतिबद्धतां प्रदर्शयत्, सामाजिकपरिवर्तनस्य सुधारणस्य च प्रबलं साधनम् अभवत्। एतत् सामाजिकविषयाणां विस्तृतपरिधिं सम्बोधयति। सामाजिकदोषाणां विषये प्रकाशं प्रसारितवत्। जनान् जागरूकान् कुर्वत्, उत्तमसमाजस्य निर्माणार्थं च प्रेरितवत्। संक्षेपेण आधुनिकसंस्कृतग्रन्थेषु सामाजिकदृष्टिकोणस्य अध्ययनं महत्त्वपूर्णं शोधक्षेत्रम् अस्ति इति वर्णितम्। यत् अस्मान् सामाजिकसुधारणं, परिवर्तनं प्रति च प्रेरयति। अयं अध्ययनविशेषः अस्मान् जागरूकान् सशक्तान् च कर्तुं साहाय्यं आचरति। एवम् आधुनिकसंस्कृतसाहित्यं प्राचीनज्ञानस्य आधुनिकदृष्टिकोणानां च संयोजनेन कथं समृद्धः न्यायपूर्णः च समाजः निर्मातुं शक्यः इति ज्ञापयति। उपर्युक्तं सर्वं आधुनिकसंस्कृतसाहित्यस्य केषाञ्चन प्रमुखसामाजिकविषयाणां चित्रणस्य च संक्षिप्तवर्णनम् एव। इतोपि समुद्रवत् विशालः गहनश्च विचारः वर्तते। सः विशेषाध्ययनत्वेन द्रष्टव्यः। इत्थम् आधुनिक-संस्कृतकृतिषु सामाजिकदृष्ट्यवच्छेदेन विचारः इति अयम् अंशः प्रतुतः।

सन्दर्भाः

शिवराममहादेवपरञ्जपेः अच्छूत ।
रामनाथरायस्य मुक्तिः ।
रामकृष्णकृष्णमाचार्यस्य स्त्रीधर्म ।
विश्वनाथशास्त्री चन्द्रगुप्तस्य मृनालिनी ।
रायकृष्णदामोदरभट्टस्य मायावती ।
कृष्णलालशर्मणः अन्धकारः।
जगदीशशरण उपाध्यायस्य गृहस्थी।
रामनाथशास्त्रिणः कन्यादानम्।
रामधारीसिंहस्य दिनकर।
महादेवी वर्मा इत्यस्याः नीरजा।
शिवानन्दस्य शिवात्वम्।

कवेः रवीन्द्रकुमारपण्डामहोदयस्य परिचयः (प्रो. रवीन्द्रकुमारपण्डामहोदयस्य व्यक्तित्वं कृतित्वं च श्रीसयाजिगौरवमहाकाव्ये समाजिकदृष्टिः)

पण्ड्या हार्दिक: विजयकुमार:
शोधच्छात्र:, साहित्यविभाग:, श्रीसोमनाथसंस्कृतविश्वविद्यालय:,
वेरावलम्, गुजरातम्

कविपरिचयः

"अपारे काव्यसंसारे कविरेक: प्रजापति:" इत्यभियुक्तोक्त्यनुसारं कविरेव लोके सामान्यत: परिदृश्यमानमपि वस्तुजातं स्वकाव्ये विशेषत उपवर्ण्य सरसं मधुरञ्च विदधन्तस्मिन्जनानां मनोरञ्जनविषयताञ्च सम्पादयति। अस्माकं वैदिकसाहित्ये तादृशा: कवय: नैका: प्रादुर्बभुवु:, यै: क्रमश: साहित्यवाङ्मयमिदं नैकधा परिष्कृतं सदद्यावधिकं निष्कण्टकं काव्यपन्थानं निर्मापयामासु:, यत्रेदानीमपि बहव: विद्वास: परिचलन्तोऽतिशयम्मोमुद्यन्ते। कालिदासप्रभृतयश्च नैके कवय: काव्यमहोदधावेव निमज्जन्त: निरतिशयं परमानन्दं काव्यमार्गेणैवोभयत्र संप्रापु:, निर्मापयामासुश्च स्वकीयं निष्कलङ्कं निर्जरसं यशोगात्रम्। एतादृशाश्च कवय: मन:प्रणिधानपुरस्सरं महता परिश्रमेण काव्यसंरचनां विदधति।

विद्वानेव विजानाति विद्वज्जनपरिश्रमम्
न हि वन्ध्या विजानाति गुर्वीं प्रसववेदनाम्॥[1]

[1] कुवलयानन्द:॥ प्रतिवस्तूमालङ्कार:.श्लो.५०॥

इतिकथनानुसारं कविवरेण्यै: काव्यसंरचने विहित: महान्परिश्रम: नैव सामान्यतया जनै: परिज्ञातुं शक्यते। तादृशाश्च ते कवयोऽस्माकं वैदिकसाहित्योत्थाने सुरभारतीसम्पोषणे, विविधकाव्यकलापरिज्ञाने, सभ्यतासंस्कृतिसंरक्षणे च महद्योगदानं विरचयन्ति। महानयं दु:खस्य विषयो यत्- इदानीं जनानां संस्कृतभाषाया अध्ययने ज्ञाने च प्रवृत्ति: विरला दृश्यते, तया दैव्या वाण्या महाकाव्यनिर्मापणे च ततोऽपि विरलतरा प्रवृत्ति:। केषाञ्चिदेव महाभागानां एतादृशे दुष्करे गौरवे च कार्ये प्रवृत्ति: परिलक्ष्यते, साफल्यञ्च तेष्वपि केषाञ्चनैव।एतादृश्यामप्यस्यां स्थितौ साहित्यवाङ्मये कृतभूरिपरिश्रम: न्यायाद्यन्यविविधशास्त्रेषु च संलब्धपाण्डित्यो विद्वान् रवीन्द्रपण्डामहाभाग अत्युत्कृष्टां काव्यसंरचनां विदधौ। अयं कविवरेण्यस्तादृशस्य महाराजसयाजिरावस्तृतीयस्य वरिष्ठं चरित्रचित्रणं विधित्सु: श्रीसयाजिगौरवाख्यं महाकाव्यं संरचयामास, यस्य जीवनपथावलोकनेन जन: स्वजीवनोपयोगिनीं विविधां शिक्षां संप्राप्नोति।

कवेः शैक्षिणिकी योग्यता-

संस्कृतसाहित्ये लब्धप्रतिष्ठ: अयं पण्डामहाभाग: त्रिष्ट्यधिकैकोनविंशतितमे(१९६३) ईसवीयहायने जनवरीमासस्य दशमे दिनाङ्के भारतदेशस्यौडिशाराज्ये जजपुरप्रदेशे मिर्जापुराख्ये नगरे जनिं लेभे। तदनु विद्यालयेषु कालक्रमेण लब्धप्रारम्भिकमाध्यमिकशिक्ष: चतुरशीत्यधिकैकोनविंशतितमे(१९८४) ईसवीये वर्षे

देहलीस्थराष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानत: (B.A.)शास्त्रिकक्षां समापयामास। तदनु ओडिशाराज्ये जगन्नाथपुर्यां श्रीजगन्नाथसंस्कृतविश्वविद्यालये विशिष्टश्रेण्यां आचार्यकक्षां(M.A) समापयिष्ट। एतावताऽपि अस्य कविवरस्य पठनोत्सुकता, अधिजिगमिषा च न शान्तासीत्, तदा महोदयोऽयं तस्मिन्जगन्नाथसंस्कृतविश्वविद्यालय एव षडशीत्यधिकैकोनविंशे वर्षे न्यायशास्त्रे विशिष्टाचार्यं(M.Phil) कृतवान्। एतदनु पण्डितोऽयं आनन्दबोधयतीतिविषये श्रीमहाराजसयाजिरारावबडौदाविश्वविद्यालयत: त्रिनवत्यधिकैकोनविंशतितमे(१९९३) हायने शोधकार्यं(Ph.D.) समापयत्। एवमेव जर्मनीदेशे एम्.एस.वडौदाविश्वविद्यालये एव चतुर्नवत्यधिके एकोनविंशे वर्षे सर्टिफिकेटकोर्स (Certificate Course) कृतवान्। तथा नवदेहल्यां सप्तनवत्युत्तरैकोनविंशे हायने प्राकृतभाषा एवं साहित्यमित्यस्मिन्विषये प्रारम्भिकज्ञानं भारतविद्याया: वि.एलसंस्थायां {B. L. (Bhogilal leherchand) Institute of Indology} संप्राप। एवं प्रकारेणाचार्योऽयं बहुषु विषयेषु प्रावीण्यं लेभे, संप्राप च देशविदेशेषु पर्यटन्शैक्षिकानुभवञ्च। समग्रतो निगद्यमाने कविरयं परिश्रमस्य दृष्टान्त एक:, विद्योपासक:, ज्ञानमूर्तिश्च। अस्योपाध्यायस्य शैक्षिकानुभव: एकनवत्युत्तरैकोनविंशते(१९९१) रारभ्य सप्तविंशतिवर्षात्मककालस्यास्ति। तत्तद्विषयकशोधानुभवोऽपि तावत्कालीनो वर्तते। वेदान्तशास्त्रे न्यायशास्त्रे अलङ्कारशास्त्रे च विशेषज्ञेन काव्यादिपर्यालोचने, शास्त्रसेवने, छात्रसंशीतिनिवारणे च दत्तचित्तेनानेनैवं प्रकारेण स्वकीयं जीवनमध्ययनाध्यापनत: कदापि पराङ्मुखं नाकारि।

रचनात्मकं कार्यम्

डॉ. रवीन्द्रपण्डामहाभाग: रचनात्मककार्येष्वतिप्रवीण आसीत्। स्वजीवने अनेन नानाभाषासु नैके ग्रन्था: विरचिता:, य इदानीं विद्वज्जनै: प्रशंसिता:, समुपयुक्ताश्च वर्तन्ते। तथा हि-षण्णवत्युत्तरैकोनविंशतितमे(१९९६) हायने बडौदानगरस्य लायंस क्लब आंफ लालवागमध्ये वनवल्लीति नाम्ना काव्यसंग्रहमेकं निर्ममौ। तस्मिन्नेव संवत्सरे प्रतिध्वनिरितिनामकमेकं काव्यसंग्रहात्मकं ग्रन्थरत्नं इलाहावादस्योत्कलसाहित्यसमाजत: प्रकाशयामास। एवमेव प्रकारेण नीरवजार:, उर्वी, शतदलम्, चिह्नच्छाया, बालक:, काव्यकैरवम्, काव्यमृततरङ्गिणी, भावभूमिरित्यादय: काव्यसंग्रहात्मका:, मुक्तकाव्यसंग्रहात्मका:, लघुकथासंग्रहात्मकाश्च ग्रन्था: बुधेनानेन व्यरचिषत। तथैव शुभसीतासुधाविन्दुरिति नाम्ना शुभसीताशतकमनेन द्वादशाधिकद्विसहस्रतमे वर्षे वडोदरानगरस्यार्वाचीनसंस्कृतसाहित्यपरिषद: प्रकाशयामास। एवमेव प्रकारेण श्रीमन्दिरम्, कथालतिका, यो मद्भक्त: स मे प्रिय:, ज्वाला तथा जलम्, संलापसरणि:, रवीन्द्रसंस्कृतकथाकञ्ज:, मलालचरितम्, श्रीसयाजिगौरवम्, कृषोदरि:,पद्यबन्ध:, लघुपादपम्, कोरोनाकृतान्तशतकम्, यत्रास्ति ममता तत्रास्ति मे मन इत्येते ग्रन्थाश्च युगकविनानेन व्यरच्यन्त। इदानीमपि अहमादिवासी, थाई-सौन्दर्य-संस्कृति:, श्रीप्रतापचन्द्रचरितम्, श्रीप्रमुखस्वामीचरितमुइत्येतानि काव्यरत्नानि प्रकाशनाधीनानि वर्तन्ते। एवं प्रकारेणाल्पेऽपि जीवने महता परिश्रमेण बहव: संरचना: निरमायि। एतेषां विवरणमधस्तालिकायां सन्दर्शितं वर्तेते। तथा हि-

क्र.सं	पुस्तकनाम	प्रकाशितसंस्था, स्थलञ्च	प्रकाशितवर्ष:
१	वनवल्ली (काव्यसंग्रह:)	लायन्स क्लाब आंफ् लालवाग	१९९६
२	प्रतिध्वनि: (काव्यसंग्रह:)	उत्काल साहित्य समाज	१९९६
३	नीरवजार: (काव्यसंग्रह:)	परममित्र प्रकाशनम्	१९९८
४	उर्वी (काव्यसंग्रह)	परममित्र प्रकाशनम्	१९९८
५	शतदलम्(मुक्तकाव्यसंग्रह:)	परममित्र प्रकाशनम्	२००२
६	चिह्नच्छाया (लघुकथासंग्रह)	अर्वाचीनसंस्कृतसाहित्यपरिषद्	२००५
७	बालक: (काव्यसंग्रह:)	अर्वाचीनसंस्कृतसाहित्यपरिषद्	२००६
८	काव्यकैरवम् (काव्यसंग्रह:)	अर्वाचीनसंस्कृतसाहित्यपरि-षद्	२००७
९	काव्यमृततरङ्गिणी (काव्यसंग्रह:)	अर्वाचीनसंस्कृतसाहित्यपरि-षद्	२००९
१०	भावभूमि: (काव्यसंग्रह:)	अर्वाचीनसंस्कृतसाहित्यपरि-षद्	२०१२
११	शुभसीताशुद्धविन्दु:(शतकम्)	अर्वाचीनसंस्कृतसाहित्यपरि-षद्	२०१२
१२	श्रीमन्दिरम्	संस्कृतभारती(नवदेहली)	२०१२

	(लघुकथासंग्रह:)		
१३	कथालतिका (लघुकथासंग्रह)	अर्वाचीनसंस्कृतसाहित्यपरि-षद्	२०१४
१४	यो मद्भक्त: स मे प्रिय: (बालनाटकानि)	अर्वाचीनसंस्कृतसाहित्यपरि-षद्	२०१२
१५	ज्वाला तथा जलम्	अर्वाचीनसंस्कृतसाहित्यपरि-षद्	२०१४
१६	संलापसरणि:	अर्वाचीनसंस्कृतसाहित्यप-रिषद्	२०११
१७	मोबाइलशतकम्	संस्कृत और संस्कृति की समसामयिकता	२०१५
१८	रविन्द्रसंस्कृतकथा कुञ्ज:	न्यू भारतीय पुस्तक निगम	२०१८
१९	मलालचरितम् (बालकाव्यम्)	अर्वाचीनसंस्कृतसाहित्यप-रिषद्	२०१९
२०	सयाजिगौरवम् (महाकाव्यम्)	गुजरातसंस्कृतसाहित्य-अकादमी	२०१९
२१	कृषोदरि: (लघुकाव्यसंग्रह:)	अर्वाचीनसंस्कृतसाहित्यप-रिषद्	२०२०
२२	पद्यबन्ध: (संस्कृतपत्रिका)	वीणापाणिसंस्कृतपरिषद्	२०२१
२३	लघुपादपम्	प्रतिभासाहित्य अकादमी	२०२१
२४	कोरोनाकृतान्तशतकम्	----	२०२१

२५	यत्रास्ति ममता तत्रास्ति मे मन: (संस्मरणम्)	अर्वाचीनसंस्कृतसाहित्यप-रिषद्	२०२१
२६	अहमादिवासी	प्रकाशनाधीन	प्रकाशनाधीन
२७	थाई-सौन्दर्य-संस्कृति:(पद्यबन्ध)	प्रकाशनाधीन	प्रकाशनाधीन
२८	श्रीप्रतापचन्द्रचरित-म्(महाकाव्यम्)	प्रकाशनाधीन	प्रकाशनाधीन
२९	श्रीप्रमुखस्वामिचरितम्(महाकाव्यम्)	प्रकाशनाधीन	प्रकाशनाधीन

तालिकायामत्र संस्कृतभाषायां संरचिता: ग्रन्था एव संगृहीता: वर्तन्ते। अन्येऽपि आङ्गलभाषायां विरचिता:, आङ्गलभाषायामनूदिताश्च नैके ग्रन्था: वर्तन्ते। तेषामेवं प्रकाशितानां शोधपत्राणाञ्च विवरणमग्रे प्रदर्शयिष्यते।

कवेर्वैशिष्ट्यम्-

कविवरेण्येनानेन विरचितेषु काव्यकथादिग्रन्थेषु सुमधुर: पदविन्यास:, अतिसरला शैली, तत्तच्छास्त्रयुक्ती:,भावगाम्भीर्यम्, गुणालङ्कारादिपरिपूर्णतेत्यादय अनेके काव्योत्कर्षहेतव: समुपबृंहिता भवन्ति। अस्य काव्येषु पात्रसौन्दर्यम्, घटनासौष्ठवम्, स्वाभाविकविषयवर्णनम्, चरित्रानुसारिपात्रचयनम्, रसपरिपाकञ्च नितरां पर्यालोचयाम:। रसराजस्य शृङ्गारस्य, अन्येषाञ्च करुणादिरसानां परिपाको यादृशोऽत्र समुपलभ्यते, नैव तादृश इदानीमाधुनिकग्रन्थेषु समुपलभ्येत। विषयवस्तुप्रतिपादने कवे:

महती विचक्षणता सन्दृश्यते। अस्य महोदयस्य काव्यशैली रमणीयतरा वर्तते, काव्यसौन्दर्यञ्चानिर्वचनीयमेव। तथा हि-

जाता शुष्का हृदयतटिनी प्रेमबन्धो विदीर्णो
ज्ञानश्चक्षुर्विगलितमिव प्रेमतोयं विनैव।
यामा: सर्वा नयननिकटे कान्तिहीना बभूवु:
स्मारं स्मारं कमलनयनां भूमिपालो रुरोद।[1]

इत्यत्र महाराजसयाजिरावस्य पत्नीवियोगव्यथावर्णनं कस्य वा मन: नाकर्षति। एतद्विरचितकाव्यपर्यालोचने "अहो भारो महान् कवे:" "पण्डितकवय: कवय: तानवमन्ता तु केवलं गवय:" इत्यादय उक्तय: एतद्विषयका एवेत्युक्तावपि नैव काचिदत्युक्ति:। संरचनास्वस्य रसालङ्कारोदाहृतय: प्रतिश्लोकं प्राप्तुं शक्यन्ते। कविरयं सामाजिकवादी वर्तत इत्यस्य काव्येषु मानवजाते: कल्याणार्थं समुपदेशावलि:, मानवसभ्यताया: परिचायको विषय:, विश्वबन्धुत्वसंबोधकं ज्ञानञ्च समुपजुगुम्फितं वर्तते। कान्तासम्मिततया जनानां प्रेरणे चैतदीया महती प्रतिभा। कविवर: पण्डामहाभागोऽयं कथावस्तुनियोजने यथा कुशलतामावहति, तथैव वर्णनविस्तारे, सुष्ठु घटनोपन्यासे, भावानामभिव्यञ्जने, भावानुकूलभाषासंयोजने च वैचक्षण्यम्। अस्य काव्यशैलीपरिदर्शनेन पाठकेषु काचनापूर्वा ऊर्जा समुदेति, यया काव्यसन्दर्शने तद्रसपाने चोत्कण्ठा नवविवाहिता स्त्रीव तरुणायते। यथास्य श्रीसयाजिगौरवाख्ये काव्ये मनोहारिरूपेण ऐतिहासिककथावस्तुना सह स्वकीयकल्पनाया एवं यथार्थतायाश्च विशिष्ट: समन्वय:

---

[1] श्रीसयाजिगौरवम्॥१२.२॥

परिदृश्यते। समग्रतो निगद्यमाने एतदीयं काव्यं पात्रचित्रण-कथावस्तुसंयोजन-प्रकृतिचित्रण-सामाजिकदैशिकवैयक्तिकोपकार्युपदेशनिबन्धन-वर्णनविचित्रता-घटनाक्रमोपन्यास-रसालङ्कारालङ्कृति-भाषासौष्ठवादिपरिपूर्णं सत्संस्कृतसाहित्यजिज्ञासूनां भारतीयसंस्कृतिसभ्यताधिजिगमिषावताञ्च कृते कल्पवृक्षायते।

एतादृशगुणगौरवतयैव कविवरेण स्वजीवने बहुधा ससम्मानं पुरस्कारादीनि समधिगतानि। तानि च सविवरणमधस्तालिकायां सन्दर्श्यते-

क्र.सं	पुरस्कारस्य नाम	वर्ष:	आयोजक:
१	कालिदासविषये भाषणस्पर्धायां तृतीयत्वात् कांस्यपदकम्।	१९८३	कालिदास अकादमी (उज्जैन)
२	अखिलभारतीयभाषण स्पर्धायां कांस्यपदकम्	१९८३	शिक्षासंस्कृतमन्त्रालय: (मद्रास:)
३	आचार्यकक्षायां सर्वोत्तमाङ्कप्राप्त्या स्वर्णपदकम्	१९८४	श्रीजगन्नाथ.वि.विद्यालय (पुरी)
४	कथासंग्रहात्मकप्रतिध्वनिग्रन्थमादाय संस्कृतसाहित्यपुरस्कार:	१९९७	उत्तरप्रदेशसंस्कृतसंस्थानम् (लखनउ)
५	अखिलभारतीयसंस्कृत	२००३	देहली-संस्कृत-अकादमी

	श्लोकसमस्यापूर्तिपुरस्कार:		(देहली)
६	अन्तराष्ट्रीयरामकृष्णसंस्कृतपुरस्कार:	२००३	विश्वशिक्षायोग: (कनाडा) (world education)
७	एआईओसी मध्ये सर्वश्रेष्ठशोधप्रदर्शनाद् वी.राघवन्-पुरस्कार:।	२००३	एआईओसी ३१ सत्रम्(पुरी)
८	विश्वसम्मानपदकम्	२००३	अमेरिकी जिवनी (संस्थान)
९	अखिलभारतीयलघुकथापुरस्कार:	२००४	देहली-संस्कृत-अकादमी (देहली)
१०	अखिलभारतीयकालिदासपुरस्कार: सर्वोत्तम-लघुकथासंग्रहात्मकचिह्नच्छायाग्रन्थमादाय	२००८	कलिदास-संस्कृत-अकादमी (उज्जैन)
११	चिह्नच्छायाग्रन्थमादाय पुरस्कार:	२००९	संस्कृत-साहित्य-अकादमी (गुजरात)
१२	अखिलभारतीयलघुनाटकपुरस्कार:	२०१०	देहली-संस्कृत-अकादमी (देहली)
१३	काञ्चीकामकोटीश्वरपिठाधीश्वरजयेन्द्रसरस्वती-स्वामिभि: पुरस्कार:।	२०१०	श्रीजयेन्द्रसरस्वतीस्वामिन: (धर्मार्थन्यास:)
१४	श्रीमन्दिरमिति ग्रन्थमादाय पुरस्कार:।	२०१७	संस्कृत-साहित्य-अकादमी (गुजरात)

१५	मलालाचरितम् ग्रन्थमादाय पुरस्कार:	२०१८	संस्कृत-साहित्य-अकादमी (गुजरात)
१६	श्रीसयाजिगौरवमहा काव्यमादाय पुरस्कार:	२०१९	संस्कृत-साहित्य-अकादमी (गुजरात)

कवेरस्य कार्यकारितां कार्यनिर्वाहणे चौत्कण्ठ्यं पर्यालोच्य विद्वज्जना: सहकर्मकारिणश्च प्रशंसन्ति। सरलस्वभावोऽयं कार्यसंसाधने दत्तावधान: सन् परहित एव स्वकीयं चेत:प्रसादमनुभूयमान उपकृतिनिरत एव सन्दृश्यते। अस्य जीवनपर्यालोचनेनास्मासु स्वजीवने किञ्चिन्मानवसमाजोपकारिकार्यं कर्तव्यमित्येषा भावना समुपजागर्ति, एतादृशी च भावना सामाजिकदैशिकराष्ट्रियोत्थाने च हेतुरिति तु नाविदितं समेषाम्।

बाणस्य वाणीव मनोहरा सा श्रीभारवेरर्थसमा मनोज्ञा

श्रीकालिदासप्रतिभेव भव्या माघस्य शैलीसदृशी शुभाङ्गी॥[1]

इत्येवं कविना चमत्कारितया विहितं यौवनमुद्वहन्त्या: महीभृत: पत्न्या: रूपसौन्दर्यवर्णनं कविकुलगणनामध्ये कालिदासमाघादिष्येव कवेर्नाम योजयति। अतोऽपि स्वकविताकामिनीकटाक्षेण निखिलसुहृदयहृदयोत्कर्षकस्यास्य कवे: माहात्म्यवर्णनं भगवत: दिवाकरस्य पुरत: दीपप्रदर्शनतुल्यमेव। एतदीयानि काव्यानि प्रत्येकमपि कवेरस्य शुभ्रकीर्तिं विस्तारयन्ति। महाकविना मानवजीवनस्य जन्मत: प्रभृति मरणपर्यन्तं सूक्ष्मचित्राङ्कनं तथा विहितं वर्तते, येन जनसाधारण्येन

[1] श्रीसयाजिगौरवम्॥१०.२५॥

समुपकृति: जायमाना परिलक्ष्यते। महीयसो महीभृत: श्रीसयाजिरावस्तृतीयस्य प्रेरणादायकं जीवनं जनसमक्षमवश्यमपि प्रस्तोतव्यमासीत् , तच्च दैव्या वाण्या एवानेन व्यधायीति संस्कृतसाहित्ये भारतीयेतिहासप्रकटने च महद्योगदानमस्य।

पण्डारवीन्द्रमहाभागै: स्वकाव्येषु राज्ञ: स्वरूपम्, तदीयकर्तव्यम्, राज्यस्वरूपम्, अतिथिसत्कार:, पितृमातृसेवा, धर्मस्वरूपमित्यादय: लौकिकव्यवहारविषये तत्र तत्रावकाशेषु सर्वोपयोगितया समुपबृंहितं वर्तते। तथा हि राजा अनुरञ्जनकर्ता, प्रजानां सुखदु:खयो: सहायक:, देशसेवायामेव दत्तचित्तो भवेत्। स: स्वार्थकार्यमपर्यालोच्यैव जनानां परिपालने, सुदृढराज्यव्यवस्थासम्पादने च बद्धादरो भवेत्। कविना श्रीसयाजिरावस्तृतीयस्य राज्ञ: विशिष्टतां परिदर्शयन्नेतेंऽशा: परिबुबोधयियिषिता: वर्तन्ते। एवमेव पूर्वं वडौदानगरस्य दुरवस्थाया: वर्णनम्, तदनु राज्ञ आगमनानन्तरं तेन विहितानां कार्याणां, तत्र जातस्य विकासस्य च वर्णनेन राज्यस्वरूपम्, राजकीयकर्तव्यानि च बोधितानि भवन्ति। एवं प्रकारेण कवेरस्य स्वमहाकाव्येषु, लघुकाव्येषु, कथासंग्रहादिषु, नाटकादिषु च पाठकबोध्यविषयप्रवेशे उदारता विलोक्यते। काव्यपर्यालोचनेनेदं ज्ञायते यत् कविरयमार्यसंस्कृतिं तथा भारतीयाध्यात्मभावनां वर्णाश्रमव्यवस्थाञ्च समर्थयति। प्रकृतिप्रेमी पण्डामहाभागोऽयं स्वकीयसाहित्यचिन्तनप्रणाल्या निजकाव्यकलया च विविधानुचिन्तनपरम्परां धर्मदर्शनादिकञ्च प्रदर्शयति। रामायणमहाभारतरघुवंशादिरिव एतदुल्लिखिता: ग्रन्था: भारतीयसंस्कृते: सम्प्रदायस्य संस्कृतस्य च सार्वभौमतां समुन्नतिताञ्च

निरूपयन्ति।कविनानेन संस्कृतसाहित्ये काव्यकलाया: सुमधुरभाषायाश्च तादृशं महनीयं स्वरूपं प्रदर्शितं वर्तते, येन अस्मदवरजानां जीवनपथावलोकनपूर्वकं स्वसंस्कृतिं संस्कृतवाणीं भारतीयसभ्यतां प्रति चादरभावो वर्धिष्यते। एतादृशकविवरान्पर्यालोच्यैव चिन्तनकाव्यशास्त्रकारो भामह कवे: प्रशंसां विदधन्नेवमाह-

न स शब्दो न तद् वाच्यं न सा विद्या न सा कला।
जायते यन्न काव्याङ्गम्, अहो भारो महान् कवे:॥[1]

तादृशं हि न किञ्चित्वस्तुजातं वर्तते, यत्कवेर्वर्णनविषयो न भवति। कविरेव हि ब्रह्मण: सृष्टिमपि वैपरित्यं नयन्नीरसमपि सरसं सरसमपि नीरसं , साधारणमप्यसाधारणमसाधारणमपि साधारणं, सुखमयमपि दु:खमयं दु:खमयमपि सुखमयं परिकल्पयतीति तात्पर्यम्। एतादृशचमत्कारश्चास्य कवे: काव्यपरिशीलने सामान्यायते। महाकव्युक्तिषु जीवनस्य विविधभागे महतीमुपकृतिं विदधत् ज्ञानोपदेश: मधुरशब्दपरिवेष्टित: सन्नैरन्तर्येण स्यन्दते। जीवनविषयकविचारान्तत्र तत्र समुपजुगुम्फन् कवि उत्तमादर्शप्रदर्शनं विदधाति।

नालम्बत्ते दैष्टिकतां न निषीदति पौरुषे।
शब्दार्थौ सत्कविरिव द्वयं विद्वानपेक्षते ॥[2]

इति माघवचनं दृष्टान्तदार्ष्टान्तिकसम्मिलितमेव कवा अस्मिन् संगच्छते। एतद्ग्रन्थपर्यालोचने हि वयमिदमनुगच्छाम

---

[1] काव्यालङ्कार:॥५.४॥

[2] शिशुपालवधम्॥२.८८॥

यत्कवेरस्य यथा काव्यकथावस्तुप्रतिपादने, अर्थगाम्भीर्यनिदर्शने च महानाग्रहस्तथैव सुमधुरपदविन्यासेऽपि।

महोदयस्यामुष्य न केवलं संस्कृतभाषया काव्यादिनिर्माणे एव दक्षतासीदपि त्वयमाचार्य आङ्लभाषायामपि बहून्ग्रन्थान् विरचयामास। सप्तनवत्यधिकैकोनविंशतितमे संवत्सरे ईस्टर्न बुक लिंकर्स, देहलीत : आनन्दबोधयति: इति ग्रन्थमाङ्गलभाषायां विरचयामास। एवमेव क्रमश: द्विसहस्रतमे एवं नवाधिकद्विसहस्रतमे वर्षे परममित्रप्रकाशन, देहलीत एवं भारतीयकलाप्रकाशन, देहलीत: संस्कृतशास्त्राध्ययन्विषये, आधुनिकसंस्कृतसाहित्यविषये च ग्रन्थद्वयं विरचयामास। एते ग्रन्था: मूलत एवाङ्गलभाषायामनेन कविनैव प्रणीता:, अन्ये च बहवो संस्कृतभाषायां विद्यमाना: कविनानेनाङ्गलभाषायामनूदिताश्च वर्तन्ते। तत्र अष्टानवत्यधिकैकोनविशतितमे हायने परममित्रप्रकाशनत: क्षेमेन्द्रस्य सुवृत्तातिलकमिति ग्रन्थस्य प्रकाशनमकारि। तस्मिन्नेव वर्षे कुमारसंभवस्य पञ्चमसर्गस्य आङ्गलभाषानुवादं कृतवान् भारतीय-कला-प्रकाशनत:। एवमेव एकोननवत्यधिकैकोनविशे प्रथम-द्वितीयभागरूपेणाङ्गलभाषानुवादसहितं मनुस्मृते: प्रकाशनं परममित्रप्रकाशनत एव समकारि। भारतीयकलाप्रकाशनत अष्टानवत्यधिकैकोनविंशे वर्षे नूतनमाध्यमेन इण्डोलॉजी मध्ये शोधं कृतवान्। तत्त एव चतुरधिकद्विसहस्रतमे वर्षे भामिनीविलासग्रन्थस्य संस्कृतभाष्यपुरस्सरं आङ्गलानुवादञ्च कृतवान्। शंकर-अद्वैत-वेदान्ते परमामित्र प्रकाशनत: देहल्यामेकं सर्वेक्षणं विहितम्, अपि चैकवर्षानन्तरं द्विसहस्रतमे वर्षे ईस्ट्रन बुक लिङ्कर्स द्वारा तत्प्रकाशितमपि।द्व्यधिकद्विसहस्रतमे वर्षे वेदान्तदर्शने एकमध्ययन,

भारतीय कला प्रकाशनत: देहल्यां प्रकाशनं ययौ। भारतीयकलाप्रकाशनत एव षडधिकविंशतमे संवत्सरे संस्कृतभाषायां लिखितानि काव्यशतकादीनि आङ्गलभाषायामपि प्रकाशितानि वर्तन्ते। लोकप्रज्ञा प्रो. उमा देशपाण्डे अभिनन्दन खंड, सरस्वती, उड़ीसात: तस्मिन्नेव वर्षे प्रकाशितम्। तथैव भारतीय कला प्रकाशनम्, देहलीत: वैदिक पाठक इति ग्रन्थं प्रकाशयामास। संस्कृतसाहित्ये मार्गा:, दण्डिन: काव्यदर्श: इति ग्रन्थद्वयं भारतीय कला प्रकाशनत: सप्ताधिकतत्तमे हायने प्राकाशयत्। दशाधिकद्विसहस्रतमे वर्षे तस्मादेव क्षेमेन्द्राध्ययनमिति ग्रन्थं प्रकाशितवान्। एकोननवत्यधिकैकोनविंशे वर्षे आधुनिकसंस्कृतसाहित्यस्य महत्त्वपूर्णाः पक्षा इति विषये ग्रन्थं प्रकाशयामास। तथा कविनानेन भारतीयकलाप्रकाशनत एव याज्ञवल्क्यस्मृतिग्रन्थमेकादशाधिकद्विसहस्रतमे हायने आविष्कृतवान्। तस्मिन्नेव हायने तथा तदुत्तरवर्षे च क्रमश अर्वाचिनसंकृतसाहित्यपरिषद आधुनिककालस्य संस्कृतगद्यसाहित्यमिति विषये तथा आधुनिककालस्य संस्कृतनाट्यसाहित्यमिति विषये च ग्रन्थं निर्ममौ। तथैव भारतीयकलाप्रकाशनत: 'भारत में हिन्दू धर्म' इति विषये कविनानेन चतुर्दशाधिकद्विसहस्रतमे वर्षे ग्रन्थप्रकाशनञ्चकार। एवं प्रकारेण न्यायवेदान्तादिशास्त्रेष्वसाधारणपाण्डित्यधी: आधुनिकविद्यायाञ्च कृतभूरिपरिश्रम: कवि: स्वजीवने नैकान् ग्रन्थान् प्रकाशयामास, तथेदानीमपि प्रकाशमानश्च वर्तते।एवमेव कविनानेन बहुषु कार्यशालासु, सम्मेलनेषु शोधकार्येषु च जागरुकता प्रदर्शिता वर्तते। तथा हि उपार्धशतकार्यशालादिषु अस्य भागग्रहणं सन्दृश्यते।

१) चतुस्त्रिंशत्तममखिल-भारतीय-प्राच्यसम्मेलनम्, आन्ध्रविश्वविद्यालय:, २०१८. विशाखापत्तनम्, १९८९ प्रस्तुतपत्रम्- "किं निश्रेयसम् अपवर्गेन सममस्ति?"

२) अखिलभारतीयप्राच्यसम्मेलनस्य षट्त्रिंशत्तममधिधिवेशनम्, भण्डारकरप्राच्य-अनुसन्धान-संस्थानम्, पुणे 1993, शोधपत्रप्रस्तुति:, जीवनमुक्ते: न्यायावधारणा।

३) विष्णुपुराणमार्कण्डेयपुराणविषयक-राष्ट्रीय-संगोष्ठी प्राच्यसंस्थानम्, १९९९। एम.एस. विश्वविद्यालय:।

४) संस्कृतशास्त्राणां विशिष्टविशेषतानां विषये राष्ट्रियगोष्ठी। संस्कृति, पाली एवं प्राकृतविभाग:, १९९३, प्रस्तुतपत्रम् न्यायपद्धति:।

५) भागवतपुराणविषये राष्ट्रियगोष्ठी, संस्कृति, पाली एवं प्राकृतविभाग: १९९४। (१९९९)प्रस्तुतपत्रम्- भागवतपुराणे आन्विक्षिकी अवधारणा।

६) संस्कृतरूपकसाहित्ये गुजरातस्य योगदानविषये राष्ट्रियगोष्ठी, १९९९। प्राच्य संस्थान, एम. एस.बडौदा विश्वविद्यालय:, १९९६, प्रस्तुतशोधपत्रम्- संस्कृतरूपकसाहित्ये दुर्गेश्वरपण्डितस्य योगदानम्।

७) हेमचन्द्रस्योपरि राष्ट्रीय संगोष्ठी, उत्तरगुजरात-विश्वविद्यालय:, पाटन, १९९८, १९९९। प्रस्तुतपत्रम्- गौतमः तस्य उत्तराधिकारिणश्च प्रमाणमिमामसायां हेमचन्द्र:।

८) अखिलभारतीयप्राच्यसम्मेलनम्, प्राच्यसंस्थानम्, बड़ौदा, २०१८. १९९८ प्रस्तुतपत्रम्- समकालीनसंस्कृतकाव्यम्।

९) अखिलभारतीयकालिदाससमारोहः, उज्जैन, १९ नवम्बर १९९९, प्रस्तुतशोधपत्रम्- सिंहभूपालस्य उद्धरणप्रकाशे कालिदासस्य अध्ययनम्।

१०) संस्कृतशिक्षणपद्धतिविषये राष्ट्रियकार्यशाला, लोकभाषा प्रचार समिति, पुरी ३१-०३-२००० तः ०६-०४-२००० पर्यन्तम् , प्रस्तुतपत्रम् संस्कृत-उच्चशिक्षायां शिक्षणपद्धतिः।

११) एकविंशतितमशताब्द्यां संस्कृतस्य प्रासंगिकता इति विषये संगोष्ठी, एम. एस.विश्वविद्यालये, १९८६, बडौदा, दिनांक ३०-०३-२००० प्रस्तुतपत्रम्- न्यायशास्त्रस्य प्रासंगिकता शताब्दी।

१२) आधुनिकसंस्कृतसाहित्यविषये राष्ट्रियगोष्ठी 'स्थितिः प्रवृत्तिः', एस् टि जॉन्स् कॉलेज्, आगरा, २००२, प्रस्तुतपत्रम्- क्षेत्रे केचन नवीनाः प्रवृत्तयः।

१३) अखिलभारतीयप्राच्यसम्मेलनस्य एकचत्वारिंशत्तममधिवेशनं, श्रीजगन्नाथसंस्कृतविश्वविद्यालयः, पुरी, २००२, शोधपत्रम्- भवभूतेः प्रशस्तिपत्रे रसरणवसुधाकरः।

१४) अखिलभारतीयकालिदाससमारोहः, कालिदास अकादमी, उज्जैन, २००२ पत्रम्- कालिदासस्य काव्येषु कर्मदर्शनम्।

१५) राष्ट्रियगोष्ठी, रूसी विभागः, एम. एस.विश्वविद्यालयः, रूसी विषये भाषा, साहित्य एवं समाजः ,भारतीयस्तथा रूसी अनुभवः, मार्च १८,२०-२००४१, प्रस्तुतशोधपत्रम्- रूसीविषये आधुनिकसंस्कृतकविनेतारः।

१६) अन्तर्राष्ट्रीयसम्मेलनम्, आधुनिकतायाः पुनर्विचारः, आङ्गलविभागः, २०१८. राजस्थान विश्वविद्यालयः, जयपुर

समकालीनसिद्धान्तमञ्चेन सह, १९९९। एम.एस.विश्वविद्यालय:, बड़ौदा, दिसम्बर१४-१७ प्रस्तुतपत्रम्- संस्कृतसाहित्ये आधुनिकतावाद।

१७) जैन-आचार्यस्तथा तीर्थंकरस्य जैने योगदानमिति विषये राष्ट्रीयसंगोष्ठीसाहित्यम्,, एसकेएसडी जैन अकादमी, एम. एस.बडौदा विश्वविद्यालय:, २२-२४मार्च, २०१८। २००४, प्रस्तुतपत्रम् : जैन-ज्ञानविज्ञानस्य रूपरेखा।

१८) एकविंशतमशताब्द्यां राष्ट्रियपाण्डुलिपिधनविषये राष्ट्रियगोष्ठी : परिवर्तनशीलधारणा,२६-२७ दिसम्बर २००५, पाण्डुलिपि संसाधन केन्द्र:, संस्कृतविभाग:, डॉ. एच.एस. गौर विश्वविद्यालय:, सागर, एम. पी. प्रस्तुत पत्रम्- क्वचित्पाण्डुलिपिशास्त्रे डॉक्टरेट्-अनुसन्धानस्य आदर्शाः।

१९) राष्ट्रीय संगोष्ठी ' The ManuSCript ReSource center' द्वारा आयोजिता एच.एस. गौर विश्वविद्यालय:, दिनांक १८-२० नवम्बर, २००६ आलोचनात्मकविषये प्रस्तुतशोधपत्रम्- केषाञ्चन संस्कृतनाटकानाम् संस्करणम्।

२०) एशियामहादेशस्थानां बौद्धधर्मविषये अन्तर्राष्ट्रीयसम्मेलनम् : २०१८, केन्द्रीय उच्च तिब्बती अध्ययन संस्थानम्, सारनाथ:, १०-१२ फरवरी, २००६, २००८। प्रस्तुतपत्रम् : अद्वैतवेदान्तकृतिषु प्रस्तुतबौद्ध दर्शनम् ।

२१) बौद्धधर्मे राष्ट्रीय संगोष्ठी : धर्म एवं दर्शनम्, बौद्धकेन्द्र-अध्ययनम्, भाषा एवं साहित्यविभाग:, बरकात उल्लाह विश्वविद्यालय:, भोपाल:, १९९९।२९-३०, मार्च, २००६,

शोधपत्रप्रस्तुतिः- उद्द्योतकारेण बौद्धस्य आलोचिताः सिद्धान्ताः।

२२) सौराष्ट्रविश्वविद्यालयद्वारा आयोजिता द्विदिवसीया राज्यस्तरीयकार्यशाला, १६-१७ फरवरी, २००७, संसाधनव्यक्तिरूपेण भागं गृहीतवान्।

२३) सरदारपटेलविश्वविद्यालयवल्लभद्वारा आयोजिता द्विदिवसीयराष्ट्रीयसंगोष्ठी, विद्यानगर, २४-२५ फरवरी, २००७, शोधपत्रप्रस्तुतिः- आधुनिकतायाः मूलसंस्कृते विज्ञानम्।

२४) २८-३० जुलाई, २००८ वर्षे चतुस्चत्वारिंशत्तम अखिल भारतीय प्राच्य सम्मेलनम्, कुरुक्षेत्रम्। प्रस्तुतपत्रम् - संस्कृत-अनुवादेषु भारतीयसाहित्यम्।

२५) प्राच्यसंस्थानम्, १९९९ द्वारा आयोजिता यूजीसी प्रायोजिता द्विदिवसीयराष्ट्रीयसंगोष्ठी। महाराजा सयाजिराव विश्वविद्यालयः बडोदरा, ३०-३१ दिसम्बर, २००८, २०१८. प्रस्तुतपत्रम् - रामकृष्ण सहस्रनामस्तोत्रम् : एकाध्ययनम्।

२६) एकदिवसीयराष्ट्रीयसंगोष्ठी आयोजकः- एन. पटेल, विनयन महाविद्यालयः, १९९९। आनन्द, २मार्च, २००८, अर्थशब्दस्य महत्वे प्रस्तुतपत्रमर्थशास्त्रम्।

२७) राष्ट्रीय संस्कृत संस्थानेन आयोजिता त्रिदिवसीया राष्ट्रियगोष्ठी, १९९९। जयपुर, १० -१२, जनवरी २००९, आधुनिकसंस्कृतविषये प्रस्तुतपत्रम्- साहित्यसमस्याः।

२८) बडोदरा संस्कृत महाविद्यालय एवं वेद व्यासङ्ग द्वारा आयोजिता १९९९ वर्षे एकदिवसीय राज्यस्तरीय संगोष्ठी।०३-अप्रील-२००९. अध्यक्षरूपेण उपस्थितः।

२९) लोकभास प्रचार समिति द्वारा आयोजिता चतुर्दिवसीयराष्ट्रीयसंगोष्ठी, २०१९। भुवनेश्वर, उड़ीसा दिनांक २२-२५ जून, २००९ मध्ये शोधपत्रप्रस्तुति: -जयदेव एवं तस्य गीतागोविन्दः।

३०) बौद्धधरोहरविषये अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, गुजरात, द महाराजा सयाजिराव बड़ौदा विश्वविद्यालय एवं गुजरात सर्वकार:, दिनांक १५-१७ दिनांके जनवरी, २०१०, पत्रम्- उद्दोतकरेण बौद्धधर्मस्य आलोचिता: सिद्धान्ताः।

३१) संस्कृत, पाली एवं प्राकृत विभाग द्वारा आयोजिता द्विदिवसीयराष्ट्रीयसंगोष्ठी, द महाराजा सयाजिराव विश्वविद्यालय:,दिनांक १२-१३ फरवरी, २०१० शोधपत्रप्रस्तुति :- - आधुनिकलघुकथानां किञ्चिदवलोकनम् ।

३२) द्विदिवसीया राष्ट्रीय संगोष्ठी एस्.के.एस् डि. जैन अकादमी, द महाराजा सयाजिराव बड़ौदा विश्वविद्यालय को दिनांक ११-१२ मार्च, २०११, प्रस्तुतपत्रम् - कर्म-अहिंसायाश्च जैनसिद्धान्त:।

३३) बडोदरा संस्कृत महाविद्यालय: एवं वेद व्यासङ्ग आयोजिता २०१९ एकदिवसीयराज्यस्तरीया संगोष्ठी।१७, जुलाई, २०११ अध्यक्षरूपेणोपस्थितः।

३४) द्वौ दिवसौ U.G.C. द्वारा प्रायोजिता राष्ट्रीय संगोष्ठी, संस्कृत, पाली एवं प्राकृतकला संकाय:, एम.एस. बडोदा

विश्वविद्यालय:, दिसम्बर१३-१४ २०११, प्रस्तुतशोधपत्रम्- स्वातन्त्र्योत्तरकालस्य संस्कृतनाटकानि , केषापञ्चिदवलोकनम्।

३५) राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानद्वारा आयोजिता त्रिदिवसीया राष्ट्रीयसंगोष्ठी, पत्रप्रस्तुति: उड़ीसायां संस्कृतसाहित्यस्य विकासः, जयपुरम्, १२-१४अक्टोबर २०११

३६) सोमनाथसंस्कृतेन आयोजितम् द्विदिवसीयम् अन्तर्राष्ट्रीयसंस्कृतसम्मेलनम् विश्वविद्यालय:, शास्त्रस्य संरक्षणमेवं विकास: इति विषये प्रस्तुतशोधपत्रम्- संस्कृत भाषा- चिन्ता सम्भावना, वेरावल, २४- २५ मार्च २०१२।

३७) त्रिदिवसीयसंस्कृतयुवमहोत्सवः, आयोजक:-बडौदा संस्कृतमहाविद्यालय: एवं एम. विश्वविद्यालय, संस्कृत भारती, १६-१८ मार्च २०१२बड़ौदा, गुजरात

३८) महाराजसयाजिरावमहाभागानां लोकहितकार्याणि इति विषये एकदिवसीया राष्ट्रीयसङ्गोष्ठी, बडोदासंस्कृतमहाविद्यालयएवं बीबीएछात्रसंघेन आयोजिता, एम्सा बडौदा विश्वविद्यालय २०१९ द्वारा आयोजिता। १८ अक्टोबर २०१२, प्रस्तुतशोधपत्रम् संस्कृतप्रचारप्रसारकर्याणि।

३९) संस्कृतसाहित्य-अकादमीद्वारा आयोजिता द्विदिवसीयराष्ट्रीयसंगोष्ठी, गांधीनगरी एवं श्री. एस.डी.पटेल कला एवं सी.एम.पटेल वाणिज्य महाविद्यालय: , ३०-३१ जनवरी, २०१३. प्रस्तुत पत्रम्- उत्तररामचरितस्य भवभूति:।

४०) स्वामिविवेकानन्दस्य निगमनविषये एकदिवसीया राष्ट्रियगोष्ठी। समकालीनशिक्षाव्यवस्थायाः पाठ्यक्रमे संयोगे विचारा:।शिक्षा-मनोविज्ञान-संकायेन, बडौदा संस्कृत

महाविद्यालय:, दर्शन विभाग:, एवं महाराजा सयाजिराव विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ:, २१ अक्टूबर, २०१३, आलेख प्रस्तुति:- व्यक्तित्वविकासे स्वामिविवेकानन्दस्य विचार:।

४१) भारतीयसाहित्ये लघुकथाविषयकद्विदिवसीया राष्ट्रीय संगोष्ठी, संस्कृत, पाली एवं प्राकृत विभाग:, द एम.एस. बडौदा विश्वविद्यालय:, २३-२४ जनवरी २०१३, शोधपत्रप्रस्तुति: – कथलाहारी के एच.वी. नागराजराव:।

४२) वैदिकखगोलशास्त्रविषये द्विदिवसीया राष्ट्रियगोष्ठी जलवायुपरिवर्तने तस्य प्रभावः इति विषये। बडौदा संस्कृत महाविद्यालय & गुजरात संस्कृत साहित्य-अकादमी, १८-१९ मार्च २०१३, द एम.एस. बडोदाविश्वविद्यालय:, पत्रप्रस्तुति:– वैदिकज्योतिषशास्त्रम्।

४३) अखिलभारतीयद्वारा आयोजिता द्विदिवसीया राष्ट्रीयसंगोष्ठी ,शैक्षिक-महासंघ:, दिल्ली, ३०-३१ दिसम्बर, २०१३.वडोदरा, गुजरात। प्रस्तुतपत्रम्– उच्चशिक्षायाः दृष्टिकोणाः।

४४) प्राच्यसंस्थानद्वारा आयोजिता एकदिवसीया राष्ट्रीय संगोष्ठी, एम.एस.बडौदा विश्वविद्यालय:, वडोदरा एवं गुजरात साहित्य अकादमी, १९९९। गांधीनगर, २२जनवरी, २०१४, प्रस्तुतशोधपत्रम्- आधुनिकसंस्कृतसाहित्ये अनुसन्धानाः।

४५) सोमनाथसंस्कृतविश्वविद्यालयेनन आयोजिता चतुर्दिवसीया अन्तर्राष्ट्रीयसंस्कृतगोष्ठी, वेरावाल, २५-२८ फरवरी, २०१४।

एवं प्रकारेण बहुषु स्थलेषु विविधेषु कार्यक्रमेषु कवेरस्य सहभागिता परिदृश्यते।

कवेरस्य ईश्वरीयचिन्तने वयं पश्यामश्चेदिदमत्रावलोक्यते यदीश्वरीयसर्वज्ञतां तदीयसर्वशक्तिमत्ताञ्च कविरयं स्वीकरोत्येव। महाकविनानेन प्रथमसर्गं साकल्येन मङ्गलाचरणेनैव समापयत्। किञ्चैतद्ग्रन्थेषु वेदान्तीयसिद्धान्तोऽपि निरीक्षितो विद्यते, तथा हि "असद् वा इदमग्र आसीत्। ततो वै सदजायत। तदात्मानं स्वयमकुरुत.." इत्यादिकं दार्शनिकविचारं मङ्गलाचरणेषु, विषयवस्तुप्रतिपादनसमये च तत्र तत्र परिदृश्यते। समग्रतो निगद्यमाने आचार्यमम्मटेन काव्यस्य यानि षट्तत्वानि निगदितानि, तानि सर्वाण्यपि एतदीयकाव्येषु परिलभ्यते। तथा हि-

नियतिकृतनियमरहितां ह्लादैकमयीमनन्यपरतन्त्राम्।
नवरसरुचिरां निर्मितिमादधती भारती कवेर्जयति।।[1]

इत्यस्मिन्श्लोके निगदितानि काव्यवैशिष्ट्यानि एतदीयशैलीमेवानुरुन्धन्ति।रसरुचिराह्लादप्रदायित्री कवेरस्य शैली अतिरमणीया श्रवणस्मरणार्हा च वर्तते। शब्दार्थयो: मञ्जुल: प्रयोगोऽपि एतदीयकाव्यगुण:।तस्माद्यदि कश्चित् भारतीयसाहित्यं ज्ञातुमिच्छति, वैदिकपरम्परामधिजिगमिषति, संस्कृतसाहित्यञ्च बुबुधिषति एवं महाजनसंसर्गं वा वाञ्छति, तेनावश्यमपि एतदीयकाव्यनाटकादीनि अध्येतव्यानि तथा महाभागीयसंसर्गश्च लब्धव्य:।

उपाध्यायोऽयमिदानीमपि स्वकीयज्ञानेन जगत्प्राकाशनपथे एव कार्यनिरतो दृश्यते। अस्याचार्यस्य निकटे सप्त छात्रा: शोधकार्यं कुर्वन्त: सन्ति। इदानीं कविवर: गुजरातप्रदेशस्य वदोदरानगरे

---

[1]काव्यप्रकाश:.१.१॥

अक्षरचोकमध्ये C-62 अक्षरधाम्नि निवसति। वडौदासंस्कृतमहाविद्यालयस्य पूर्वप्राचार्योऽयं वडौदाविश्वविद्यालयस्य संस्कृति:,पालि एवं प्रकृतिविभागे कार्यनिरता वर्तते। बह्वो छात्रा: एतदीयसान्निध्ये कार्यं कुर्वन्त: महन्ति श्रेयांसि समलभन्त, संल्लभमानाश्च वर्तन्ते। अत: नानाविधगुणविमण्डितोऽयं कविरद्भुतशक्त्या काव्यीयासाधारणकलया च अस्मदीयं भारतीयसाहित्यं, संस्कृतसाहित्यञ्च प्रकाशयति, काव्यीयवैभवं सम्पादयति, पाश्चात्याचार्येष्वस्मदीयविजयं परिरक्षतीति कविवरेण्योऽयमास्माकं बहुमूल्यं महारत्नम्।

।।इति सङ्क्षेपतः कविपरिचयः।।

।।महाराजस्य सयाजिरावस्य समये सामाजिकी परिस्थिति:।।

श्रीसयाजिगौरवमहाकाव्ये एकादशे सर्गे कविना महाराजस्य सयाजिरावस्य समये सामाजिकी परिस्थिति: कथमासीत्, राज्ञा च तत्र का परियोजना व्यधायि इत्येते विचारा: प्रतिपाद्यन्ते।

यदा सयाजिरावस्तृतीय: राज्यस्य कार्यभारं बभार, तदा राज्येषु दयनीया अवस्थितिरासीत्। जना: शिक्षिता नासन्, लोकानां हिताय कुत्रापि कार्यं नैव जायते स्म, सर्वे कर्मकारिण: स्वोदरम्भरा एव दरीदृश्यन्ते स्म। दिने दिने लोकजनेषु अन्धविश्वासस्य परिताप: वर्धमान एव आसीत्, विकासयोजना अपि न केचिदासन्। अशिक्षया: कारणात् वञ्चका इतस्तत: परिभ्रमन्त: जनान्वञ्चयन्ति स्म, एवमेव नगरेषु दक्षाश्चिकित्सका: नासन्, चिकित्सालया अपि सम्यञ्च: न परिदृश्यन्ते स्म, औषधञ्च सुलभं नासीत्, एवञ्च जना:

स्वास्थ्यज्ञानविवर्जिता: तस्मिन् दु:समये कठिनतया जीविकायापनं कुर्वन्ति स्म।

नागरिकेषु प्रगतिचेतना नासीत्, दुराचारै: सन्तापिता कर्मकरा: दुखनिमग्ना आसन्, कृषिवला: योग्यं फलं नैव संलभन्ते स्म, कठोरहृदयै: दुष्टै: श्रमिका: शोषिता, पीडिताश्चासन् , तेषां नियन्त्रक: न कश्चिदासीत्। लोकेषु बहुभि: प्रकारै: बहुधा भेदभाव: क्रियते, जनानां वचनस्य श्रोता कार्यकर्ता न कश्चिदासीत्। शिक्षादीक्षाविवर्जिता: बाला: संस्काररहिता: बाल्यात्प्रभृत्येव कुमार्गे प्रवर्तन्ते स्म, तेषां मार्गदर्शको न कश्चिदासीत्। क्वचिदेव पाठशाला: विद्यालयाश्चासन्, तत्रापि नारीणां कृते शिक्षणं न दीयते स्म, जना: सर्वेऽपि अन्धविश्वासविश्वस्ता: नारीणां शिक्षणं नावश्यकम्, तेषां गृहमेव कर्मशालेति विचारवन्त आसन्। एकस्मात् स्थलात्स्थलान्तरं प्रति गन्तुमपि गमनागमनार्थं मार्गादिव्यवस्था: सुनिर्मिता: नासन्। वाणिज्यकार्याणि च नैव भवन्ति स्म, नाममात्रेण सर्वाण्यपि कार्यालयादीनि आसन्। इतस्तत: जातीयभेदभावरूपेण वर्णवैषम्यरूपेण च आतपेन जनास्तप्ता आसन्, अस्पृश्यतारूपैव महाव्याधि: सर्वत्र प्रसृता आसीत्। सर्वेऽपि लक्ष्यमाणा: मार्गा: विकासस्य अवरोधका: आसन्, जातिभेदप्रथा सर्वत्र तथा संप्रवृत्तासीत्, यया मनुष्येष्वपि प्रायेण क्षुद्रजन्तुष्विव व्यवहार: क्रियते स्म। राजानश्च स्वैरिण: न प्रजादु:खमनुभवन्ति स्म, सर्वेऽपि राज्यपालका: स्वार्थपरायणा: आत्महितैकमानसा: जनान् सन्तापयन्ति, पीडयन्ति स्म च।

राज्यपक्षत: जनानां हिताय न किञ्चित्कार्यं क्रियते स्म, परन्तु नागरिकेभ्य: जानपदेभ्य: द्वित्रिगुणिततया कर: स्वीक्रियते स्म। राज्ये

उद्योगशाला: नासन्, व्यवस्थापद्धतिश्च अतिप्राचीनानियमिता चासीत्। क्रीडार्थं क्रीडनभूमि:, उद्योगार्थं तदपेक्षितवस्तुजातं, भ्रमणार्थं पर्यावरणशोधनार्थञ्चोद्यानं न किञ्चिदपि आसीत्। एवंरूपेण बह्वीभि: समस्यामालाभि: समस्यमानेऽस्मिन् राज्ये राजायं पुष्पवन्ताविव चकास। सयाजिराजस्पर्शस्तु दु:खप्रचण्डताया: शमयिता अभूत्। यथा सलिलसमृद्धा स्रोतोवहा तरङ्गिणी सर्वानप्यविगणय्य स्वलक्ष्यप्राप्तिविघाताय मध्ये आगतान्सर्वानपि विचूर्णयन् जवीयसी प्रवहति, तथा सयाजिराज-आगमनमात्रेण राज्येषु शिक्षादीक्षानां कृते, स्वास्थपरिशोधनाद्यर्थं, उद्योगाद्यर्थञ्च विविधा: कार्यशाला: समुद्घाटिता:। दृढबद्धो महावृक्षो भूमिरन्त: प्रविश्य अपि यथा नीरं शोधयते, तथा नृपस्यास्य विकासधीरपि नगरं सकलमपि शोधयति स्म। एवंरूपेण च विकासोन्मुखेयं नगरी कालक्रमेण विकासकेसरी सञ्जाता। तथा च वडोदरानगरीयं सयाजिरावरूपसहस्रकिरणस्य प्रतापकिरणै: यथाक्रमं विकसिता अभूत्।

एवंरूपेण कविनास्मिन्नेकादशे सर्गे सयाजिरावसमये विद्यमानाया: सामाजिकपरिस्थितेर्वर्णनं विधाय राज्ञा विहितञ्च कर्म प्रतिपादितम्।।

उपसंहार:-

अनेन प्रकारेण महाराजसयाजिरावसमये विद्यमानाया: सामाजिकताया: केचन बिन्दूनाश्रित्य “प्रो. रवीन्द्रकुमारपण्डामहोदयस्य व्यक्तित्वं कृतित्वं च श्रीसयाजिगौरवमहाकाव्ये समाजिकदृष्टि:” इति विषयमाधारीकृत्य शोधपत्रसारांश: करिष्यते।

एतदर्थं भवतां समेषामप्यनुमतिं सविनयमभ्यर्थये ॥

सन्दर्भग्रन्थसूचि:

१. श्रीसयाजिगौरवमहाकाव्यम्- प्रो. रवीन्द्रकुमार: पण्डा
गुजरातसंस्कृतसाहित्याकदमी
२. www.sa.wikisource.org

वैश्विक-संस्कृत-मञ्च

Global Sanskrit Forum

Plot no. 3-B, Khasra no. 611, Gali no. 1, B-Block,
Saraswati Avenue, Sabhapur Extn., Shahdara, Delhi-110094
Contact : 8789507760
Email : globalsanskritforum@gmail.com
Webiste : https://globalsanskritforum.org

अमृतब्रह्म प्रकाशन
63/59, मोरी, दारागंज,
प्रयागराज-211006 (उ.प्र.)
Mobile : +91-9450407739, 8840451764
Email : amritbrahmaprakashan@gmail.com

ISBN 819641480-3
9788196414801